॥ श्रीः ॥

॥ लक्ष्मीवेङ्कटेश्वराय नमः ॥

कर्मविपाकसंहिता.

(नक्षत्रचरणफलदर्शिका)

पण्डित-वस्तीरामविरचितभाषाटीकासमेता.

सेयं

श्रीकृष्णदासात्मजेन गंगाविष्णुना

स्वकीये "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" मुद्रणालये

मुद्रिता प्रकाशिता च ।

चतुर्थावृत्तिः ।

शके १८२६, संवत् १९६१.

कल्याण-मुंबई.

॥ ॐ नमो भवानीशंकराभ्याम् ॥



पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण-मुंबई.

सूचना.

विदित होवे कि, आजकल कलियुगमें मनुष्य अपने पूर्वकर्मव शसे अनेक दुःख भोगते हैं तहां पूर्वजन्मके शुभाशुभ लक्षण इस जन्मके सुखदुःखादिक देखनेसे प्रतीतही होते हैं तहां भृगुसंहिता आदि ग्रन्थोंसे जैसे पूर्वजन्मका हाल मिलता है इसी प्रकार साक्षात चमत्कार दिखानेवाली यह "कर्मविपाकसंहिता" भी श्रीमहादेवजीने सर्व जनोंके हितके लिये परम दयालुतासे पार्वतीजीको सुनाई है. इसमें श्रीमहादेव और पार्वतीका संवाद है और अश्विनी आदि सत्ताईस नक्षत्रोंके अलग २ चरणोंके क्रमसे १०८ अध्याय हैं तिन चरणोंमें जिस नक्षत्रोंके जिस चरणमें जन्म हो उसीमें उसका हाल मिलता है. सो यह ग्रन्थ पुरातन संस्कृतहीमें था तहांभी छंदोभंग आदि अनेक अशुद्धियां थीं अब जिला रोहतक कसबा बेरीनिवासी गौडवंशोद्भव द्विज शालिग्रामात्मज पण्डित बस्तीरामने इसके मूल श्लोक अच्छी तरह शुद्ध करके सरल हिंदी भाषामें टीका बनाई है इसके देखनेसे स्वल्प बुद्धिवाले जनभी पूरा पूरा भावार्थ समझेंगे और विद्वान् जनोंके देखने योग्य मूलभी शुद्ध किया है यदि कहीं दृष्टिचूकसे दोषभी हो तो उसे विद्वज्जन क्षमा करें.

यह ग्रन्थ "श्रीयुत गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास" इन्होंने अपने द्रव्यव्ययसे हमारे पाससे बनवाके अपने "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" यन्त्रालयमें छपाया है. इसका सब प्रकारका हक्क इनकोही है.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण-मुंबई.

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ

भाषाटीकासहिता

कर्मविपाकसंहिता।

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ॥
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ १ ॥

अथ प्रश्नविधिः ।

रविवारे च संक्रान्तौ शुभयोगे यथाविधि ॥
वैधृतौ च व्यतीपाते विप्राणां च गृहे तथा ॥ २ ॥
देवतायतने चैव नद्यां वै सङ्गमोत्तमे ॥
अथवा स्वगृहे चैव शुभे स्थाने विशेषतः ॥ ३ ॥
स्नानं समाचरेद्रोगी मृतपुत्रः सपुत्रकः ॥
कर्मणा पीडितो योऽसौ नारी वा पुरुषोऽथ वा ॥४॥

हेरम्बं च शिवं गौरीं नत्वा स्वल्पधियां मुदे ॥
टीका कर्मविपाकस्य नृगिरा क्रियते मया ॥ १ ॥

श्वेत वस्त्रको धारण करनेवाले, चंद्रमाकी समान रूपवाले, चार भुजावाले, प्रसन्न मुखवाले, विष्णुभगवान्‌को संपूर्ण विघ्नोंके दूर करनेके लिये चिंतवन करे ॥ १ ॥ अब प्रश्नविधि कहते हैं–रविवारको संक्रांतिके दिन, सुंदर योगमें विधिसे, व्यतीपात वैधृतियोगमें अथवा ब्राह्मणोंके घरमें ॥ २ ॥ देवताके स्थानमें या उत्तम नदियोंके समागममें अथवा अपने घरमें और किसी शुभ स्थानमें अत्यंत करके ॥ ३ ॥ पुत्रवाला या विना पुत्रवाला अपने कर्मोंसे पीडित

धात्रीफलानि लोध्रं च गोमयं तिलसर्षपान् ॥
मृत्तिकाः सप्त कर्पूरमुशीरं मुस्तसंयुतम् ॥ ५ ॥
औषधैः समभागैस्तु स्नानं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥
देवान्पितॄंश्च संतर्प्य दत्त्वा सूर्यार्घ्यमेव च ॥ ६ ॥
एवं सर्वविधिं कृत्वा संकल्पं कारयेत्ततः । अद्ये-
हेत्यादि प्राचीनसंचितकर्मविलोकनार्थं मनः-
कामनासिद्ध्यर्थं विष्णोः पूजनपूर्वकं कर्मविपा-
कपुस्तकपूजनमहं करिष्ये ॥ अङ्गन्यासपूर्वकं
षोडशोपचारपूजासंकल्पः वैश्वदेवं श्राद्धं च । अ-
त्रान्तरे देहशुद्ध्यर्थं पुरश्चरणाङ्गत्वेन गोमिथुन-
दानव्रतं कुम्भदानं च प्रजापतिसंतुष्टये षोडश-
ब्राह्मणान्भोजयेत् ॥ भोजनान्तरे प्रार्थनाचार्य-
स्य, ब्राह्मण त्वं महाभाग भूमिदेव द्विजोत्तम ॥
यथाविधं प्रतिज्ञाय प्राचीनं च शुभाशुभम् ॥ ७ ॥

स्त्री वा पुरुष रोगिजन स्नान करे ॥ ४ ॥ धात्रीफल अर्थात् आंवला, लोध, गोबर, तिल, सरसों, सात जगहकी मृत्तिका, कपूर, खसखस, नागरमोथा ॥ ५ ॥ समान भाग सब औषधियोंको लेके यत्नसे स्नान करे देवता पितरोंका तर्पण करके सूर्यको अर्घ्य देके ॥ ६ ॥ ऐसे सब विधि करके तिसके पीछे संकल्प करे अद्ये-हेत्यादि प्राचीन संचितकर्मविलोकनार्थ मनःकामनासिद्ध्यर्थ विष्णोः पूजनपूर्वकं कर्मविपाकपुस्तकपूजनमहं करिष्ये, अङ्गन्यास-पूर्वक षोडशोपचार पूजाका संकल्प करे बाले वैश्वदेव श्राद्ध करे

१ अश्वस्थान, गजस्थान, रथस्थान, राजस्थान, सर्पकी वमई, सागर, विष्णुमंदिर ये सात मृत्तिका हैं ।

कथं मे कथयस्वाशु कृपां कृत्वा ममोपरि ॥
एवं तु ब्राह्मणाचार्य्यं नमस्कृत्य प्रसादयेत् ॥ ८ ॥
दश पञ्च तथा विप्रानुपवेश्य प्रयत्नतः ॥
तेषामनुज्ञया सर्वं प्रायश्चित्तमुपक्रमेत् ॥ ९ ॥
वस्त्रालंकरणैराचार्य्यं पूजयित्वा प्रजापतिस्वरूपं
गुरुं प्रार्थयेत् । प्रजापते महाबाहो वेदवेदाङ्गपारग ॥
पुत्रकामसमृद्ध्यर्थं पूजां गृह्णीष्व ते नमः ॥ १० ॥
विष्णो त्वं पुण्डरीकाक्ष भुवनानां च पालकः ॥
लक्ष्म्या सह हृषीकेश पूजां गृह्णीष्व ते नमः ॥ ११ ॥

इसके पीछे देहकी शुद्धिके अर्थ पुरश्चरणके अंग गोमिथुनका दान व्रत करना, कुंभोंका दान, प्रजापतिकी प्रसन्नताके अर्थ सोलह ब्राह्मणोंको भोजन करावे, भोजनके पीछे आचार्यकी प्रार्थना करे। हे ब्राह्मण ! तुम महाभागवाले हो । हे पृथ्वीके देव ! हे ब्राह्मणोंमें उत्तम ! ! मेरे शुभ अशुभ पूर्वकर्मोंको यथार्थ देखके ॥ ७ ॥ मेरे ऊपर कृपा करके शीघ्र कहो कि, पूर्व कर्म कैसे हैं इस प्रकार ब्राह्मण आचार्यको प्रणाम करके प्रसन्न करे ॥ ८ ॥ और दश तथा पांच ब्राह्मणोंको बैठाके यत्नसे तिनकी आज्ञा करके प्रायश्चित्त करे ॥ ९ ॥ वस्त्र आभूषणोंकरके आचार्यका पूजन कर प्रजापतिरूप गुरुकी प्रार्थना करे । हे प्रजाके पति ! हे महाभुजावाले ! ! हे वेदवेदांगको जाननेवाले ! ! ! पुत्रकी कामना सिद्धि होनेके लिये मेरे किये पूजनको अंगीकार करो आपको मेरा प्रणाम है ॥१०॥ हे विष्णो ! हे पुंडरीकाक्ष ! ! तुम भुवनोंके पालन करनेवाले हो । हे हृषीकेश ! लक्ष्मीकरके सहित मेरी पूजाको ग्रहण करो

रुद्र त्वं दैन्यनाशाय सदा भस्माङ्गधारकः ॥
नागहारोपवीती च पूजां गृहीष्व ते नमः ॥ १२ ॥
स्वर्गे सुराश्च गन्धर्वाः पाताले पन्नगादयः ॥
मृत्युलोके मनुष्याश्च सर्वे ध्यायन्ति भास्करम् ॥ १३ ॥
महायज्ञादिकं चैव अग्निहोत्रादि कर्म च ॥
तीर्थस्नानं तथा ध्यानं वर्तते भास्करोदयात् ॥ १४ ॥
ब्रह्मा विष्णुः शिवः शक्तिर्देवदेवो मुनीश्वराः ॥
ध्यायन्ति भास्करं देवं साक्षीभूतं जगत्त्रये ॥ १५ ॥
त्वं ब्रह्मा त्वं च वै विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वं प्रजापतिः ॥
त्वमग्निस्त्वं वषट्कारस्त्वामाहुः सर्वसाक्षिणम् ॥ १६ ॥
योगिनां प्रथमो ध्येयो यतीनां ब्रह्मचारिणाम् ॥
आधिव्याध्योश्च कर्त्ता त्वं सर्वपापक्षयं कुरु ॥ १७ ॥

आपको मेरा प्रणाम है ॥११॥ हे रुद्र ! आप दीनता दूर करनेके अर्थ सदा भस्मयुक्त अंगको धारण करते हैं, नागके हार यज्ञोपवीत धारण करते हो सो मेरी पूजाको ग्रहण करो आपको मेरा प्रणाम है ॥ १२ ॥ स्वर्गमें देवता और गंधर्व, पातालमें नागादिक और मृत्युलोकमें मनुष्य ये सब सूर्यका ध्यान करते हैं ॥ १३ ॥ महायज्ञ आदि कर्म अग्निहोत्र आदि कर्म तीर्थका स्नान और देवता आदिकोंका ध्यान ये सब सूर्यके उदय होनेसे प्रवृत्त होते हैं॥१४॥ उत्तम, मध्यम, अधम तीन प्रकारके जगत्के साक्षीरूप सूर्यका ब्रह्मा, विष्णु, शिव, देवी, देवताओंका देव इंद्र, मुनियोंमें उत्तम मुनि ये सब ध्यान करते हैं ॥ १५ ॥ तुम ब्रह्मा रूप हो, तुमही विष्णु हो, तुमही शिवजी हो, तुम प्रजापति हो, तुमही अग्नि हो, तुम वषट्कार हो, तुमकोही संपूर्णका साक्षी कहते हैं ॥ १६ ॥ योगी.

दीनानां कृपणानां च सर्वेषां व्याधिनाशनम् ॥
एवं च भास्करं ध्यात्वा नमस्कृत्य प्रसादयेत् ॥१८॥

अथ पृच्छकनियमः।

पापी चैव दुराचारी परनिन्दापरो जनः ॥
ब्रह्महा हेमहारी च सुरापी गुरुतल्पगः ॥ १९ ॥
स्त्रीहन्ता बालघाती च अगम्यागमनं तथा ॥
एवमादिकपापानि मया वै पूर्वजन्मनि ॥ २० ॥
कृतानि विविधान्येव सर्वाणि मार्ष्टुमर्हसि ॥
शरणं तव संप्राप्तस्त्वं मामुद्धर्त्तुमर्हसि ॥ २१ ॥
ममोपरि कृपां कृत्वा कर्म मे कथय प्रभो ॥
लग्नं तात्कालिकं कृत्वा जन्मपत्रं निरीक्ष्य च ॥२२॥
लग्नं ग्रहविचारेण ज्ञातव्यं कर्म मामकम् ॥
ग्रहलग्नविचारेण जानन्ति कर्म पण्डिताः ॥ २३ ॥

यति, ब्रह्मचारी ये आपका ध्यान करते हैं और आधि (मनकी पीडा) को तुमही करनेवाले हो सो मेरे सब पाप दूर करो ॥१७॥ दीन और कृपण सबकी व्याधिको नाश करनेवाले हो ऐसे सूर्यका ध्यान करके प्रणाम कर प्रसन्न करे ॥ १८ ॥ अब पूंछनेवालेके नियम कहते हैं-पापी और निंदित आचरण करनेवाले और पराई निंदा करनेवाला, ब्रह्महत्यारा, सुवर्णको हरनेवाला, सुरा पीनेवाला, गुरुओंकी स्त्रीसे भोग करनेवाला ॥ १९ ॥ स्त्रीकी हत्या, बालकी हत्या, अगम्य स्त्रीसे गमन करना ऐसे अनेक पाप मैंने पूर्वजन्ममें करे हैं ॥२०॥ और अनेक प्रकारके जो करे हैं उन सबोंको आप दूर करो मैं आपको शरण हूं आप मेरा उद्धार करो ॥ २१ ॥ हे प्रभो ! मेरे ऊपर कृपा करके मेरे कर्म कहो तात्कालका लग्न कर-के जन्मपत्रको देखके ॥ २२ ॥ लग्न और ग्रहका विचार करके

॥ सूत उवाच ॥

कैलासशिखरे रम्ये सुखासीनं महेश्वरम् ॥
प्रणम्य पार्वती भक्त्या पप्रच्छ च सदाशिवम् ॥२४॥

॥ पार्वत्युवाच ॥

देवदेव जगन्नाथ भक्तानुग्रहकारक ॥
लोकोपकारकं प्रश्नं वद मे परमेश्वर ॥ २५ ॥
कलौ च मानवास्तुच्छाः पापमोहसमन्विताः ॥
महामोहग्रहग्रस्ताः पुत्रकन्याविवर्जिताः ॥ २६ ॥
कुत्सिता रूपविभ्रष्टा मृतवत्सा नपुंसकाः ॥
नारीणां पुरुषाणां च पूर्वकर्म च यत्प्रभो ॥ २७ ॥
तत्सर्वं वद मे स्वामिन् सर्वज्ञोऽसि मतो मम ॥
तच्च श्रुत्वा वचो देव्याः प्रीतिमान् स महेश्वरः ॥२८॥

मेरा कर्म देखना योग्य है क्योंकि ग्रह लग्नके विचारसे पंडित कर्मको जानतेही हैं ॥२३॥ सूतजी कहते हैं–कैलासके सुंदर शिखरमें सुखसे बैठे हुए शिवजीको पार्वती भक्तिसे प्रणाम करके सदा कल्याणरूप शिवको यह पूंछती भई ॥२४॥ पार्वतीजी पूंछती है–हे देवदेव ! हे जगतके नाथ!! हे भक्तपर कृपा करनेवाले ! ! ! लोकका उपकार करनेवाले मेरे प्रश्नको कहो॥२५॥ कलियुगके मनुष्य तुच्छ हैं पाप और मोहसे युक्त हैं महारोगग्रहोंकरके ग्रसे हुए और पुत्र कन्याकरके वर्जित ॥२६॥ अधम बिगडे हुए रूपवाले, नष्ट संतानवाले नपुंसक हैं । हे प्रभो ! ऐसे स्त्रीपुरुषोंके जो कर्म हैं ॥२७॥ हे स्वामिन ! सो संपूर्ण मेरे आगे कहो आप तो सर्वज्ञ हो यह मेरा मत है । प्रसन्न हुए वे शिवजी यह पार्वतीका वचन सुनके ॥२८॥

प्रहस्य जगतामीशो वल्लभां प्रीतिसंयुताम् ॥
उवाच प्रश्नं तद्गूढं त्रैलोक्ये चापि दुर्लभम् ॥ २९ ॥
॥ शिव उवाच ॥
शृणु त्वं गिरिजे देवि नृणां कर्म विशेषतः ॥
कथयामि न संदेहो यत्ते मनसि वर्त्तते ॥ ३० ॥
मर्त्याः सर्वे जगज्जाताः कर्म कुर्वन्ति सर्वदा ॥
स्वकर्माणि ततो देवि भुज्यंते देवमानुषैः ॥ ३१ ॥
मानवैस्तु विशेषेण सुखदुःखादिकं च यत् ॥
कर्मत्रयं च सर्वेषां तन्मध्ये संचितं च यत् ॥ ३२ ॥
वक्तव्यं नात्र संदेहो यत्कृत्वा फलमाप्नुयात् ॥
प्रारब्धं विस्तरं कर्म वर्त्तमानं च दृश्यते ॥ ३३ ॥
अश्विन्यादिकनक्षत्रे सर्वेषां जन्म जायते ॥
तदादिपादभेदेन ज्ञातव्यं च शुभाशुभम् ॥ ३४ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पूजनविधिर्नाम प्रथमोऽध्यायः १

और जगत्के स्वामी शिवजी हँसके प्रसन्न हुई पार्वतीको त्रिलोकीमें दुर्लभ उस गुप्त प्रश्नको कहते भये॥२९॥ शिवजी कहते हैं–हे पार्वतीदेवि! मनुष्योंके कर्म विशेषकरके तुम सुनो जो तेरे मनमें है सो संपूर्ण कहूं हूं इसमें संदेह मत कर ॥३०॥ हे देवि ! जगत्में उत्पन्न हुए सब जन सदा कर्म करते हैं फिर देवते और मनुष्योंसे अपने कर्म भोगे जाते हैं अर्थात् सब अपनेही कर्मोंको भोगते हैं ॥३१॥ सबके तीन प्रकारके कर्म हैं प्रारब्ध, संचित, क्रियमाण तिनमें जो संचित कर्म है ॥ ३२ ॥ वह मुझे कहना योग्य है इसमें संदेह नहीं है क्योंकि जिसको करके फलको प्राप्त होता है और प्रारब्धकर्म विस्तारवाला है और वर्त्तमान दीखताही है ॥ ३३ ॥ अश्विनी

अथ द्वितीयोऽध्यायः ।



अश्विन्याः प्रथमे पादे यदा जन्म प्रजायते ॥
तदा ब्राह्मणवर्णोऽयं मध्यदेशसमुद्भवः ॥ १ ॥
द्वितीयचरणे देवि पुरा क्षत्री न चान्यथा ॥
अयोध्यापुरतः पूर्वे पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ २ ॥
तृतीयचरणे देवी वैश्यवर्णसमुद्भवः ॥
रोगी कुत्सितवर्णोऽयं मृतवत्सो नपुंसकः ॥ ३ ॥
चतुर्थचरणे देवि यदा भवति मानवः ॥
तदा शूद्रं विजानीयाद्रोगवान् मृतवत्सकः ॥
श्यामलः पुष्टदेहश्च कुष्ठरोगेण पीडितः ॥ ४ ॥

आदिक नक्षत्रोंमें संपूर्णोंका जन्म होता है तिनके प्रथम द्वितीय आदि चरणोंके भेदसे शुभ अशुभ फल जानना योग्य है ॥ ३४ ॥

इति कर्मविपाकभाषाटीकायां पूजनविधिर्नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

जो अश्विनीके प्रथम चरणमें जन्म होय तो यह कहना कि यह पूर्वजन्ममें मध्यदेशमें ब्राह्मणके घर जन्मा था ॥ १ ॥ हे देवि ! दूसरे चरणमें जन्म होय तो वह पहिले जन्ममें क्षत्री वर्ण था इसमें झूठ नहीं है और अयोध्या पुरीसे पूर्वमें वसनेवाला पुत्र कन्याकरके वर्जित था अर्थात् कोई संतान नहीं थी ॥ २ ॥ हे देवि ! तीसरे चरणमें हो तो वैश्यवर्णमें उत्पत्ति जाने यह रोगी और बुरे वर्णवाला तथा नपुंसक है इसके संतान नहीं जीती है ॥ ३ ॥ हे देवि ! जो मनुष्य चौथे चरणमें भया हो तो उसे शूद्र जाने रोगी तथा इसकी संतान मरती है । श्यामवर्ण पुष्ट शरीरवाला है कुष्ठरोगसे पीडित है ॥ ४ ॥ इति श्रीअश्विनीनक्षत्रस्य सामान्यफलम् ॥

॥ शिव उवाच ॥

अथ कर्म प्रवक्ष्यामि यत्कृतं ब्राह्मणादिभिः ॥
एको ब्राह्मणवेदज्ञो गुणरूपसमन्वितः ॥ १ ॥
तस्य पत्नी विशालाक्षी पुंश्चली क्षत्रवंशजा ॥
तस्यां पुत्रो भवेद्देवि नाम्ना नरहरिस्तदा ॥ २ ॥
ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टो व्याधिभिः पीडितः सदा ॥
तस्य मित्रं द्विजोऽप्येको धनपुत्रैश्च संयुतः ॥ ३ ॥
नामतो लग्नशर्मेति निकटे तस्य चागतः ॥
आदरं बहुधा कृत्वा स्वर्णं दृष्ट्वा प्रहर्षितः ॥ ४ ॥
स्वर्णलोभेन तं विप्रं हतवान् पुत्रसंयुतम् ॥
स्वर्णं सर्वं हृतं देवि व्ययं कृत्वा दिने दिने ॥ ५ ॥
षडंशैर्गुप्तदानं च गङ्गायमुनसंगमे ॥
चकार तद्धनैर्भक्त्या विष्णुप्रीतिकरं तदा ॥ ६ ॥

शिवजी कहते हैं-जो ब्राह्मण आदि वर्णोंने किया है तिस कर्मको कहते हैं वेदको जाननेवाला गुण और रूपसे युक्त एक ब्राह्मण था ॥ १ ॥ तिसकी स्त्री विशालाक्षी नामवाली और जारिणी और क्षत्रीवंशमें उत्पन्न थी । हे देवि ! तिसके नरहरि नामक पुत्र भया ॥ २ ॥ वह ब्राह्मणके कर्मसे भ्रष्ट भया व्याधियोंसे सदा पीडित भया ।तिसका मित्र एक ब्राह्मण धन और पुत्रोंसे युक्त था ॥ ३ ॥ लग्नशर्मा नामवाला वह ब्राह्मण तिसके समीप आया तब बहुत आदर किया और सुवर्णको देखके प्रसन्न भया ॥ ४ ॥ फिर सोनेके लोभसे पुत्रसमेत वह ब्राह्मण मार दिया । हे देवि ! हरा हुआ सोनाभी दिन २ प्रति खर्च कर दिया ॥ ५ ॥ और गङ्गायमुनाके संगममें तिस मोहसे छठे हिस्सेके धनका गुप्तदानभी

एवं बहुगते काले पत्नी तस्य मृता पुरा ॥
पश्चात्सोऽपि ग्रहग्रस्तो मृत्युं प्राप्नोति दुर्जनः ॥ ७ ॥
निक्षिप्तो नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ॥
युगसप्ततिपर्यन्तं भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ८ ॥
नरकान्निःसृतो देवि शृगालो गहने वने ॥
तत्स्थो निजफलं भुक्त्वा कृमियोनावभूत्पुनः ॥ ९॥
पुनर्मानुषयोनिः स तूर्णं च प्रथिते कुले ॥
मध्यदेशे शुभे ग्रामे मृतवत्सो ह्यपुत्रकः ॥ १० ॥
रुग्णो बहुधनाढ्यश्च गौडो मांसप्रियः सदा ॥
तस्य भार्या महालुब्धा पुरा लोकमती च या ॥ ११ ॥
पुनर्विवाहिता देवि पूर्वजन्मप्रसंगतः ॥
मासि पुष्पं भवेत्तस्याः संतानं नैव वा भवेत् ॥१२॥

विष्णुकी प्रीतिके वास्ते भक्तिसे किया ॥ ६ ॥ ऐसे बहुतसा काल बीत चुका तब तिसकी स्त्री मर गई फिर वहभी दुर्जन ग्रहपीडासे ग्रस्त होके मर गया ॥ ७ ॥ तब धर्मराजकी आज्ञासे यमदूतोंने नरकमें पटक दिया सत्तर हजार युगोंतक नरककी पीडाको भोगके ॥ ८ ॥ नरकसे निकल हे देवि ! गह्वरवनमें गीदड भया तहांअपने कर्म भोगके फिर कृमियोनिको प्राप्त भया ॥ ९ ॥ फिर वह शीघ्रही विख्यात कुलमें मध्यदेशमें सुन्दर ग्राममें उत्पन्न भया है मृतवत्स है इसकी सन्तान नहीं जीवती है ॥ १० ॥ रोगी बहुत धनाढ्य गौडजाति सदा मांसमें प्रीति रखनेवाला है तिसकी स्त्री महालोभिनी है जो कि पहले लोकमति नामवाली थी ॥ ११ ॥ हे देवि ! पूर्वजन्मके प्रसंगसे वही फिर विवाही गई है सो तिसके महीने २ प्रति पुष्प रजोदर्शन होता है और संतान नहीं होता

सज्वरा दीर्घनेत्रा सा कुक्षिरोगेण पीडिता ॥
इति श्रुत्वा वचस्तस्य महादेवप्रिया शिवा ॥ १३ ॥
प्रणम्य पार्वती देवी शङ्करं परमेश्वरम् ॥
उवाच वचनं देवं चराचरगुरुं परम् ॥ १४ ॥
प्राणिनां केवलं कर्म तव मायाविचेष्टितम् ॥
शुभमेवाऽशुभं चैव कथं जानामि पूर्वजम् ॥ १५ ॥
तत्सर्वं कृपया देव वद मे परमेश्वर ॥

॥ ईश्वर उवाच ॥

त्रिविधं प्राणिनां कर्म नृणां चैव स्वभावजम् ॥
अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् ॥१६॥
अनिष्टं नागलोके च नरके विविधे तथा ॥
इष्टं स्वर्गे फलं देवि मिश्रं मर्त्ये प्रजायते ॥ १७ ॥

है ॥ १२ ॥ ज्वरवाली दीर्घ नेत्रोंवाली कुक्षिके रोगसे पीडित है ऐसे इस वचनको सुन महादेवकी प्रिया ॥ १३ ॥ पार्वती देवी तिस परमेश्वर शंकरको प्रणाम करके चराचरके परम गुरुदेवसे वचन बोलती भई ॥ १४ ॥ प्राणियोंके कर्म केवल तुम्हारी मायाकरके विचेष्टित हैं सो पहिले होनेवाले शुभ अशुभ कर्मोंको कैसे जानूं ॥ १५ ॥ हे देव ! हे परमेश्वर ! ! संपूर्ण कृपाकरके मेरे आगे कहो । शिवजी कहते हैं-प्राणियोंके स्वभावसे उत्पन्न हुए तीन प्रकारके कर्म हैं तैसेही मनुष्योंके कर्म हैं शुभ अशुभ मध्यम और तीन प्रकारके कर्मोंका फल है ॥ १६ ॥ तहां अशुभ कर्म पाताल लोकमें और अनेक प्रकारकेही नरकोंमें भोगा जाता है, शुभकर्म स्वर्गमें भोगा जाता है और हे देवि ! मध्यमकर्म मनुष्यलोकमें जन्म लेके भोगा

रोगतश्चेष्टया देवि ज्ञेयं सर्वं शुभाशुभम् ॥
राजयोगी भवेद्यस्तु ब्रह्महा पूर्वजन्मनि ॥ १८ ॥
पुत्रकन्याविहीनो यो गोत्रहा गुरुहा भवेत् ॥
पाण्डुरोगी नरो यस्तु देवपूजनवर्जितः ॥ १९ ॥
कन्यापत्यं भवेद्यस्य वेदनिन्दा कृता तदा ॥
कन्याघाती पक्षिघाती तस्य भार्या न जीवति॥२०॥
भ्रातृहा यः पुरा देवि स ज्वरेण प्रपीडितः ॥
घण्टावादित्रहारी च कररोगी नरो भवेत् ॥ २१ ॥
भगिनीनाशनं देवि कृतं यैः पूर्वजन्मनि ॥
तेन पापेन भो देवि ते ज्वरेण प्रपीडिताः ॥ २२ ॥
मित्रद्रोही बालघाती पशुघाती तथैव च ॥
तत्फलेन महादेवि मृतवत्सश्च रोगवान् ॥ २३ ॥

जाता है ॥ १७ ॥ हे देवि ! रोगोंसे चेष्टासे संपूर्ण शुभ अशुभ जानना चाहिये जो राजरोगी हो वह पूर्व जन्ममें ब्राह्मणको मारनेवाला था ॥ १८ ॥ और जो पुत्रकन्याकरके विहीन हो अर्थात् पुत्र कन्या नहीं होवे तो वह पहिले जन्ममें अपने गोत्रीका या गुरुका मारनेवाला था, जो पांडुरोगवाला मनुष्य हो वह किसी देवताका पूजन नहीं करता था ॥ १९ ॥ जिसके लडकीही उत्पन्न होती हों उसने पूर्वजन्ममें वेदकी निंदा की है । कन्या, पक्षी इनको मारनेवालेकी स्त्री नहीं जीवती है ॥ २० ॥ हे देवि ! जो पूर्वजन्ममें भाईको मारता है वह ज्वरसे पीडित होता है । घंटा, बाजा इनको हरनेवालेके हाथमें रोग होता है ॥ २१ ॥ हे देवि ! जिसने पूर्वजन्ममें अपनी बहिनीका वध किया है तिस पापकरके वे ज्वरसे पीडित होते हैं ॥ २२ ॥ हे देवि ! मित्रद्रोही, बालघाती, पशुघाती

कायाघाती गर्भपाती धनपुस्तकहारकः ॥
जन्मान्धो जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥२४॥
वस्त्रहा भूमिहारी च परनिन्दापरस्तथा ॥
तेन पापेन भो देवि दरिद्रो जायते नरः ॥ २५ ॥
गोत्रदारापहारी च दीर्घरोगी भवेन्नरः ॥
महिर्षापुत्रघाती च कम्परोगी प्रजायते ॥ २६ ॥
निर्बीजं वृषभं यो वै प्रकरोति नराधमः ॥
षण्ढः संजायते देवि मूत्रकृच्छ्री भवेत्ततः ॥ २७ ॥
मातृहा पितृहा देवि महाकुष्ठी नरो भवेत् ॥
अगम्यागमनं यस्तु वीरयोषागमं तथा ॥ २८ ॥
करोति योऽधमस्तस्य शरीरं ज्वरपीडितम् ॥
गोवधी जायते देवि श्वेतकुष्ठी नरः सदा ॥ २९ ॥

जन इस पापसे 'मृतवत्स' सन्तान मरनेवाला और रोगी होता है ॥ २३ ॥ शरीरका नाश करनेवाला, गर्भ गिरानेवाला, धन पुस्तकको चोरनेवाला जन जन्मसे अंधा होता है इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ २४ ॥ हे देवि ! वस्त्र और भूमिको हरनेवाला, पराई निंदा करनेवाला जन तिस पापसे दरिद्री होता है ॥ २५ ॥ अपने गोत्रकी स्त्रीको हरनेवाला दीर्घ रोगी कुष्ठ आदि रोगवाला होता है, काटडेको मारनेवाला कंपरोगी होता है॥२६॥ जो पापी मनुष्य बैलको बधिया करता है। हे देवि! वह नपुंसक होता है फिर मूत्र-कृच्छ्ररोगवाला होता है ॥२७॥ हे देवि! माता पिताको मारनेवाला जन महाकुष्ठी होता है, अगम्या स्त्रीसे तथा शूरवीरकी स्त्रीसे गमन करनेवाले ॥ २८ ॥ अधम नरका शरीर ज्वरसे पीडित होता है। हे देवि! गौका वध करनेवाला जन सदा श्वेतकुष्ठी होता है ॥२९॥

कन्यकागमनं यस्तु करोति हठतः पुरा ॥
तेन पापेन भो देवि रोगवान् धनवर्जितः ॥ ३० ॥
पुष्पगन्धापहारी च मुखे तस्य विगन्धता ॥
घृतहारी भवेत्कुष्ठी तस्मात् भ्रष्टः कृमिर्भवेत् ॥३१॥
वृक्षगन्धापहारी च काकः संजायते नरः ॥
वापीकूपापहारी च दद्रुरोगी भवेन्नरः ॥ ३२ ॥
देवयात्रापहारी च कण्ठरोगी भवेन्नरः ॥
सारंगगीतघाती च वने दावाग्निदाहकः ॥ ३३ ॥
अक्षिरोगी नासिकायां व्रणी कृमिसमाकुलः ॥
तैलहारी भवेत्तैली गुडहारी ज्वरी सदा ॥ ३४ ॥
स्वर्णरौप्यापहारी च नरो भवति पुत्रहा ॥
दासदासीहरो यस्तु नरो भवति कर्णरुक् ॥ ३५ ॥

जो पूर्वजन्ममें हठसे कन्याके संग गमन करता है हे देवि ! वह तिस पापसे रोगवान् और निर्धन कङ्गाल होता है ॥३०॥ पुष्पोंकी सुगंधिको हरनेवालेके मुखमें दुर्गंधि होती है, घृतको हरनेवाला कुष्ठी होता है फिर उस योनिसे छूटके कृमि होता है ॥ ३१ ॥ वृक्षके गन्धको हरनेवाला मनुष्य काग होता है बावडी कूएको नष्ट करनेवाला दद्रुरोगी होता है ॥३२॥ देवयात्राको भङ्ग करनेवाले जनके कण्ठमें रोग होता है मयूर आदि पक्षियोंके कूजनेको बन्द करनेवाला तथा वनमें दावानल लगानेवाला ॥३३॥ आंखिके रोगवाला होता है नासिकामें व्रण और कृमि गिर जाते हैं तेलको हरनेवाला तेली होता है गुडको हरनेवाला ज्वरसे पीडित होता है ॥३४॥ सोनेचांदीको हरनेवाला मनुष्य अपने पुत्रका नाश करनेवाला होता है दास दासीको मारनेवाला मनुष्य कानके रोगवाला होता है ॥३५॥

लोहमौल्यापहारी च पाण्डुरोगी भवेन्नरः ॥
दधिदुग्धहरो यस्तु कुक्षिरोगी भवेन्नरः ॥ ३६ ॥
मार्गग्राही वस्त्रहारी बाहुरोगी प्रजायते ॥
मयूरकुक्कुटानां च कच्छपानां च बाधकः ॥ ३७ ॥
वातरोगी च खञ्जश्च जन्म जन्म नपुंसकः ॥
मद्यपी मांसभोगी च मत्स्यभोजी तथैव च ॥ ३८ ॥
तेन पापप्रभावेण चर्मकारो हि जायते ॥
अन्नहा जलहा चैव दन्तरोगी भवेन्नरः ॥ ३९ ॥
ब्राह्मणस्य गृहं यस्तु धनधान्यसमन्वितम् ॥
हरणं तस्य वै कुर्यान्मृगीरोगी भवेन्नरः ॥ ४० ॥
एवं बहुविधो रोगो नराणां चैव जायते ॥
पूर्वकर्मफलं चैव भुज्यते खलु मानवैः ॥ ४१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

लोहके मोलको नहीं देनेवाला पाण्डुरोगी होता है, दधि दुग्धका हरनेवाला कुक्षिरोगी होता है ॥३६॥ मार्गको रोकनेवाला, वस्त्रोंको हरनेवाला उनकी भुजाओंमें रोग होता है मोर मुरगे कछुओंको पीडा करनेवाला पुरुष ॥ ३७ ॥ वातरोगवाला लङ्गडा और जन्म-जन्ममें नपुंसक होता है मदिरा पीनेवाला मांस खानेवाला मच्छ भक्षण करनेवाला ॥ ३८ ॥ तिस पापके प्रभावकरके चमार होता है अन्नके हरनेवाले तथा जलके हरनेवालेके दांतोंमें रोग होता है॥३९॥ जो ब्राह्मणके धन और अन्नकरके युक्त घरको हर लेवे वह मृगीरोगवाला होता है ॥४०॥ ऐसे बहुत प्रकारका रोग मनुष्योंके होता है ऐसे निश्चय मनुष्योंसे अपनाही पूर्वकर्म भोगा जाता है ॥ ४१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अथ तृतीयोऽध्यायः ।

॥ ईश्वर उवाच ॥

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि यत्प्रश्नं भुवि जायते ॥
प्रायश्चित्तं नराणां च मेषराशिक्रमादनु ॥ १ ॥
ब्राह्मणं स्वर्णलोभेन हत्वा चैव सपुत्रकम् ॥
स्वर्णं भुक्तं सदारेण तत्पापात् पुत्रवर्जितः ॥ २ ॥
प्रायश्चित्तं जपं देवि गायत्री त्र्यम्बकं ततः ॥
पञ्चलक्षप्रमाणेन ततः पापात् प्रमुच्यते ॥ ३ ॥
ब्राह्मणस्य सपुत्रस्य प्रतिमां कारयेद्बुधः ॥
स्वर्णं दशपलस्यैव तां संपूज्य प्रयत्नतः ॥ ४ ॥
कुण्डं कृत्वा ततो देवि चतुरश्रं प्रसन्नधीः ॥
प्रतिमां पूजयेच्चैव मन्त्रेणानेन भोः प्रिये॥ ५ ॥
ॐ नमो गणाधिपतये गन्धपुष्पादिवालिं समर्प-

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! सुन जो प्रश्न पृथ्वीतलमें होता है सो मैं मेषराशिके क्रमसे मनुष्योंके प्रायश्चित्तको कहता हूं ॥ १ ॥ पुत्रसहित ब्राह्मणको सुवर्णके लोभसे मारके तिसका सुवर्ण स्त्रीसहित हुए इसने भोगा है तिस पापसे इसके पुत्र नहीं है ॥ २ ॥ हे देवि ! प्रायश्चित्त कराना गायत्री तथा त्र्यंबकमन्त्रका पांच लक्ष जप कराना तब उस पापसे छूटता है ॥ ३ ॥ पुत्रसहित ब्राह्मणकी मूर्ति (दश पल) चालीस तोले सुवर्णकी बनवाकर तिसको यत्नसे पूजे ॥ ४ ॥ हे देवि ! तिससे अनन्तर चौकूंटा कुंड बनाके प्रसन्नचित्त होके इस मंत्रसे प्रतिमाका पूजन करे ॥ ५ ॥ ॐ नमो

यामि नमः॥ ॐ इंद्राय नमः॥ ॐ अग्नये नमः॥
ॐ यमाय नमः॥ ॐ निर्ऋतये नमः॥ ॐ वरुणाय
नमः ॥ ॐ कुबेराय नमः ॥ ॐ कालाय नमः ॥
ॐ शिवाय नमः ॥ ॐ ब्रह्मणे नमः ॥ ॐ अन-
न्ताय नमः॥ ॐ गरुडवाहनाय नमः॥ ॐ विष्णवे
नमः ॥ ॐ जयाय नमः ॥ ॐ विजयाय नमः ॥
ॐ पुण्यशीलाय नमः ॥ ॐ सुशीलाय नमः ॥
ॐ सर्वे देवास्तथा दैत्या ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥
मत्पापं यत्पुरा जातं तत्सर्वं क्षम्यतां सदा ॥ ६ ॥
इमां पूजां गृहाणैवं मम पुत्रं प्रयच्छतु ॥
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रयच्छ शरणं मम ॥
ततो नवग्रहाः सर्वे दिक्पालाश्चाप्युपग्रहाः ॥ ८ ॥

गणा० ॥ पुष्पबलिको समर्पण करता हूं ॥ ॐ इंद्रा० ॐ अग्न० ॐ यमाय० ॐ निर्ऋतये० ॐ वरुणाय० ॐ कुबेराय० ॐ कालाय० ॐ शिवाय० ॐ ब्रह्म० ॐ अनन्ता० ॐ गरुडवाह० ॐ विष्ण० ॐ जयाय० ॐ विजयाय० ॐ पुण्यशीला० ॐ सु-शीलाय नमः इन मन्त्रोंसे पूजे ॥ सम्पूर्ण देवते और दैत्य, ब्रह्मा, विष्णु, शिव ये सब पूर्व जन्ममें किये हुए मेरे पापको सदा क्षमा करो ॥ ६ ॥ हे देव ! इस पूजाको ग्रहण करो मुझको पुत्र देवो अज्ञानसे अथवा प्रमादसे जो मैंने पूर्वजन्ममें किया है ॥ ७ ॥ तिस सम्पूर्णको क्षमा करो । हे देव ! मुझको अपनी शरण दो, इससे अनन्तर नवग्रह, दिक्पाल, उपग्रह इनका पूजन करे ॥ ८ ॥

सर्वं ममापराधान् वै क्षम्यतां पूर्वजन्मनः ॥
एवं सर्वं यथान्यायं पूजां कृत्वा विचारतः ॥ ९ ॥
ततो होमं प्रकुर्वीत तिलधान्यादितन्दुलैः ॥
दशांशं होमयेद्देवि तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १० ॥
गोदानं च ततः कुर्यात् दशवर्णं विशेषतः ॥
वृषमेकं प्रदातव्यं स्वर्णशृङ्गं सहाम्बरम् ॥ ११ ॥
ततो वै ब्राह्मणान्देवि भोजयेद्विधिपूर्वकम् ॥
भोजनान्ते ततो दानं सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥१२ ॥
प्रतिमालंकृता देवि वाचकाय प्रदापयेत् ॥
एवं कृते महादेवि वंशो भवति नान्यथा ॥ १३ ॥
एकादशीव्रतं चैव सप्तमीं रविसंयुताम् ॥
यावत्स्वमरणं देवि कुर्यात्सत्ययुतो नरः ॥ १४ ॥

कहे कि पूर्वजन्मके मेरे सम्पूर्ण अपराध तुमको क्षमा करने योग्य हैं ऐसे यथार्थ विधिपूर्वक सम्पूर्ण पूजा करके ॥ ९ ॥ फिर तिल, जव, चावल इनकरके दशांश होम करे दशांश तर्पण और मार्जन करे ॥ १० ॥ फिर दश प्रकारके रङ्गोंवाली गौओंका दान करे सुवर्णकी सींङ्गडी और वस्त्रोंसे युक्त कर एक बैलका दान करे ॥ ११ ॥ हे देवि ! तिससे अनन्तर विधिपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन करवावे भोजनके अन्तमें सुवर्णका दान और दक्षिणा देवे ॥ १२ ॥ हे देवि ! अलंकृत की हुई तिस प्रतिमाको वाचक याने सम्पूर्ण विधि बतानेवाले उपदेश करनेवाले ब्राह्मणको देवे । हे महादेवि ! ऐसे करनेसे अवश्य वंश चलता है इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥ १३ ॥ वह मनुष्य मरणपर्यंत एकादशीव्रत तथा रविवार-युक्त सप्तमीका व्रत करे सत्य वचन बोलनेका नियम रक्खे ॥१४॥

पूर्वपापविशुद्धिः स्यात् व्याधिरेवं विनश्यति ॥१९॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां प्रायश्चित्तकथनं नाम
तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अथ द्वितीये वक्ष्यामि प्रायश्चित्तं तथाऽम्बिके ॥
अश्विन्यां जायते देवि पूर्वकर्मविपाकतः ॥ १ ॥
अयोध्यापुरतो देवि पूर्वे क्रोशचतुष्टये ॥
सरय्वा निकटे चैव वर्णसंकरक्षत्रियः ॥ २ ॥
नामतो श्वेतवर्मेति पुत्रदारसमन्वितः ॥
एकदा मातुलो देवि पुत्रेण सह संयुतः ॥ ३ ॥
आगतो निकटे देवि स्वर्णकोटिसमन्वितः ॥
आदरं बहुधा कृत्वा गृहे वासं ददौ च सः ॥ ४ ॥

तब पूर्वजन्मके पापकी शुद्धि होगी इसमें सन्देह नहीं ॥ १९ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां प्रायश्चित्तकथनं
नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

शिवजी कहते हैं-हे अंबिके ! अब अश्विनीनक्षत्रके दूसरे चरणके प्रायश्चित्तको कहते हैं । यह पूर्वकर्मके विपाकसे अश्विनी-नक्षत्रमें जन्मनेवाला नर ॥ १ ॥ हे देवि ! अयोध्यापुरीसे पूर्व दिशामें चार कोशपर सरयूनदीके निकट वर्णसङ्कर क्षत्रिय होता भया ॥ २ ॥ श्वेतवर्मा नामवाला और स्त्रीपुत्रसे संयुक्त था । हे देवि ! एक समय उसका मामा अपने पुत्रसहित हो॥३॥ हे देवि !

तस्य पत्नी गुणवती रूपयौवनसंयुता ॥
मासमेकं तदा देवि प्रत्यहं भगिनीगृहे ॥ ५ ॥
भुज्यते सह पुत्रेण चामिषं विविधं तथा ॥
मासान्ते चावधीद्रात्रौ मातुलं सहपुत्रकम् ॥ ६ ॥
भूमिमध्ये शवं ताभ्यां यत्नतः स्थापितं तदा ॥
स्वर्णकोटिं प्रजग्राह पापात्मा गुरुघातकः ॥ ७ ॥
पत्न्या सह ततो द्रव्यव्ययं कुर्वन् दिने दिने ॥
एवं बहुतिथे काले क्षत्री कालवशोऽभवत् ॥ ८ ॥
पश्चान्मृता ततः पत्नी निर्जले गहने वने ॥
कर्दमे नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ९ ॥
निक्षिप्य महतीं पीडां तयोर्दत्त्वा ततः प्रिये ॥
युगमेकं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ १० ॥

करोडों रुपय्योंका सुवर्ण द्रव्य लेके इसके समीप आया तब यह बहुतसा आदर करके अपने घरमें वास कराता भया ॥ ४ ॥ इसकी स्त्रीभी गुणवती नामवाली रूप यौवनसे भरपूर थी। हे देवि! तब इसके मामाने एक महीनेतक दिन २ प्रति अपनी बहनके घरमें ॥ ५ ॥ पुत्रसहित होके अनेक प्रकारके मांस भक्षण किये पीछे एक महीनेके बाद पुत्रसहित हुए मामाको रात्रीसमय मारता भया ॥ ६ ॥ फिर इन स्त्री पुरुषोंने वे मुरदे यत्नसे पृथ्वीमें गाड दिये और गुरुको मारनेवाला यह पापी सुवर्णकोटि द्रव्यको ग्रहण करता भया ॥ ७ ॥ फिर अपनी स्त्रीसहित हुआ दिन २ प्रति द्रव्यको खर्चता हुआ यह क्षत्री बहुतसी समय व्यतीत हुए पीछे मृत्युके वश होता भया ॥ ८ ॥ फिर तिससे अनन्तर वह उसकी स्त्रीभी निर्जल गह्वर वनमें मरती भई तब यमके दूतोंने यमकी आज्ञासे घोर कर्दम नरकमें ॥ ९ ॥ पटकके उन दोनोंको

नरकान्निःसृतो देवि गर्दभत्वमजायत ॥
पुनः सरटयोनिं तु भुक्त्वा मर्त्यस्ततोऽभवत्॥११॥
हतोऽनेन पुरा देवि मातुलः पुत्रसंयुतः ॥
तत्पापफलतो देवि वंशच्छेदश्च जायते ॥ १२ ॥
रोगयुक्ताभवद्देवि पत्नी वै पूर्वजन्मनि ॥
ततो विवाहिता जाता पुनर्वै पूर्वकर्मतः ॥१३॥
कासश्वाससमायुक्तो विषमज्वरपीडितः ॥
प्रायश्चित्तं ततस्तस्य प्रवक्ष्यामि दयानिधे ॥ १४ ॥
प्रत्यहं ब्राह्मणे दानं भक्तिपूर्वं वरानने ॥
दशधेनुं प्रयत्नेन हरिवंशश्रुतिं तथा ॥१५॥
सुवर्णप्रतिमां कृत्वा पलं पञ्चदशस्य च ॥
वर्तुलाकारकुण्डे वै होमं कृत्वा प्रसन्नधीः ॥ १६ ॥

बहुतसी पीडा दी । हे प्रिये ! हे वरारोहे ! ! एक युगतक नरककी पीडाको भोगके ॥ १० ॥ नरकसे निकस हे देवि !, फिर गधेकी योनिको प्राप्त होते भये फिर किरलकांटकी योनिको भोगके अब मनुष्य भये हैं ॥ ११ ॥ हे देवि ! पहले इसने पुत्रसहित मामा मारा था तिस पापके फलसे इसका वंश नष्ट होता है ॥ १२ ॥ हे देवि ! पूर्वजन्ममें इसकी यह स्त्री रोगिणी होती भई फिरभी अब पूर्वकर्मके प्रभावसे वही विवाही गई है ॥ १३ ॥ खांसी श्वासकरके समायुक्त और विषमज्वर करके पीडित है । हे दयानिधे ! तिसका प्रायश्चित्त अब मैं कहूंगा ॥ १४ ॥ हे वरानने ! दिनादिनके प्रति यत्नकरके हरिवंशको सुने और दश गौओंको भक्तिपूर्वक ब्राह्मणके निमित्त दान करे ॥ १५ ॥ पल अर्थात् ६० तोलेकी सुवर्णकी प्रतिमा करवाके गोलकुंडमें प्रसन्न बुद्धिवाला

गायत्रीलक्षजाप्यं च कारयेत्तु प्रयत्नतः ॥
दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं ततः ॥ १७ ॥
शय्यादानं विशेषेण प्रतिमां पूजयेत्ततः ॥

अथ प्रतिमापूजनम् ।

षोडशाङ्गुलिका वेदी मृत्तिका सप्तसंयुता ॥
चतुरस्रा विचित्रा च गन्धपुष्पसमन्विता ॥
तत्रैव प्रतिमां कृत्वा स्थापितां पूजयेत्ततः ॥ १८ ॥
ॐ चक्रधराय नमः ॥ ॐ गदाधराय नमः ॥
ॐ शार्ङ्गिणे नमः ॥ ॐ गरुडाय नमः ॥ ॐ
विष्णवे नमः ॥ ॐ शिवाय नमः ॥ ॐ ब्रह्मणे
नमः ॥ ॐ प्रजापतये नमः ॥ ॐ सर्वेश्वराय
नमः ॥ ॐ लक्ष्म्यै नमः ॥
ॐ देवदेव महादेव शङ्खचक्रगदाधर ॥
मम पूर्वं कृतं पापं हर त्वं धरणीधर ॥ १९ ॥

पुरुष होम करे॥१६॥ यत्नकरके गायत्रीका लक्ष जाप करवावे और तिसका दशांश होम करवावे और पीछे ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ १७ ॥ विशेष करके शय्याका दान करे प्रतिमाका पूजन करे। सोलह अंगुलकी वेदी बनवावे और सात मृत्तिकाओंकरके युक्त हो चौकूंटी और विचित्र गंधपुष्पकरके युक्त वेदी हो तहांही प्रतिमाको स्थापन करके प्रतिमापूजन करे ॥ १८ ॥ ॐ चक्रधराय नमः १ ॐ गदाधरा० २ ॐ शार्ङ्गिणे० ३ ॐ गरुडा० ४ ॐ विष्णवे० ५ ॐ शिवाय० ६ ॐ ब्रह्मणे० ७ ॐ प्रजापतये० ८ ॐ सर्वेश्वरा०९ ॐ लक्ष्म्यै० १० ॐ हे देवदेव महादेव ! हे शंखचक्रगदाधर ! ! हे धरणीधर ! ! ! तुम मेरे पूर्वजन्मकृत पापको हरो ॥ १९ ॥

एवं पूजां समाप्यैव प्रतिमां तां च दापयेत् ॥
आचार्याय तदा देवि सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥ २० ॥
ततः प्रदक्षिणां कृत्वा ब्राह्मणे व्यासरूपिणे ॥
माघे मासि प्रयागे तु स्नानं पत्नीसमन्वितः ॥ २१ ॥
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं वन्ध्यात्वं च विनश्यति ॥ २२ ॥
रोगी च मुच्यते रोगात् कन्यका नैव जायते ॥ २३ ॥
इति श्रीकर्म० द्वितीयचरणविचारणं नाम चतुर्थोऽध्यायः ४

अथ पञ्चमोऽध्यायः ।

॥ ईश्वर उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि नक्षत्रतुरगास्य तु ॥
तृतीयस्य ततो देवि प्रायश्चित्तमतः शृणु ॥ १ ॥

ऐसे इस पूजाको समाप्त कर पीछे तिस प्रतिमाको आचार्य ब्राह्मणके अर्थ देवे। हे देवि! पीछे सुवर्णकी दक्षिणा देवे ॥ २० ॥ फिर वेद व्यासरूपी तिस ब्राह्मणकी प्रदक्षिणा करे और अपनी स्त्रीसे युक्त होके माघके महीनेमें प्रयागजीमें स्नान करे ॥ २१ ॥ ऐसे करनेसे वंश अर्थात् संतान होती है इसमें संदेह नहीं और मृतवत्सा अर्थात् जिस स्त्रीकी संतान नहीं जीती हो वा वंध्या हो उसकेभी पुत्रका सुख होता है ॥ २२ ॥ रोगी होवे सो रोगसे छूट जावे कन्या उत्पन्न न होवे ॥ २३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० द्वितीयचरणविचारणं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि! अब अश्विनीनक्षत्रके तीसरे चर-

अयोध्यापुरतो देवि दक्षिणे पूर्वदिग्गते ॥
नारायणपुरे रम्ये राजपुत्रोऽभवत्तदा ॥ २ ॥
स्वकर्मनिरतो दान्तः प्रजापोषणतत्परः ॥
नामतश्चोलसिंहेति तस्य पत्नी प्रभावती ॥ ३ ॥
तस्य मित्रं द्विजोऽप्येकः स्वकर्मपरिवर्जितः ॥
एकदा मृगयां यातो राजपुत्रः स ब्राह्मणः ॥ ४ ॥
मृगं हत्वा वरारोहे जग्मतुर्गहने वने ॥
मांसस्य देवि भागार्थं कलहो हि महानभूत् ॥ ५ ॥
ततः स ब्राह्मणो दुष्टः क्रोधेनैवापि च द्विषन् ॥
मरणं तस्य भो देवि बभूव गहने वने ॥ ६ ॥
ततश्चिन्तापरीतात्मा राजपुत्रो गृहं ययौ ॥
गृहे च कारयामास तस्य कर्म यथाविधि ॥ ७ ॥

णके प्रायश्चित्तको कहेंगे सो सुनो ॥ १ ॥ हे देवि ! अयोध्यापुरीसे पूर्वदिग्गत दक्षिणमें अर्थात् अग्निकोणमें रमणीक नारायणपुरविषें एक राजपुत्र होता भया ॥ २ ॥ अपने कर्ममें रत प्रजा पालनेमें तत्पर और चोलसिंह नामवाला था उसकी स्त्री प्रभावती थी ॥ ३ ॥ तिसका मित्र एक ब्राह्मण अपने कर्मसे भ्रष्ट था एक समय वह राजा और ब्राह्मण शिकार खेलने जाते भये ॥ ४ ॥ हे वरारोहे ! तहां मृगको मारके गह्वर वनमें जाते भये । हे देवि ! वहां मृगके विभाग करनेमें इनका महान् कलह हुआ ॥ ५ ॥ तब वह दुष्ट ब्राह्मण क्रोधसे द्वेष करता हुआ और तिस गह्वर वनमें उसका मरण हो गया ॥ ६ ॥ तिससे अनंतर चिंतासे व्याकुल हुआ राजपुत्र अपने घरमें आया और घरमेंही यथार्थविधिसे

ततो बहुगते काले प्रयागे मकरे मुदा ॥
शरीरं त्यक्तवान् देवि भार्यया सहितस्तदा ॥ ८ ॥
स्वर्गं भुक्त्वा युगान् सप्त ततः पुण्यक्षये सति ॥
मर्त्यलोकेऽभवज्जन्म धनधान्यसमन्वितः ॥ ९ ॥
भार्यया सहितो देवि मध्यदेशे वरानने ॥
पुत्रो न जायते देवि पूर्वकर्मविपाकतः ॥ १० ॥
ब्रह्महत्याफलेनैव मृतवत्सोऽपि वा भवेत् ॥
तस्य शुद्धिं प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रः प्रजायते ॥ ११ ॥
तदुद्देशेन कर्त्तव्यस्तडागो वापिका पथि ॥
हरिवंशश्रवणं देवि विधिपूर्वमतः शिवे ॥ १२ ॥
दश वर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः ॥
एवं कृते न संदेहो वंशस्तस्य प्रजायते ॥ १३ ॥

तिसका कर्मकांड कराया ॥ ७ ॥ फिर बहुतसा काल व्यतीत हो चुका तब यह स्त्रीसहित हुआ प्रयागजीमें मकरसंक्रांतिमें आनंदसे शरीर छोडता भया ॥ ८ ॥ फिर सात युगोंतक स्वर्ग भोगके पुण्य क्षीण हुए पीछे मृत्युलोकमें जन्मा है धन धान्यसे युक्त है ॥ ९ ॥ हे देवि ! हे वरानने ! ! भार्याकरके सहित मध्यदेशमें जन्मा है । हे देवि ! पूर्वकर्मके विपाकसे इसके पुत्र नहीं भया है ॥ १० ॥ अथवा इसके संतान नहीं जीवती है अब तिस पापके शुद्धिको कहते हैं तिससे उसके पुत्र होवेगा ॥ ११ ॥ तिस ब्राह्मणके उद्देशसे मार्गमें कुआ अथवा बावडी बनवावे । हे देवि ! हरिवंशपुराण सुने तब कल्याण होवे ॥ १२ ॥ और सुवर्ण तथा वस्त्रोंसे युक्त की हुई दश प्रकारके रंगोंवाली गौओंका दान करे ऐसे करनेसे वंश चलता है इसमें संदेह नहीं ॥ १३ ॥

सा स्त्री स्यात्सुखिनी देवि सत्यमेव न संशयः ॥
काकवन्ध्यात्वमुक्ता स्यात् मृतवत्सा सुखावहा॥१४॥
व्याधिनाशो भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १५ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे अश्विनीनक्षत्रस्य तृतीयचरणविचारणं नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

शृणु देवि वरारोहे नृणां कर्मविपाकजम् ॥
तदहं संप्रवक्ष्यामि यथाकर्मानुसारतः ॥ १ ॥
पुत्रा बहुविधा देवि लौकिका वै विचक्षणाः॥
जायन्ते नात्र संदेहस्तत्सर्वं शृणु वल्लभे ॥ २ ॥
प्रथमः पुण्यसंबन्धो मातृपितृप्रियः सदा ॥
सुसेवानिरतो नित्यं पितुर्मातुश्च यत्नतः ॥ ३ ॥

हे देवि! वह स्त्री सुखवती होवे काकवंध्याके संतान होवे मृतवत्साकोभी सुख होवे इसमें संदेह नहीं ॥ १४ ॥ हे देवि ! ऐसे करनेसे व्याधिका नाश होता है इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० भा० अश्वि० तृतीयचरणविचारणं नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! हे वरारोहे ! ! मनुष्योंके कर्मोंके विपाकसे उत्पन्न हुए फलको सुन मैं तिसको कर्मोंके अनुसार कहूंगा ॥१॥ हे देवि ! बहुत प्रकारके लौकिक विद्वान् पुत्र उत्पन्न होते हैं इसमें संदेह नहीं । हे वल्लभे ! उनको सुनो॥२॥ मुख्य पुत्र

आजन्ममरणाद्देवि पितुराज्ञां करोति च ॥
मरणे पितृमात्रोश्च श्राद्धं कुर्याद्दिने दिने ॥ ४ ॥
पितृश्राद्धं विना देवि भोजनं न करोति हि ॥
द्वितीयः शत्रुसंबंधी तस्य चेष्टां च मे शृणु ॥ ५ ॥
पूर्वजन्मप्रसङ्गेन शत्रुः पुत्रः प्रजायते ॥
जन्मतः शत्रुरूपेण मातापित्रोर्विरोधकृत् ॥ ६ ॥
तत्कर्म कुरुते येन तयोः क्लेशोऽभिजायते ॥
तृतीयो ऋणसंबन्धान्मत्तः शृणु वरानने ॥ ७ ॥
ऋणं यस्य गृहीतं तु न दत्तं हठतः प्रिये ॥
तदा पुत्रत्वमाप्नोति द्रव्यदाता न संशयः ॥ ८ ॥
पितृद्रव्यं प्रयत्नेन गृह्णाति हठतः प्रिये ॥
द्यूतवेश्याप्रदानेन व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ ९ ॥

पुण्यके संबंधवाला सदा मातापिताको प्रिय होता है नित्य प्रति यत्नसे मातापिताकी सेवा करनेमें तत्पर रहता है ॥३॥ हे देवि ! जन्म लेके मरणपर्यंत माता पिताकी आज्ञा करता है जब माता पिता मर जावे तब दिन २ प्रति श्राद्ध करे ॥४॥ हे देवि ! वह पुत्र पिताके श्राद्ध किये विना भोजनभी नहीं करता है, दूसरा शत्रुसंबंधी पुत्र होता है तिसकी चेष्टा मुझसे सुनो ॥ ५ ॥ पूर्वजन्मके प्रसंगसे शत्रु पुत्र होता है सो जन्मसेही शत्रुरूप करके मातापितासे विरोध करता है ॥६॥ ऐसा कर्म करता है कि, जिससे उनको क्लेश होवे। हे वरानने ! तीसरा ऋणके संबंधसे होता है उसको मुझसे सुनो ॥७॥ हे प्रिये ! पूर्वजन्ममें जिससे ऋण (कर्जा) लिया हो उसको हठकरके नहीं देवे तो वह द्रव्यदाता पुत्र होता है इसमें संदेह नहीं ॥८॥ सो यत्नसे दिन २ प्रति हठसे पिताके धनको ग्रहण करता

यदा द्रव्यविहीनश्च पिता भवति वै प्रिये ॥
तदा मृत्युमवाप्नोति युवरूपो न संशयः ॥ १० ॥
चतुर्थो मित्ररूपेण पुत्रो जायेत पार्वति ॥
स्थापितं द्रव्यमन्यस्य न दत्तं पूर्वजन्मनि ॥ ११ ॥
तत्संबन्धस्वरूपेण पुत्रो जातस्तदा शिवे ॥
बहुप्रीतिं पितृभ्यां च पितृव्ये गोत्रजे तथा ॥ १२ ॥
बहूद्यमो गुणी भोक्ता पितुः शिक्षासु तत्परः ॥
यत्करोति गृहे कर्म सुखदं जायते हि तत् ॥ १३ ॥
पूर्वरूपो यदा देवि पत्नीपुत्रसमन्वितः ॥
ततः शरीरं वै त्यक्त्वा धनं गृह्य ततः प्रिये ॥ १४ ॥
अथ वक्ष्यामि ते देवि चतुर्थचरणं शिवे ॥
नक्षत्रतुरगस्यैव प्राणिनां नियतं शृणु ॥ १५ ॥

है । हे प्रिये ! जुवा और वेश्याको देनेसे दिन २ प्रति खर्च करता है ॥९॥ हे प्रिये ! जब उसका पिता द्रव्यहीन (कंगाल) हो जाता है तब जवानरूप हुआ यह मर जाता है इसमें संदेह नहीं ॥१०॥ हे पार्वति ! चौथा मित्ररूपकरके पुत्र होता है । जिसको पूर्वजन्ममें अन्य किसीका द्रव्य स्थापित किया फिर नहीं दिया ॥ ११ ॥ तो उस संबंधसे पुत्र होता है । हे शिवे ! तब वह माता पिता चचा गोत्रमें होनेवाला जन इनसे बहुत प्रीति रखता है ॥ १२ ॥ बहुत उद्यमी, गुणी, भोक्ता, पिताकी शिक्षामें तत्पर होता है जो कुछ घरमें काम करता है वही सुखदायक होता है ॥ १३ ॥ ऐसा यह पुत्र पहलेकी तरह जब जवान होता है और स्त्रीपुत्रसे युक्त होता है तब हे प्रिये ! पिताके सब धनको ग्रहण करके शरीर त्याग परलोकको प्राप्त हो जाता है ॥ १४ ॥ हे देवि ! हे शिवे ! ।

कोशलापुरतो देवि सरय्वा उत्तरे तटे ॥
तत्र क्षत्री वसत्येको नगरे नन्दने तदा ॥ १६ ॥
स च धर्मविहीनस्तु लक्ष्मणेति च नामतः ॥
तस्य भार्या विशालाक्षी कल्याणी नाम सा प्रिये१७॥
कुलटा यौवनोन्मत्ता परपुंसि रता सदा ॥
व्यापारं कारयामास वस्त्रहेमादिकस्य हि ॥ १८ ॥
उद्यमं बहुधा कृत्वा द्विजैः सह वरानने ॥
एवं बहुतिथे काले विप्रद्रव्यं तु चोरितम् ॥ १९ ॥
तेन शोकेन विप्रस्तु शीघ्रं पञ्चत्वमागतः ॥
ततो बहुतिथे काले राजपुत्रस्य पञ्चता ॥ २० ॥
गतः स नरकं घोरं निरुच्छ्वासं सुदारुणम् ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ २१ ॥

अब अश्विनीनक्षत्रके चतुर्थचरणको तेरे आगे कहूंगा और तहां जन्मनेवाले प्राणियोंके नियमको सुनो ॥ १५ ॥ हे देवि ! अयोध्यापुरसे सरजूके उत्तरकिनारेपर तथा नंदननाम नगरमें एक क्षत्रिय वसता था ॥ १६ ॥ वह धर्म करके विहीन लक्ष्मण नाम करके विख्यात था और हे प्रिये ! तिसकी स्त्री सुंदर नेत्रोंवाली कल्याणी नाम करके विख्यात थी ॥ १७ ॥ वह कुलटा और यौवनकरके मतवाली परपुरुषमें प्रीति रखनेवाली सदा वस्त्र सुवर्ण आदिकोंका व्यापार करती भई ॥ १८ ॥ बहुत उद्यम करके ब्राह्मणसे व्यापार करते भये ऐसे बहुत दिन पीछे ब्राह्मणका द्रव्य चोर लिया ॥ १९ ॥ तिसके शोकसे ब्राह्मण शीघ्रही मर गया और तिससे बहुत दिन पीछे राजपुत्र क्षत्रीकी मृत्यु हो गई ॥२०॥ फिर वह बहुत बुरे संताप देनेवाले दारुण नरकमें जाता भया

१ कर्म.

नरकान्निःसृतो देवि वृषयोनिः पुराभवत् ॥
ततो वै राजपुत्रस्तु मानुषत्वमुपागतः ॥ २२ ॥
पुरा तु यत्कृतं पापं तदिहैव प्रभुज्यते ॥
मित्रस्य वञ्चनाद्देवि पुत्रस्यैव च पञ्चता ॥ २३ ॥
काकवन्ध्याऽभवत्पत्नी दुःखशोकसमन्विता ॥
तस्य पुण्यं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापस्य निग्रहम् ॥ २४ ॥
गायत्रीलक्षजाप्येन सर्वं पापं प्रणश्यति ॥
कूष्माण्डं नारिकेलं वा स्वर्णयुक्तं सहाम्बरम् ॥२५॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं संतानार्थं वरानने ॥
वर्तुलाकारकुण्डे च होमं यत्नेन कारयेत् ॥ २६ ॥
स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरां पट्टवस्त्रसमन्विताम् ॥
आचार्याय प्रदद्यात्तु सपात्रां विधिवत् प्रिये ॥ २७ ॥

साठ हजार वर्षोंतक नरककी पीडाको भोगके ॥ २१ ॥ हे देवि ! नरकसे बाहिर निकल पहले बैलकी योनिमें प्राप्त भया फिर यह राजपुत्र अब इस मनुष्ययोनिमें प्राप्त भया है ॥ २२ ॥ पहले जो पाप किया था सो यहां भोगा जाता है । हे देवि ! पहले जो मित्र ठगा था तिससे इसके पुत्रकी मृत्यु होती है ॥ २३ ॥ इसकी स्त्री काकवंध्या एकहीवार संतान जनी पर फिर कुछ नहीं जनी सो दुःखशोकयुक्त है अब तिससे पूर्वपापको दूर करनेवाले पुण्यको कहूंगा ॥ २४ ॥ गायत्रीका लक्ष जप करानेसे संपूर्ण पाप नष्ट होता है और कूष्मांड (पेठे) को अथवा नारियलको सोनेसे मर वस्त्रसे आच्छादित कर ॥ २५ ॥ हे वरानने ! संतानके वास्ते गंगाजीके मध्यमें उसका दान करे । गोल कुंड बनावे यत्नसे होम करे ॥ २६ ॥ सोनेकी सींगडी और रूपेके खुर बनवावे पट्टवस्त्र

एवं कृते न संदेहो वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥
पुत्रपौत्राश्च वर्द्धन्ते न संदेहो वरानने ॥ २८ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे अश्विनी-
नक्षत्रस्य चतुर्थचरणो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमोऽध्यायः।

॥ पार्वत्युवाच ॥

देवदेव महादेव सृष्टिस्थितिलयात्मक ॥
स्त्रीणां च कर्म संब्रूहि दयां कृत्वा ममोपरि ॥ १ ॥

॥ ईश्वर उवाच ॥

नारीणां शृणु मे सर्वं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥
ततोऽहं संप्रवक्ष्यामि समासेन वरानने ॥ २ ॥
पूर्वजन्मनि या नारी पतिनिन्दां चकार ह ॥
तेन पापेन भो देवि न स्त्री पुष्पवती भवेत् ॥ ३ ॥

उढावे दोहिनी आदि पात्रसे युक्त करे फिर विधिपूर्वक आचार्य ब्राह्मणके अर्थ दे देवे ॥ २७ ॥ हे वरानने ! ऐसे करनेसे वंध्यापन दूर होता है और पुत्र पौत्र बढते हैं इसमें संदेह नहीं ॥ २८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० भाषाटीकायां अश्विनी० चतुर्थचरण० नाम
षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

पार्वती पूंछती है-हे देवदेव ! हे महादेव ! ! सृष्टिस्थितिसंहार करनेवाले तुम मुझपर दयाकरके स्त्रियोंके कर्मोंको कहो ॥ १ ॥ शिवजी कहते हैं-हे वरानने ! स्त्रियोंने जो कुछ पूर्वजन्ममें किया है सो सब मुझसे सुनो मैं संक्षेपमात्रसे कहता हूं ॥ २ ॥ जो स्त्री

यदा रौप्यस्य वै वृक्षं स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम् ॥
पलपञ्चमिदं देवि दद्याद्वेदविदे प्रिये ॥ ४ ॥
तदा पुष्पं भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ॥
पतिं सुप्तं परित्यज्य परपुंसि रताभवत् ॥ ५ ॥
तेन पापेन भो देवि वन्ध्या नारी प्रजायते ॥
सुवर्णस्य कृतं वृक्षं फलपुष्पसमन्वितम् ॥ ६ ॥
दद्याद्वेदविदे नारी पतिसेवासु तत्परा ॥
ततः पुत्रं प्रसूयेत सुवर्णपलतो दश ॥ ७ ॥
परपुंसि रता नारी स्वपतिं मिष्टवादिनी ॥
तेन पापेन भो देवि कन्यापत्यं च जायते ॥ ८ ॥
रौप्यस्यैव कृतं लिङ्गं पलपञ्चदशेन तु ॥
पूजयित्वा प्रयत्नेन दद्याद्विप्राय श्रोत्रिणे ॥ ९ ॥

पूर्वजन्ममें पतिकी निन्दा करती भई। हे देवि! तिस पापसे वह पुष्पवती रजस्वला नहीं होती है ॥ ३ ॥ जब यह अपने अंगुष्ठप्रमाण चांदीका वृक्ष बीस तोले प्रमाणका बनावे फिर वेदको जाननेवाला ब्राह्मणके अर्थ दान देवे ॥ ४ ॥ हे देवि! तब रजस्वला होती है इसमें कुछ विचार नहीं करना। जो स्त्री सोते हुए अपने पतिको त्यागके परपुरुषके संग रमण करती है ॥ ५ ॥ हे देवि! उस पापसे वह स्त्री वंध्या होती है सो फल पुष्प आदिकोंसे युक्त सुवर्णका वृक्ष बनवाकर ॥ ६ ॥ तिसको वेदपाठी ब्राह्मणके अर्थ दान देवे और अपने पतिकी सेवामें तत्पर रहे तब पुत्र उत्पन्न होता है यहां चालीस तोले सुवर्ण लेना ॥ ७ ॥ हे देवि! जो स्त्री परपुरुषसे रत रहे और अपने पतिसे मीठी २ बातें बनाती रहे तिस पापसे उसके कन्याही होती है ॥८॥ १५पल अर्थात् ६० तोले

ततः कन्या तु न भवेच्छुभं पुत्रं प्रसूयते ॥
सततं वै यदा नारी कुलटा धर्मचारिणी ॥ १० ॥
तेन कर्मविपाकेन नारीगर्भं विनश्यति ॥
ततः प्रपूजयेद्देवं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ ११ ॥
प्रयागे मकरे स्नानं पतिना तु सहाचरेत् ॥
स्वर्णशृङ्गं रौप्यखुरं मुक्तालांगूलग्रन्थितम् ॥१२ ॥
दद्यात्सदक्षिणं देवि वृषभं विदुषे तथा ॥
या पतिं दुर्बलं त्यक्त्वा परेण सह संगता ॥ १३ ॥
तेन पापेन भो देवि दरिद्रा पुत्रवर्जिता ॥
ततः कुमारीं संपूज्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरान् ॥ १४ ॥
पूजयेदब्दमेकं तु प्रत्यहं नियता प्रिये ॥
वर्षे पूर्णे ततस्तस्यै वस्त्रं दत्त्वा विसर्जयेत् ॥ १५ ॥

चांदीका शिवलिंग बनवावे और तिसका विधिकरके पूजन करे और पीछे वेदके पढे हुए ब्राह्मणको दे देवे ॥ ९ ॥ तो फिर कन्याकी सन्तान नहीं होवे और सुन्दर पुत्र जन्मे और जो सदा जारधर्ममें प्रवृत्त होनेवाली स्त्री उस स्त्रीका तिस जारकर्मके पापकरके गर्भ नष्ट होता है तो वह स्त्री शंख चक्र गदाको धारण करनेवाले (विष्णु) देवका पूजन करे ॥१०॥११॥ और मकरके सूर्यमें पतिकरके सहित प्रयागमें स्नान करे और सुवर्णके सींग चांदीके खुर मोतियोंकरके गूंथी हुई पूंछ ऐसी विधिसे दक्षिणाकरके सहित वृषभको हे देवि ! विद्याके पढे हुए ब्राह्मणको देवे जो अपने दुर्बलपतिको छोडके जारपतिके सङ्ग जाती है॥१२॥१३॥ हे देवि ! वह तिस पाप करके दरिद्र और पुत्रकरके हीन होती है। वह कुमारीकन्याको पूजे और ब्रह्मा, विष्णु, शिवको पूजन करे ॥ १४ ॥ हे प्रिये ! एक वर्षतक

व्रतं सूर्यस्य वै कुर्यात्प्रणम्य प्रतिवासरम् ॥
तदा नारी पूर्वपापं दहत्येव न संशयः ॥ १६ ॥
मिष्टं भुङ्क्ते तु या नारी पत्युर्मिष्टं ददाति न ॥
तेन पापेन सा नारी मुखे दौर्गन्ध्यधारिणी ॥ १७ ॥
गुडं वा मधु वा खण्डं विप्राय प्रयता सदा ॥
प्रयच्छति यदा देवि मुखे शुद्धिश्च जायते ॥ १८ ॥
स्वपतिघ्नी च या नारी रण्डा भवति नान्यथा ॥
तया नित्यं प्रपूज्या च तुलसी भक्तिभावतः ॥१९॥
ऊर्जे माघे च वैशाखे प्रातःस्नानं समाचरेत् ॥
एकादशीव्रतं नित्यं द्वादशाक्षरविद्यया ॥ २० ॥
जपं कृत्वा प्रयत्नेन पतिरूपाय विष्णवे ॥
समर्पणं ततः कुर्यात् शीघ्रं पापं प्रणश्यति ॥ २१ ॥

दिन २ प्रति नियमसे पूजन करे वर्षदिन पूर्ण हो लेवे तब तिस कन्याको वस्त्र देके विसर्जन करे॥१५॥ और रविवारके प्रति सूर्यव्रत करे प्रणाम करे तब वह नारी निश्चय अपने पूर्वपापको दग्ध कर देती है ॥ १६ ॥ जो स्त्री मीठा भोजन करे पतिको मीठा नहीं देवे तिस पापसे उसके मुखमें दुर्गंधी हो जाती है ॥१७॥ गुड अथवा शहद वा खांडको यत्नसे सदा ब्राह्मणके अर्थ दान देवे। हे देवि! तब उसके मुखमें शुद्धि होती है ॥ १८ ॥ जो स्त्री पूर्वजन्ममें अपने पतिको मार देती है वह रंडा होती है इसमें सन्देह नहीं । उसने भक्तिभावसे नित्यप्रति भक्तिसे तुलसीका पूजन करना ॥ १९ ॥ कार्तिक, माघ, वैशाख इन महीनोंमें प्रातःकाल स्नान करना एकादशीव्रत करना नित्यप्रति द्वादशाक्षर[1] मंत्र जपना ॥ २० ॥ यत्नसे

1 " ॐ नमो भगवते वासुदेवाय " यह द्वादशाक्षर मन्त्र है ।

यदा पापयुता नारी गर्भपातं च कारयेत् ॥
तेन दुश्चरितेनेह ज्वरकुक्षिप्रपीडनम् ॥ २२ ॥
योनिशूलं भवेद्देवि गुदरोगो भगंदरः ॥
तदा कुर्यात् प्रयत्नेन ब्राह्मणीं ब्राह्मणं तथा ॥ २३ ॥
रौप्यस्य च महादेवि दशनिष्कस्य भक्तितः ॥
प्रत्यहं पूजयेद्देवि पत्युराज्ञां समाचरेत् ॥ २४ ॥
भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्घृतखण्डसमन्वितैः ॥
गोदानं च ततः कुर्यात् भक्त्या विद्योपजीविने॥२५॥
यदा नारी च दुष्टात्मा स्वपतौ दुर्वचो वदेत् ॥
तदा कण्ठे भवेद्रोगो नासिकायां च पीनसम् ॥२६॥
वातगुल्मं वापि शिवे श्वेतपुष्पं प्रजायते ॥
रौप्यपुष्पयुतं देवि सुवर्णेन समन्वितम् ॥ २७ ॥

जपकर पीछे पतिरूप विष्णुके अर्थ समर्पण करे तब शीघ्रही पाप नष्ट होता है ॥२१॥ जो यदि कोई स्त्री पूर्वजन्ममें गर्भपात करावे तिस दुष्टाचरणसे इस जन्ममें ज्वर और कुक्षिमें पीडा रहती है ॥ २२ ॥ हे देवि ! योनिशूल गुदरोग भगंदर ये रोग होते हैं तब यत्नसे ब्राह्मण ब्राह्मणीकी मूर्ति ॥२३॥ हे महादेवि ! भक्तिसे चालीस मासे प्रमाण चांदीकी बनवावे फिर दिन २ प्रति मूर्तिका पूजन करे और अपने पतिकी सेवामें तत्पर रहे ॥ २४ ॥ अनेक प्रकारके घृत खांड युक्त अन्नोंसे ब्राह्मणोंको भोजन करवावे और भक्तिपूर्वक विद्याकी आजीविका करनेवाले ब्राह्मणको गोदान देवे ॥ २५ ॥ जो दुष्टनारी पूर्वजन्ममें अपने पतिको खोटा वचन बोले तो उसके कण्ठमें रोग और नासिकामें पीनस (खेहरका) रोग होता है ॥ २६ ॥ हे शिवे ! अथवा उस स्त्रीके वातगुल्म (वादीका गोला)

दद्याद्विप्राय विदुषे तदा सप्तफलं शुभे ॥
कन्यकां कलहाद्दुष्टा हन्ति नारी यदा हठात् ॥२८॥
तदा कुष्ठं भवेद्देवि जन्मजन्म दरिद्रता ॥
सूर्यस्य पूजनं कान्ते सदा नारीव्रतं चरेत् ॥ २९ ॥
मासे मासे शनौ वारे वृक्षे विष्णुस्वरूपिणि ॥
विधिवत्पूजनं कुर्यात् पूर्वपापं विशुद्ध्यति ॥३०॥
श्वश्रूं च श्वशुरं चैव नित्यं क्रूरवचो वदेत् ॥
तेन पापेन भो देवि श्वेतपुष्पं तनौ भवेत् ॥ ३१ ॥
सूर्यस्य प्रतिमां देवि सुवर्णत्रिपलस्य च ॥
दद्याद्वेदविदे देवि सूर्यस्यैव व्रतं चरेत् ॥ ३२ ॥
इति श्रीकर्म० पार्व० स्त्रीकर्म०कथनं नाम सप्तमोऽध्यायः॥७॥

वा श्वेतपुष्प, शरीरमें सपेद चीतड़े हो जाते हैं । हे देवि ! तहां चांदीके पुष्पोंसे युक्त सुवर्णसे बनाया हुआ ॥ २७ ॥ सात पल प्रमाण वृक्षको विद्वान् ब्राह्मणके अर्थ देवे । और जो दुष्ट नारी हठसे कलह करके कन्याको मार देती है ॥ २८ ॥ तो उसके कुष्ठ होता है । हे कान्ते ! वह सूर्यका पूजन करे और सदा स्त्रीका व्रत नियम धारण रक्खे ॥ २९ ॥ महीने २ प्रति शनिवारको विष्णुरूपी पीपलवृक्षका विधिपूर्वक पूजन करे ऐसे करनेसे पूर्वजन्मके पापकी शुद्धि होती है ॥ ३० ॥ हे देवि ! जो स्त्री नित्यप्रति अपने सासु श्वशुरको क्रूर वचन बोलती है तिस पापसे उसके शरीरमें सपेद चीतड़े होते हैं ॥ ३१ ॥ हे देवि ! तहां बारह तोले सुवर्णकी मूर्ति बनवाके वेदपाठी ब्राह्मणके अर्थ दान देवे और सूर्यका व्रत करती रहे तब पाप नष्ट होवे श्वेत पुष्प, सपेत चीतड़े दूर होवें ॥ ३२ ॥

इति श्रीकर्म० भाषाटी० पार्वतीहरसं० स्त्रीकर्म० कथनं नाम सप्तमोऽध्यायः ७॥

अथ अष्टमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

भरण्याः प्रथमे पादे नीलकण्ठोऽभवद्द्विजः ॥
ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टः काकुत्स्थनगरे शुभे ॥ १ ॥
वैश्येन सह मित्रत्वं क्रय्यं कृत्वा दिने दिने ॥
ब्राह्मणी तत्र वृद्धासीत्पतिपुत्रविवर्जिता ॥ २ ॥
तस्या द्रव्यं गृहीतं च विक्रयार्थं द्विजेन तु ॥
ततो बहुदिनं यातं तस्या द्रव्यं न दत्तवान् ॥ ३ ॥
एवं बहुतिथे काले तस्य मृत्युरजायत ॥
ब्रह्मकर्मपरिभ्रंशान्नरके पतनं प्रिये ॥ ४ ॥
नरकान्निःसृतो देवि सर्पयोनिरजायत ॥
सर्पयोनिफलं भुक्त्वा गर्दभत्वमुपागतः ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं–भरणीके प्रथम चरणमें जन्मनेवाला यह मनुष्य पहिले जन्ममें नीलकंठ नामवाला ब्राह्मणके कर्म करके भ्रष्ट काकुत्स्थ नाम सुन्दर नगरमें होता भया ॥ १ ॥ सो वह वैश्यसे मित्रता करके दिन दिनको प्रति माल खरीदनेका व्यवहार करता था तहां एक ब्राह्मणी पति पुत्र करके हीन थी ॥ २ ॥ तिसका धन विक्रयके अर्थ नीलकण्ठ ब्राह्मणने कर्जा ले लिया तिससे पीछे बहुत दिन व्यतीत हो गये परंतु तिसका धन दिया नहीं ॥ ३ ॥ ऐसेही बहुतसे दिन पीछे तिस ब्राह्मणकी मृत्यु हो गई है तो हे प्रिये ! ब्रह्मकर्मके भ्रष्ट होनेसे नरकमें पडा ॥ ४ ॥ हे देवि ! नरकसे निकसके सर्पयोनिमें जन्मा और सर्पफलको भोगके गर्दभयोनिमें प्राप्त

पुनः संप्राप्तवान् देवि मध्यदेशे च मानुषम् ॥
धनधान्यसमायुक्तः पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ६ ॥
ततो बहुतिथे काले तदा कन्याभवत्प्रिये ॥
स्वर्णं पूर्वं हृतं देवि स्वर्णसम्बन्धजा सुता ॥ ७ ॥
ततः सा वर्द्धिता कन्या विवाहश्चाभवत् खलु ॥
पितृमातृप्रिया नित्यं युवती तु यदाभवत् ॥ ८ ॥
तदा सा विधवा जाता मातापित्रोश्च दुःखदा ॥
पुनः पुत्रविहीनत्वं प्रायश्चित्तमतः शृणु ॥ ९ ॥
सूर्यमन्त्रस्य जाप्येन लक्षमेकं वरानने ॥
पार्थिवस्यार्चनं सम्यक् त्र्यम्बकेति ततो जपेत् ॥१०॥
होमं च कारयेद्धीमान् शतब्राह्मणभोजनम् ॥
पायसं शर्करायुक्तं कारयेद्विधिपूर्वकम् ॥ ११ ॥

हुआ ॥ ५ ॥ हे देवि ! फिर वह मध्यदेशमें मनुष्य भया धनधान्यसे युक्त और पुत्र कन्या करके वर्जित हुआ ॥ ६ ॥ हे प्रिये ! तब बहुतसा काल व्यतीत होनेपर जिस स्त्रीका सुवर्ण हरा था वह कन्यारूपसे सोनेके सम्बन्धसे पुत्री होती भई ॥ ७ ॥ तिससे अनंतर वह कन्या बढती भई फिर विवाह होता भया जब मातापिताको प्रिय लगने लगी और जवान भई ॥ ८ ॥ तब वह विधवा हो गई मातापिताको दुःख देती भई फिर यह पुत्रहीन हो गया है अब इसके प्रायश्चित्तको सुन ॥ ९ ॥ हे वरानने ! सूर्यमंत्रसे लक्षसंख्या पार्थिव शिव बनवाके तिनका पूजन करावे फिर " त्र्यंबकं यजामहे " इस मन्त्रको जपे ॥ १० ॥ बुद्धिमान् जन होम करे और खीर खांडसे विधिपूर्वक सौ ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ ११ ॥

ततः कूपतडागौ च वापिकां च महापथे ॥
एवं कृते न संदेहो वंशलाभो वरानने ॥ १२ ॥
यदा न क्रियते देवि तदा वंशो न जायते ॥ १३ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे भरणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अथ नवमोऽध्यायः ।

॥ ईश्वर उवाच ॥

अथ द्वितीये वक्ष्यामि भरण्याश्चरणे प्रिये ॥
तस्य सर्वं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ १ ॥
अयोध्यापुरतो देवि क्रोशमात्रे प्रदक्षिणे ॥
जानकीनगरे रम्ये द्विजश्चासीत् स तस्करः ॥ २ ॥
ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टो मद्यपानरतः सदा ॥
स वेश्यानिरतो नित्यं पत्नी तस्य पतिव्रता ॥ ३ ॥

फिर महान् बडे मार्गमें कूवा, बावडी, तालाव बनवावे । हे वरानने ! ऐसे करनेसे निश्चय वंश बढता है ॥ १२ ॥ हे देवि ! जो ऐसा नहीं किया जावे तो वंश नहीं चलता है ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां भरणी० प्रथमचर० नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

शिवजी कहते हैं-हे प्रिये ! अब भरणीनक्षत्रके दूसरे चरणमें जन्मनेवालेने जो पूर्वजन्ममें किया है सो कहेंगे ॥ १ ॥ हे देवि ! अयोध्यापुरीसे दक्षिणकी तरफ एक कोशपर जानकी नामवाले सुंदर पुरमें कोई ब्राह्मण होता भया वह चोर था ॥२॥ और ब्रह्मक-

पतिभक्तिरता नित्यं देवपूजासु तत्परा ॥
एकदा ब्राह्मणोऽप्येकः क्षुधार्तो दुर्बलः प्रिये ॥ ४ ॥
अन्नं च याचयामास लम्पटं प्रति वत्सले ॥
दुर्वचश्चावदद्देवि भिक्षुकं प्रति दुर्बलम् ॥ ५ ॥
आत्मघातः कृतस्तेन दुर्बलब्राह्मणेन च ॥
ततो बहुतिथे काले मरणं तस्य चाभवत् ॥ ६ ॥
पातिव्रत्येन तत्पत्न्याः सत्यलोकं जगाम सः ॥
बहुवर्षसहस्राणि स्वर्गे वासोऽभवत्प्रिये ॥ ७ ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके स मानुषः ॥
पूर्वपापफलाद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ८ ॥
तदुद्देशेन मरणं ब्राह्मणस्याऽभवत् पुरा ॥
मद्यपानं कृतं तेन ततः कुष्ठी प्रजायते ॥ ९ ॥

मेंसे परिभ्रष्ट तथा मदिरा पीनेमें तत्पर था नित्यप्रति वेश्याके संग गमन करता उसकी स्त्री पतिव्रता थी ॥ ३ ॥ नित्य पतिकी भक्तिमें रत और देवपूजनमें तत्पर थी । हे प्रिये ! एक समय एक दुर्बल ब्राह्मण ॥ ४ ॥ हे वत्सले ! तिस लंपट तस्करब्राह्मणसे अन्न मांगता भया। तब तिस दुर्बल भिक्षुकको यह खोटा वचन बोलता भया ॥ ५ ॥ फिर तिस दुर्बल ब्राह्मणने अपना अपघात कर दिया अर्थात् मर गया पीछे बहुतसा काल बीत चुका तब तिस लंपट ब्राह्मणकाभी मरण हो गया ॥ ६ ॥ सो अपनी स्त्रीके पतिव्रताधर्म करके सत्यलोकमें जाता भया । हे प्रिये ! तहां स्वर्गलोकमें बहुत हजार वर्षोंतक वास होता भया ॥ ७ ॥ फिर पुण्य क्षीण होनेपर वह मृत्युलोकमें मनुष्य भया है । हे देवि ! पूर्वपापसे पुत्र कन्या करके हीन है ॥ ८ ॥ क्योंकि इसके उद्देशसे पहले भिक्षुक

तस्य शान्तिः प्रवक्ष्यामि यतः पापात्प्रमुच्यते ॥
गायत्रीमूलमंत्रेण लक्षं जाप्यं प्रयत्नतः ॥ १० ॥
दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं शतम् ॥
विधिवत्पूजयेद्देवि कपिलां स्वर्णभूषिताम् ॥ ११ ॥
दद्याद्विप्राय तां देवि विदुषे ज्ञानरूपिणे ॥
अतः पुत्रः प्रजायेत रोगनाशो भवेद्ध्रुवम् ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे भरणीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अथ दशमोऽध्यायः

॥ शिव उवाच ॥

एको वणिग्जनो देवि काकुत्स्थनगरे शुभे ॥
अग्निकोणे शिवपुरो योजनार्द्धप्रमाणके ॥ १ ॥

ब्राह्मणका मरना हुआ था, इसे मदिरा पान की थी तिससे कुष्ठी है ॥ ९ ॥ अब तिसकी शांतिको कहेंगे कि, जिससे पापसे छूट जावेगा, यत्नसे गायत्रीका लक्ष जप करवावे ॥ १० ॥ दशांश होम करवावे सौ ब्राह्मणोंको भोजन करवावे । हे देवि ! विधिपूर्वक कपिला गौका दान करे और सुवर्णसे विभूषित करे ॥ ११ ॥ हे देवि ! तिस गौको विद्वान् और ज्ञानरूपी ब्राह्मणके अर्थ देवे तो फिर पुत्र जन्मे और रोगोंका नाश होवे ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

शिवजी कहते हैं । हे देवि ! एक वैश्यजन काशीजीसे अग्नि-

धनाढ्यो ह्यवसद्देवि वैश्यवृत्तिरतः सदा ॥
विक्रयं कुरुते देवि गुडमन्नं रसादिकम् ॥ २ ॥
एकस्मिन् समये देवि गुडमादाय चाध्वनि ॥
वृषभं भारसंपन्नं करोति स वरानने ॥ ३ ॥
भारेण पीडितोऽनड्वान् स वै पथि गतः शिवे ॥
न ज्ञातं तेन वै पापं वृषभार्तिसमुद्भवम् ॥ ४ ॥
एवं बहुतिथे काले बिल्वमङ्गलके पुरे ॥
वैश्यस्य मरणं जातं सरय्वां सह भार्यया ॥ ५ ॥
स्वर्गलोके गतौ द्वौ च तौ तु क्षेत्रप्रभावतः ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि स्वर्गे भुक्तं शुभं फलम् ॥ ६ ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके वरानने ॥
अवन्तीनगरे जातौ धनधान्यसमन्वितौ ॥ ७ ॥

कोणमें दो कोशके विस्तारमें बसते हुए सुंदर काकुत्स्थ नामवाले नगरमें ॥ १ ॥ धनकरके पूर्ण हुआ बसता भया और वृत्तिमें रत रहता हुआ सदा गुड अन्न रस आदिकोंका बेचना लेना करता था ॥ २ ॥ हे वरानने ! हे देवि ! एक समयमें गुड लेके मार्गमें गमन करते हुए वृषभको वह भारकरके संपन्न करता भया ॥ ३ ॥ हे शिवे ! वह वृषभ मार्गमें भारकरके पीडित होता भया वृषभको पीडा होनेसे उत्पन्न हुआ जो पाप तिसको जाना नहीं ॥४॥ ऐसे बहुतसा काल व्यतीत हो चुका तब बिल्वमंगल नामक पुरमें सरयूनदीके किनारेपर स्त्रीसहित उसका मरना हो गया ॥५॥ फिर पवित्रक्षेत्रके प्रभावसे वे दोनों स्वर्गलोकमें प्राप्त होते भये तहां स्वर्गलोकमें साठ हजार वर्षोंतक उत्तम फल भोगा॥६॥ हे वरानने ! पीछे पुण्य क्षीण हो गया तब ये दोनों उज्जैनपुरीमें धनधान्यसे युक्त होते भये॥७॥

मध्यदेशे विशालाक्षि पूर्वकर्मफलेन हि ॥
पुत्रो न जायते देवि गर्भपातस्तथा शिवे ॥ ८ ॥
कन्यका वै प्रजायेत वारं वारं वरानने ॥
शरीरे च ज्वरोत्पत्तिर्मध्यमा च प्रजायते ॥ ९ ॥
प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ॥
सुवर्णस्य वृषं शुभ्रं पलपञ्चमितं तथा ॥ १० ॥
प्रतिमां कारयेद्देवि वृषमेकं विभूषितम् ॥
प्रपूज्य शिवमन्त्रेण वैदिकेन यथाविधि ॥ ११ ॥
प्रदद्याद्विदुषे तस्मै ज्ञानिने शुद्धबुद्धये ॥
नमः शिवाय मन्त्रेण लक्ष्यजाप्यं प्रयत्नतः ॥ १२ ॥
रोगतो मुच्यते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे भरण्यास्तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

हे देवि ! हे विशालाक्षि !! पूर्वकर्मके प्रभावसे मध्यदेशमें उत्पन्न भये हैं और इनके पुत्र नहीं होता है । हे शिवे ! हे देवि!! अथवा गर्भपात होता है ॥८॥ अथवा वारंवार कन्या जन्मती है । हे वरानने ! इसके शरीरमें मध्यमसी ज्वरी रहती है ॥९॥ अब इसके पूर्वपापकी शुद्धिके वास्ते प्रायश्चित्तको कहेंगे । वीस तोले सुवर्णका सुंदर (वृष) बैल बनवावे॥१०॥ हे देवि ! एक बैलकी मूर्ति बना तिसको विभूषित कर फिर वेदमें होनेवाले शिवमंत्रकरके यथार्थविधिसे पूजन करे ॥११॥ पीछे शुद्धबुद्धिवाले ज्ञानी विद्वान् ब्राह्मणके अर्थ दान देवै और "नमः शिवाय" इस मंत्रकरके यत्नसे लक्ष जाप करवावै॥१२॥ हे देवि ! रोगसे छूट जाता है इसमें कुछ विचार नहीं करना॥१३॥
इति श्रीकर्मवि०भरण्यास्तृतीयचरणप्रायश्चित्त०नाम दशमोऽध्यायः॥१०॥

अथ एकादशोऽध्यायः ।

॥ ईश्वर उवाच ॥

शृणु देवि वरारोहे नृणां कर्म विपाकजम् ॥
प्रवक्ष्यामि न संदेहो यदि ते श्रवणे मतिः ॥ १ ॥
उत्तरे चाप्ययोध्यायास्ततः क्रोशत्रयोपरि ॥
तत्र तस्थौ च भो देवि लोकशर्मेति नामतः ॥ २ ॥
तस्य पत्नी शुभाङ्गी वै लीलानाम्नीति विश्रुता ॥
ब्राह्मणः कर्मविभ्रष्टो व्याधरूपो वरानने ॥ ३ ॥
मृगान् सबालकान् हत्वा पक्षिणो विविधानपि ॥
बुभुजे पत्नीयुक्तस्तु तुतोष बहुधा तदा ॥ ४ ॥
तस्य पत्नी महादुष्टा मुखरा चञ्चला तथा ॥
परपुंसि रता नित्यं धर्मकर्मविवर्जिता ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं–हे देवि ! हे वरानने ! ! मैं मनुष्योंके कर्मविपाकको निःसंदेह कहूंगा जो तुम्हारी बुद्धि सुननेमें है तो सुनो । अयोध्यापुरीसे उत्तरदिशामें तीन कोशपर लोकशर्मा नामवाला ब्राह्मण रहता था ॥ १ ॥ २ ॥ तिसकी स्त्री सुंदर अंगवाली लीलानामसे प्रसिद्ध थी । हे वरानने ! वह ब्राह्मण अपने कर्मसे भ्रष्ट हो व्याधरूप होके ॥ ३ ॥ बालक मृगोंको मारके तथा अनेक पक्षियोंको मारके स्त्रीयुक्त हुआ तिनको भक्षण करता तब बहुतसा प्रसन्न होता भया ॥ ४ ॥ तिसकी स्त्री महादुष्ट क्रोधिनी और चंचल थी नित्यप्रति परपुरुषसे रत रहा करती

एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ॥
मरणं तस्य वै देवि स्वपुरे सर्पतस्तथा ॥ ६ ॥
पत्नी चैव तदा तस्य दुष्टा वै व्यभिचारिणी ॥
उभौ च नरके यातौ स्वकर्मवशतः प्रिये ॥ ७ ॥
कुम्भीपाके महाघोरे नानानरकयातनाम् ॥
भुक्त्वा बहु सहस्राणि पुनर्जातश्च सूकरः ॥ ८ ॥
योनिं च शूकरीं भुक्त्वा बिडालत्वं पुनः प्रिये ॥
ततो बिडालयोनिं च भुक्त्वा गृध्रस्ततोऽभवत् ॥९॥
पुनः कर्मवशाद्देवि मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥
इह लोके वरारोहे पूर्वकर्मप्रभावतः ॥ १० ॥
मृतवत्सा भवेन्नारी पुत्रश्चैव न जीवति ॥
बहुरोगो भवेद्देवि ज्वरेणैव प्रपीडितः ॥ ११॥

नित्य अपने धर्मकर्मसे वर्जित थी ॥ ५ ॥ हे वरानने ! ऐसे संपूर्ण अवस्था बीत गई फिर वृद्ध हो गया तब हे देवि ! यह अपनेही पुरमें कहीं गमन करता हुआ मर गया ॥ ६ ॥ तिसकी दुष्टा व्यभिचारिणी वह स्त्रीभी मृत्युको प्राप्त हो गई। हे प्रिये ! फिर वे दोनोंही अपने कर्मवशसे नरकमें प्राप्त हो गये ॥ ७ ॥ कुम्भीपाक नामक महाघोर नरकमें अनेक प्रकारकी पीडाको बहुत हजार वर्षोंतक भोगके फिर सूकर होता भया ॥ ८ ॥ हे प्रिये ! शूकरकी योनिको भोगके बिलावयोनि भोगके फिर गीध होता भया ॥ ९ ॥ हे देवि ! पीछे कर्मवशसे मनुष्ययोनिमें इस मृत्युलोकमें उत्पन्न भया है ॥ १० ॥ इसकी स्त्रीके संतान नहीं जीवती है (मृतवत्सा है) पुत्र नहीं जीवता है यह बहुत रोग और

पूर्वजन्मकृतं पापमिह जन्मनि भुज्यते ॥
इह लोके कृतं कर्म जन्मजन्मनि भुज्यते ॥ १२ ॥
अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे मम ॥
वंशगोपालमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ १३ ॥
दशांशहोमः कर्तव्यो विप्राणां भोजनं शतम् ॥
मन्त्रं च संप्रवक्ष्यामि येन पुत्रमवाप्स्यसि ॥१४ ॥
मन्त्रः । ॐ देवकीसुत गोविन्द वासुदेव जगत्पते ॥
देहि मे तनयं कृष्ण त्वामहं शरणं गतः ॥ १५॥
ततो वै स मृगान् कृत्वा मृगबालान् सपक्षिणः ॥
स्वर्णपञ्चपलेनैव मृगान् कृत्वा सबालकान् ॥१६ ॥
रौप्यस्यैवं वरारोहे पक्षिणः पञ्च कारयेत् ॥
पूजनं विधिवत् कृत्वा संप्रार्थ्य परमेश्वरम् ॥ १७ ॥

ज्वरसे पीडित है ॥ ११ ॥ पूर्वजन्ममें किया हुआ पाप इस जन्ममें भोगा जाता है और इस जन्ममें जो कर्म किया है वह अन्य जन्मोंमें भोगा जाता है ॥ १२ ॥ हे पार्वति ! अब इसकी शांति कहेंगे सुन । हे वरानने ! संतानगोपाल मंत्र करके लक्ष जप करवावे ॥ १३ ॥ दशांश होम करवावे सौ ब्राह्मणोंको भोजन करावे अब मंत्रको कहेंगे । जिससे पुत्रकी प्राप्ति होवेगी ॥ १४ ॥ मंत्र । ॐ हे देवकीसुत ! हे गोविंद ! हे वासुदेव ! हे जगत्पते ! मुझको पुत्र दो । हे कृष्ण ! मैं तुम्हारी शरण हूं ॥ १५ ॥ (यह मंत्र संतानगोपालका है) इसके अनंतर वह बच्चोंसमेत मृगोंको और पक्षियोंको बनवावे बच्चोंसहित मृग तो पांच पल सुवर्णका बनवावे ॥ १६ ॥ और हे वरारोहे ! पांच पक्षी चांदीके बनवावे पीछे विधिपूर्वक पूजन कर परमेश्वरकी प्रार्थना करे ॥ १७ ॥

स्रष्टा त्वं सर्वलोकानां सर्वकामप्रदः सताम् ॥
देवदेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल ॥ १८ ॥
त्राहि मां कृपया देव पूर्वकर्मविपाकतः ॥
एवं संपूज्य देवेशं ततो विप्रं प्रपूजयेत् ॥ १९ ॥
सुवर्णेन वरारोहे अश्वादिवाहनेन वै ॥
प्रतिमामर्पयेद्देवि विप्राय ज्ञानरूपिणे ॥ २० ॥
वापिकां कूपखातं च पथि मध्ये वरानने ॥
प्रकरोति यदा देवि तदा पुत्रः प्रजायते ॥
रोगात्प्रमुच्यते देवि जीवेत् पुत्रो न संशयः ॥ २१ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे भरण्याश्चतुर्थ-
चरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

हे देवदेव ! हे जगन्नाथ ! ! हे शरणागतवत्सल ! ! ! तुम सब लोकको रचनेवाले हो और श्रेष्ठ पुरुषोंको सब काम देनेवाले हो ॥ १८ ॥ हे देव ! कृपाकरके पूर्वकर्मके विपाकसे मेरी रक्षा करो ऐसे विष्णु भगवान्का पूजन कर पीछे ब्राह्मणकी पूजा करे ॥१९॥ हे वरारोहे ! सुवर्ण तथा अश्व आदि वाहन करके ब्राह्मणको पूजके फिर ज्ञानरूपी ब्राह्मणके अर्थ मूर्तियोंकोभी दे देवे ॥ २० ॥ हे वरानने ! जब मार्गमें बावडी बनवावे अथवा कुवा खुदवावे तब पुत्र उत्पन्न होवे । हे देवि ! रोगसे छूटे और इसका पुत्र जीवे इसमें संदेह नहीं ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे भरण्याश्चतु-
र्थचरण० नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अथ द्वादशोऽध्यायः ।



॥ ईश्वर उवाच ॥

कृत्तिकायां वरारोहे प्रथमे चरणे तथा ॥
यो जायेत नरो देवि तस्य वक्ष्ये शुभाशुभम् ॥ १ ॥
ईशानेऽपि महादेवि कोसलापुरतोऽनघे ॥
राजपुत्रोऽवसत्कश्चिन्नगरे गूढसंज्ञके ॥ २ ॥
नामतो अहिशर्मेति तस्य पत्नी कला शुभा ॥
धनधान्यसमायुक्तो रूपवान् मन्मथो यथा ॥ ३ ॥
याति चाखेटकं नित्यं मृगीं हत्वा च गार्भिणीम् ॥
प्रत्यहं मृगमांसेन पोषयेत्स्वतनुं तथा ॥ ४ ॥
शरीरे वृद्धता जाता दया तस्य न चाभवत् ॥
ततो वै मरणाद्देवि सती भार्या ततोऽभवत् ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं–हे देवि ! कृत्तिकानक्षत्रके प्रथम चरणमें जो जन्मता है । हे वरारोहे ! तिस मनुष्यके शुभाशुभको कहेंगे ॥ १ ॥ हे महादेवि ! हे अनघे !! अयोध्यापुरीसे ईशानकी तरफ गूढनामवाले नगरमें ॥ २ ॥ अहिशर्मा नामवाला ब्राह्मण धनधान्यसे युक्त और कामदेवके समान रूपवाला था उसकी स्त्री (शुभा) कलानामवाली थी ॥ ३ ॥ वह शिकारको नित्य जाता तब एक दिन गर्भिणी मृगीको मारके और दिन दिनके प्रति मृगोंके मांससे अपने शरीरको पोषण करता ॥ ४ ॥ फिर तिसको वृद्ध अवस्था प्राप्त हुई और तिसके दया तबभी नहीं होती भई तिससे पीछे वह मृत्युको प्राप्त हुआ तब उसकी स्त्री तिसके संग अग्निमें सती हो

सत्यलोकं गतस्तेन भार्यायाः सुकृतेन तु ॥
भुक्तं कल्पमितं पुण्यं सत्यलोके वरानने ॥ ६ ॥
पुनः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वमुपागतः ॥
पत्न्या सह ततो देवि कुले महति पूजिते ॥ ७ ॥
पूर्वजन्मविपाकेन मृतवत्सत्वमाप्नुयात् ॥
मृगीं सगर्भां हतवान् पूर्वजन्मनि सुव्रते ॥ ८ ॥
तेन कर्मविपाकेन मर्त्यलोके ह्यपुत्रकः ॥
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रः प्रजायते ॥ ९ ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां लक्षमेकं जपं तथा ॥
दशांशहोमः कर्त्तव्यो विप्राणां भोजनं ततः ॥ १० ॥
सौवर्णेन मृगीं कृत्वा मृगबालं तथैव च ॥
पूजयित्वा विधानेन कपिलां च ततः प्रिये ॥ ११ ॥

गई ॥ ५ ॥ तिससे वह स्त्रीके सुकृतसे सत्यलोकको जाता भया और हे वरानने ! एक कल्पतक सत्यलोकमें पुण्य भोगा ॥६॥ फिर पुण्य पूरा हो गया तब मनुष्य शरीरमें प्राप्त हुआ । हे देवि ! स्त्रीसहित हो महान् पूज्य कुलमें जन्मा है ॥७॥ पूर्वकर्मविपाकसे (मृतवत्सत्व) इसकी संतान नहीं जीवती है । हे सुव्रते ! वह गर्भिणी मृगीको मारता भया ॥ ८ ॥ तिस कर्मविपाकसे मृत्युलोकमें पुत्ररहित भया है अब तिसकी शांतिको कहेंगे जिससे संतान होवेगी ॥ ९ ॥ गायत्रीमंत्र और " जातवेदसे सुनवाम० " इस मंत्रकरके लक्ष जप करवावे पीछे दशांश होम करवावे फिर ब्राह्मणको भोजन करवावे ॥ १० ॥ सुवर्णमृगी और मृगीके बच्चे बना तिनका विधिपूर्वक पूजन करे । हे प्रिये ! पीछे कपिला गौको ॥ ११ ॥

प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय सुतेजसे ॥
हरिवंशस्य श्रवणं चण्डीपाठं शिवार्चनम् ॥ १२ ॥
एवं कृत्वा विधानेन शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥
कन्यका न भवेत्तस्य गर्भपातो न जायते ॥ १३ ॥
रोगात्प्रमुच्यते रोगी सर्वकामः प्रजायते ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे कृत्तिकाप्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अथ त्रयोदशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

नराणां पुण्यशीलानामिह जन्मसमुद्भवम् ॥
सुखं वक्ष्याम्यहं देवि पूर्वकर्मफलं यतः ॥ १ ॥
येन दत्तं पुरा दानं गोसुवर्णगजादिकम् ॥
तत्फलेन महादेवि इह तस्मात् सुखं भवेत् ॥ २ ॥

वेदको जाननेवाले सुंदर तेजवाले विद्वान् ब्राह्मणके अर्थ दे देवे हरिवंशको सुने दुर्गापाठ करे और शिवपूजन करवावे ॥ १२ ॥ ऐसे विधानसे करे तो शीघ्रही पुत्र उत्पन्न होवे कन्या उत्पन्न न हो और गर्भपातभी न होवे ॥ १३ ॥ रोगी रोगसे छूट जावे सब कामना सिद्ध हो जावे ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मवि० कृत्तिका० प्रथमचरणप्राय० श्चि० नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

शिवजी कहते हैं–हे देवि ! पुण्यात्मा मनुष्योंके इस जन्ममें पूर्वकर्मके प्रभावसे सुखकी उत्पत्ति होती है उसको कहते हैं ॥ १ ॥ जिसने पूर्वजन्ममें गौ, सुवर्ण, हाथी आदिका दान किया हो । हे

शरीरे जन्मतः कान्तिर्लक्ष्मीवान् गुणवानपि ॥
सौख्यं प्रभुज्यते नित्यं पुत्रतो धनतस्तथा ॥ ३ ॥
न रोगो जायते देवि दुःखं नैव कदाचन ॥
इह लोके सुखं भुक्त्वा कीर्तिमान् सुखमेधते ॥ ४ ॥
अथ वक्ष्याम्यहं देवि नक्षत्रे कृत्तिकाह्वये ॥
द्वितीयचरणे देवि पूर्वं यत् फलमुच्यते ॥ ५ ॥
कान्यकुब्जो द्विजः कश्चिदिन्द्रशर्मेति नामतः ॥
पत्नी रुद्रमती देवि कुशीला कलहप्रिया ॥ ६ ॥
वेदपाठरतो नित्यं षडङ्गस्य च पाठकः ॥
एकदा तत्र वै देशे कश्चित् क्षत्री नराधिपः ॥ ७ ॥
मरणे तस्य वै याते तद्विप्रस्य निमन्त्रणम् ॥
भुक्तं तेन तदा देवि क्षत्रियस्य क्रियासु च ॥ ८ ॥

महादेवि ! इस जन्ममें तिस दानसे सुख होता है ॥ २ ॥ जन्मसेही शरीरमें कांति रहती है । लक्ष्मीवान् और गुणवान् होता है नित्यप्राति पुत्रोंके अथवा धनके सुखको भोगता है ॥ ३ ॥ हे देवि ! रोग नहीं होता है और दुःख कभी नहीं होता है इस जन्ममें सुख भोगके कीर्तिमान् हो सुखकी वृद्धिको प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ हे देवि ! अब कृत्तिकानक्षत्रके दूसरे चरणमें जन्मनेवालेने जो पहले कर्म किया है तिसके फलको कहते हैं ॥ ५ ॥ कान्यकुब्ज कोई इन्द्रशर्मा नामवाला ब्राह्मण था । हे देवि ! इसकी स्त्री रुद्रमती नामवाली दुष्टस्वभाववाली कलह करनेवाली थी ॥ ६ ॥ यह ब्राह्मण वेदपाठ और षडंगके पाठ करनेमें तत्पर रहता था एक समय तिस देशमें कोई क्षत्रिय राजा आता भया ॥ ७ ॥ तिस राजाकी मृत्यु हो गई तब तिस ब्राह्मणको निमंत्रण भया । हे देवि ! तहां तिस

गृहीतं तस्य वै दानं शय्यां चैव गजादिकम् ॥
सर्वं गृह्य गृहं गत्वा भुक्तं बहुदिनं प्रिये ॥ ९ ॥
ततो बहुगते काले तस्य विप्रस्य पञ्चता ॥
स यातो यमलोके वै नरके च सुदारुणे ॥ १० ॥
भुक्तं स्वकर्मजं दुःखं युगमेकं वरानने ॥
गजव्याघ्रकृमेर्योनिं ततो भुङ्क्ते पृथक् पृथक् ॥ ११ ॥
मनुष्यत्वं ततः प्राप्तः पूर्वकर्मविपाकतः ॥
पुत्रो न जायते देवि कन्यका विविधास्तथा ॥ १२॥
मृतवत्सा भवेन्नारी रोगाश्च विविधाः प्रिये ॥
शान्ति तस्य प्रवक्ष्यामि यतः पुत्रमवाप्स्यते ॥१३॥
गायत्रीलक्षजाप्येन त्र्यम्बकेण तथा प्रिये ॥
होमं च कारयामास षडंशं दानमेव च ॥ १४ ॥

क्षत्रियकी क्रियामें तिस ब्राह्मणने भोजन किया ॥ ८ ॥ और शय्या हस्ती आदि दान ग्रहण किया । हे प्रिये ! संपूर्ण दान ग्रहण करके घरमें जाके बहुत दिनतक भोगा ॥ ९ ॥ फिर बहुतसा काल बीत चुका तब तिस ब्राह्मणकी मृत्यु हुई फिर वह धर्मराजके लोकमें प्राप्त हो दारुण नरकमें पडता भया ॥ १० ॥ हे वरानने ! एक युगतक अपने कर्मका दुःख भोगा पीछे हस्ती, व्याघ्र, कृमि इन योनियोंको अलग २ भोगके ॥ ११ ॥ फिर पूर्वकर्मके प्रभावसे मनुष्ययोनिको प्राप्त भया है । हे देवि ! इसके पुत्र नहीं होता है अथवा अनेक कन्याही जन्मती हैं ॥ १२ ॥ अथवा इसकी स्त्रीके संतान नहीं जीती है अनेक प्रकारके रोग रहते हैं । हे प्रिये ! अब इसकी शांतिको कहेंगे जिससे पुत्रकी प्राप्ति होगी ॥ १३ ॥ हे प्रिये ! गायत्रीमंत्र तथा " त्र्यंबकं यजामहे० " इस मंत्रकरके लक्ष

दशवर्णाश्च गा दद्याद्विधिवद्ब्राह्मणाय वै ॥
भोजयेच्छतसंख्यं च ब्राह्मणं वेदपारगम् ॥ १५ ॥
एवं कृतेन भो देवि पुत्रश्चैव प्रजायते ॥
रोगाणां च निवृत्तिः स्यात् पूर्वपापक्षयो भवेत् ॥ १६ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहि० पार्वतीहरसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अथ चतुर्दशोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

तृतीयं तस्य वै देवि चरणं वदतः शृणु ॥
कान्यकुब्जकुले कश्चिन्नगरे सूर्यसंज्ञके ॥ १ ॥
उद्योतशर्मा विख्यातस्तस्य स्त्री गिरिजाभवत् ॥
वेदपाठरतो नित्यं दारिद्र्येणैव पीडितः ॥ २ ॥

जप करावे दशांश होम करावे घरके द्रव्यसे षडंश छठे हिस्से धनका दान करे ॥ १४ ॥ और विधिपूर्वक दश प्रकारके रंगोंवाली गौओंको ब्राह्मणके अर्थ देवे और वेदपाठी सौ ब्राह्मणोंको भोजन करवावे ॥ १५ ॥ हे देवि ! ऐसे करनेसे पुत्र होता है रोगोंकी निवृत्ति हो और पूर्वजन्मके पाप नष्ट होवें ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! अब कृत्तिकानक्षत्रके तीसरे चरणको सुन सूर्यपुरमें कान्यकुब्जकुलमें कोई उद्योतशर्मा नामवाला ब्राह्मण भया तिसकी स्त्री गिरिजा नामवाली होती भई यह ब्राह्मण

कर्कशा भामिनी तस्य निष्ठुरं वदती स्मृता ॥
एकदा सूर्यग्रहणे तैलकारस्तदागतः ॥ ३ ॥
गङ्गामध्ये ततो दानं तस्मै विप्राय वै शिवे ॥
प्रददौ लक्षसंख्यां वै स्वर्णमुद्रां तु दक्षिणाम् ॥ ४ ॥
प्रतिगृह्य ततो दानं गृहं गत्वा द्विजस्तदा ॥
व्ययं करोति स्म तदा भार्यापुत्रेण चैव हि ॥ ५ ॥
वेदपाठं ततस्त्यक्त्वा प्रत्यहं ससुखं प्रिये ॥
मरणं वृद्धसमये गृहे शय्योपरि स्थिते ॥ ६ ॥
स्वर्णमध्ये च दानं वै न दत्तं गिरिनन्दिनि ॥
स गतो नरके घोरे यमराजेन प्रेरितः ॥ ७ ॥
भुङ्क्ते नरकजं दुःखं स्त्रीपुत्रेण च संयुतः ॥
युगमेकं वरारोहे प्रेतत्वं काकतां गतः ॥ ८ ॥

नित्यप्रति वेदपाठ करनेमें रत था और दारिद्र्यसे पीडित था ॥ १ ॥ २ ॥ इसकी स्त्री कर्कशा नामवाली थी इसको क्रूरवचन बोलती एक समय सूर्यग्रहणमें कोई तैलकार (तेली) तहां आता भया ॥ ३ ॥ हे शिवे ! पीछे तिस तैलकारने इस ब्राह्मणके अर्थ गंगाजीके मध्यमें लाख मोहरोंका दान दिया ॥ ४ ॥ तब वह ब्राह्मण तिस दानको ग्रहण कर अपने घरमें जाके दिन २ प्रति स्त्रीपुत्रसहित हुआ खर्चता भया ॥ ५ ॥ हे शिवे ! पीछे वह वेदपाठको त्यागके दिन २ प्रति सुखको भोगता भया फिर वृद्धअवस्थामें घरमें खट्वापर स्थित हुएकी इसकी मृत्यु हो गई ॥ ६ ॥ हे गिरिजे ! इसने सुवर्णमोहरसे कुछभी दान न किया था इसलिये यह यमराजसे प्रेरा हुआ घोर नरकमें जाता भया ॥ ७ ॥ हे वरारोहे ! स्त्रीपुत्रसंयुक्त हुआ तहां नरकके दुःखको एक युगतक भोगता

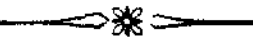
ततः शृगालयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः ॥
पूर्वजन्मकृतं कर्म इह लोके प्रभुज्यते ॥ ९ ॥
पाठयामास वै वेदान् ब्राह्मणेभ्यो वरानने ॥
तत्संचितफलाद्देवि महदैश्वर्यमाप्नुयात् ॥ १० ॥
भार्या मृता ततः पुत्रो द्वितीया च विवाहिता ॥
शरीरे बहवो रोगाः सुखं तस्य न जायते ॥ ११ ॥
वृद्धे सति वरारोहे पुत्रः शत्रुर्भवेदिति ॥
मृतवत्सा भवेन्नारी पूर्वजन्मविपाकतः ॥ १२ ॥
तस्य पुण्यमहं वक्ष्ये यतो रोगो निवर्तते ॥
पुनः पुत्रो भवेद्देवि कन्यका नैव जायते ॥ १३ ॥
जातवेदादिमन्त्रेण जपं वै कारयेद्बुधः ॥
लक्षत्रयं प्रयत्नेन ततो होमं तिलादिभिः ॥ १४ ॥

भया फिर काग भया ॥ ८ ॥ पीछे गीदडकी योनिको प्राप्त हो फिर मनुष्य भया है क्यों कि, पूर्वजन्ममें किया हुआ कर्म इस लोकमें भोगा जाता है ॥ ९ ॥ हे देवि ! यह जो ब्राह्मणोंको वेद पढाता भया तिस कर्मफलसे महान् ऐश्वर्यवान् भया है ॥ १० ॥ स्त्री मर गई फिर पुत्र मर गया पीछे दूसरी स्त्री विवाही है इसके शरीरमें बहुतसे रोग हैं सुख नहीं होता है ॥ ११ ॥ हे वरारोहे ! वृद्ध अवस्थामें इसका पुत्रही अत्यंत शत्रु होवे अथवा पूर्वजन्मके कर्मसे इसकी स्त्रीके संतानही नहीं जीवे ॥ १२ ॥ इसके पुण्यको मैं कहूंगा जिससे रोग निवृत्त हो फिर पुत्र उत्पन्न होवे । हे देवि ! कन्या नहीं होगी ॥ १३ ॥ " जातवेदसे सुनवाम " इस मंत्रकरके बुद्धिमान् जन यत्नसे तीन लक्ष जप करावे पीछे तिल आदिकोंसे

चतुरस्रे शुभे कुण्डे हरिवंशश्रवणं ततः ॥
भूदानं विधिवत्कुर्याच्छायां पात्राय दापयेत् ॥ १५॥
एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भविष्यति ॥
पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

अथ पञ्चदशोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

कान्यकुब्जो द्विजः कश्चिन्नर्मदादक्षिणे तटे ॥
माहिष्मत्यां वसत्येको द्विजः परमवैष्णवः ॥ १ ॥
नामतो योधशर्मेति तस्य भार्या तु दानवी ॥
प्रत्यहं वैश्यवृत्तिस्तु विक्रयं चाकरोत्सदा ॥ २ ॥

होम करवावे ॥ १४ ॥ चौकुंटे शुभ कुंडमें होम कराना, हरिवंशपुराण सुने, पृथ्वीका दान करे और सत्पात्र ब्राह्मणके अर्थ विधिपूर्वक शय्याका दान देवे ॥ १५ ॥ ऐसे करनेसे निश्चय रोगका नाश होवेगा । हे देवि ! पुत्रभी उत्पन्न होवेगा इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां कृत्तिका० तृतीयचर० नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

शिवजी कहते हैं—नर्मदा नदीके दक्षिण किनारेपर माहिष्मती नाम नगरीमें परमवैष्णव कोई ब्राह्मण बसता था ॥ १ ॥ योधशर्मा नामवाला था तिसकी स्त्री दानवी नामवाली थी दिन २ प्रति

तत्र वैश्य उवासैको धनधान्यसमन्वितः ॥
वैश्यतस्तेन विप्रेण स्वर्णं नीतमृणं बहु ॥३॥
ततो बहुतिथे काले स विप्रो मृत्युमागतः ॥
ऋणं तस्मै न दत्तं वै वैश्याय तु स्वकर्मणे ॥ ४ ॥
मरणे सति विप्रस्तु रौरवं नरकं गतः ॥
वैश्यकर्म कृतं तेन स्वकर्म परिमुच्यते ॥ ५ ॥
विंशद्वर्षसहस्राणि यमलोके वसत्यसौ ॥
नरकान्निःसृतो देवि यातो वृषभशूकरौ ॥ ६ ॥
योनिद्वयफलं भुक्त्वा मनुष्यत्वमवाप्नुयात् ॥
धनधान्यसमायुक्तस्तत्पुण्यस्य प्रभावतः ॥ ७ ॥
ऋणसंबन्धतो देवि वैश्यः पुत्रत्वमागतः ॥
प्रत्यहं तस्य वै द्रव्यं व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ ८ ॥

वैश्यकी वृत्ति सदा बेचनेका व्यवहार करता था ॥ २ ॥ तहां धनाढ्य एक वैश्य वसता भया तिस वैश्यके पाससे उस ब्राह्मणने बहुतसा सुवर्ण कर्जामें लिया ॥ ३ ॥ फिर बहुतसा काल बीत चुका तब वह ब्राह्मण मृत्युको प्राप्त हो गया और अपने कर्म करनेवाले तिस वैश्यके अर्थ वह ऋण (कर्जाका धन) नहीं दिया ॥ ४ ॥ वह ब्राह्मण मर गया तब रौरवनरकमें प्राप्त भया क्योंकि इसने वैश्यकर्म किया और अपने धर्मसे भ्रष्ट रहा था ॥ ५ ॥ वह वीस हजार वर्षोंतक धर्मराजके लोकमें वसता भया । हे देवि ! नरकसे निकसके बैल और शूकरकी योनिको प्राप्त भया ॥ ६ ॥ इन दोनों योनियोंके फलको भोगके मनुष्य भया है तिस पुण्यके प्रभावसे धनधान्यसे संयुक्त है ॥ ७ ॥ हे देवि ! ऋणके संबंधसे वैश्य पुत्र भया है दिन २ प्रति तिसके द्रव्यको खर्च करके ॥ ८ ॥

मद्यवेश्याप्रदानेन धनं सर्वं व्ययं कृतम् ॥
यदा पुत्रः समुत्पन्नो युवा तस्य भवेत्प्रिये ॥ ९ ॥
तदा मृत्युमवाप्नोति शोकं दत्त्वा तयोस्तदा ॥
पुनः पुत्रो न जातो वै पूर्वजन्मविपाकतः ॥ १० ॥
प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ॥
गायत्रीलक्षजाप्येन तदर्थं वाटिकां पथि ॥ ११ ॥
कूपं प्रयत्नतः कुर्यात्तडागं विधिपूर्वकम् ॥
होमं वै कारयेच्चैव विधिपूर्वं वरानने ॥ १२ ॥
पलपञ्चसुवर्णस्य दानं दद्याद्विशेषतः ॥
दशवर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताः सहाम्बराः ॥ १३ ॥
भोजयेच्छतविप्रांस्तु यथाशक्ति सदक्षिणान् ॥
एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भवेदनु ॥ १४ ॥

मदिरापान और वेश्याको देनेसे संपूर्ण धन खर्च दिया है । हे प्रिये ! जब उत्पन्न हुआ यह पुत्र जवान भया ॥ ९ ॥ तब इन दोनों स्त्रीपुरुषोंको शोक देके मर गया है पूर्वजन्मके विपाकसे फिर इसके पुत्र नहीं भया है ॥ १० ॥ पूर्वपापकी शुद्धिके वास्ते प्रायश्चित्त कहेंगे गायत्रीका लक्ष जप करावे पापकी शुद्धिके वास्ते मार्गमें धर्मशाला बनवावे ॥ ११ ॥ यत्नसे विधिपूर्वक कुवा अथवा तालाव बनवावे । हे वरानने ! विधिपूर्वक होम करवावे ॥ १२ ॥ विशेषकरके पांच पल(बीस तोले) सुवर्णका दान करे दश प्रकारकी वर्णोंवाली सुवर्ण और वस्त्रोंसे युक्त की हुई गौओंका दान करे ॥ १३ ॥ और सौ (१००) ब्राह्मणको भोजन करवावे शक्तिके अनुसार दक्षिणा देवे ऐसे करनेसे वातरोगका नाश होगा इसमें संदेह नहीं

पुत्रपौत्रा विवर्द्धन्ते मम वाक्यं न चान्यथा ॥ १५ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे कृत्तिकानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अथ षोडशोऽध्यायः ।

॥ महादेव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि ब्रह्मनक्षत्रजं फलम् ॥
रोहिण्याः प्रथमे पादे यस्य जन्म च जायते ॥ १ ॥
तस्य कर्म पुरा देवि संचितं संब्रवीम्यहम् ॥
अन्तर्वेद्यां द्विजः कश्चिद्भोपनामावसत्प्रिये ॥ २ ॥
ब्रह्मकर्मविहीनश्च चौरकर्मरतः सदा ॥
सार्द्धं चौरेण भो देवि बहु द्रव्यमुपार्जितम् ॥ ३ ॥
परस्त्रीलम्पटो देवि स्वां भार्यां परिमुच्य च ॥
एवं बहुगते काले कालवश्यस्ततोऽभवत् ॥ ४ ॥

॥ १४ ॥ पुत्र पौत्र बढेंगे यह मेरा वाक्य अन्यथा नहीं है ॥१५॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां कृत्तिकानक्षत्रस्य चतुर्थचरणे प्रायश्चित्तकथनं नाम पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

शिवजी कहते हैं-अब रोहिणी नक्षत्रमें जन्मनेवालेके फलको कहेंगे रोहिणीके प्रथमचरणमें जिसका जन्म हो ॥ १ ॥ हे देवि ! तिसके पूर्वसंचित कर्मको मैं कहता हूं । हे प्रिये ! गंगायमुनाके मध्यदेशमें कोई भोपनामवाला ब्राह्मण वसता था ॥ २ ॥ हे देवि ! वह ब्राह्मणके कर्मसे विहीन था और सदा चोरीके काममें तत्पर रहता । हे देवि ! उसने चोरोंके संग बहुतसा द्रव्य इकट्ठा किया ॥ ३ ॥ हे देवि ! यह अपनी स्त्रीको त्यागके अन्य स्त्रीमें अभि-

यमः कर्मप्रभावेण नरके नाम कर्दमे ॥
वासयामास भो देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥
नरकान्निःसृतो देवि कुक्कुटत्वं प्रजायते ॥
ततो यातो महादेवि नरयोनिं च दुर्लभाम् ॥ ६ ॥
पाण्डुरोगेण संयुक्तः पुत्रो नैव प्रजायते ॥
वेश्याः कन्याः प्रजायन्ते पुत्रस्य मरणं भवेत् ॥ ७ ॥
तस्योपदानं वक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु मे प्रिये ॥
ॐ नमः शिवाय मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥८॥
पार्थिवं तिलपिष्टेन गोमयेन तथा प्रिये ॥
पूजयामास विधिवद्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ ९ ॥
होमं वै कारयेद्देवि षडंशं दक्षिणां ततः ॥
आचार्याय सुवर्णं च पूर्वपापविशुद्धये ॥ १० ॥

लाष रखता ऐसे बहुतसा काल बीत चुका तब कालके वश होता भया ॥ ४ ॥ हे देवि ! धर्मराज कर्मके प्रवाहसे इसे कर्दमनाम नरकमें साठ हजार वर्षतक वास करता भया ॥ ५ ॥ हे देवि ! नरकसे निकसके मुरगा भया । हे महादेवि ! पीछे दुर्लभ इस मनुष्ययोनिको प्राप्त भया है ॥ ६ ॥ पांडुरोग, पीलियारोगसे युक्त है इसके पुत्र नहीं होता है और जिन वेश्याओंसे संग किया था, वे वेश्या इसके पुत्री होती हैं पुत्र होके मर जाता है ॥ ७ ॥ अब इसके उपायको कहेंगे । हे प्रिये ! सो सब सुनो " ॐ नमः शिवाय " मंत्रका लक्ष जाप्य करावे ॥ ८ ॥ हे प्रिये ! तिलकी पीठीसे अथवा गोबरसे पार्थिव शिव बनायके पीछे विधिपूर्वक भक्तियुक्त चित्त करके उसका पूजन करे ॥ ९ ॥ हे देवि ! होम करावे पीछे छठे हिस्से घरके द्रव्यका दान करे आचार्यके अर्थ पूर्वपापकी शुद्धिके

कूपं खातं ततो देवि वाटिकां चैव कारयेत् ॥
एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भवेद्ध्रुवम् ॥ ११ ॥
कन्यका न भवेद्देवि पुत्रश्चैव प्रजायते ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणीनक्षत्रस्य प्रथमचरणकथनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अथ सप्तदशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

द्वितीयचरणं देवि रोहिण्याः शृणु विस्तरम् ॥
गङ्गाया उत्तरे कूले पुरं वैमानिकं शुभम् ॥ १ ॥
वासुदेवश्च नाम्ना हि ब्राह्मणो वेदपारगः ॥
लीलावती पवित्रा च तस्य पत्नी शुभा तथा ॥ २ ॥

लिये सुवर्णका दान देवे ॥ १० ॥ हे देवि ! कुवा खुदवावे धर्मशाला बनवावे ऐसे करनेसे निश्चय वातरोगका नाश होवे ॥ ११ ॥ हे देवि ! कन्या न होवे पुत्र होवे जिस स्त्रीके संतान नहीं जीती हो वह दीर्घायुवाले पुत्रको जने ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणी० प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! रोहिणीके दूसरे चरणको विस्तारपूर्वक सुनो गङ्गाके उत्तरकिनारेपर सुन्दर वैमानिक नामवाला पुर था ॥ १ ॥ तहां वासुदेवनामक वेदपाठी ब्राह्मण था उसकी स्त्री

१ कर्म.

युवती रूपसंपन्ना स्वैरिणी च सदा प्रिये ॥
बहु द्रव्यं तया लब्धं परपुंसप्रसंगतः ॥ ३ ॥
पापादुपार्जितं द्रव्यं भुज्यते पतिना सह ॥
गङ्गायां मरणं तस्य विप्रस्य भार्यया सह ॥ ४ ॥
स्वर्गवासो हि दम्पत्योः षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके वरानने ॥ ५ ॥
धनधान्यसमायुक्तो धर्मे मतिरथाधिका ॥
पुत्राश्च बहवस्तेषां मरणं चैव जायते ॥ ६ ॥
कन्यका विविधास्तासां मृत्युश्चैव प्रजायते ॥
पुनश्च तस्य हानिश्च बहुरोगः प्रजायते ॥ ७ ॥
तस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥
त्र्यम्बकेति च मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ ८ ॥

पवित्र रहनेवाली सुन्दर लीलावती थी ॥ २ ॥ जवान और रूपयौवनसे युक्त थी सदा इच्छापूर्वक विचरती हे प्रिये ! तिसने परपुरुषके संगसे बहुतसा द्रव्य संचित किया ॥ ३ ॥ पापसे संचित किया हुआ द्रव्य पतिके संग भोगा फिर स्त्रीसहित तिस ब्राह्मणका मरना गङ्गाजीपर भया ॥ ४ ॥ इसलिये साठ हजार वर्षोंतक स्त्रीपुरुषका स्वर्गमें वास रहा । हे वरानने ! पीछे पुण्य क्षीण हो गया तब मृत्युलोकमें उत्पन्न भया ॥ ५ ॥ धनधान्यसे समायुक्त धर्ममें अधिक बुद्धि रखनेवाला भया है बहुतसे पुत्र भये उनका मरण हो गया ॥ ६ ॥ अनेक कन्या भई उनकीभी मृत्यु हो गई फिर इसके हानि होती है और बहुतसा रोग है ॥ ७ ॥ इसने जो पूर्वजन्ममें किया है तिसकी शांतिको कहेंगे। त्र्यम्बकेति

देवस्य प्रतिमां कृत्वा पूजयेच्चैव शास्त्रतः ॥
सुवर्णस्य शिवं कुर्यात् पलपञ्चप्रमाणकम् ॥ ९ ॥
धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्मन्त्रेणानेन पूजयेत् ॥ ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः हराय नमः इति प्रतिमास्थापनम् ॥ रौप्यपात्रे ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः महेश्वराय नमः ॥ इति धूपकरणानि संगृह्य स्थापयेत् ॥ ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः पिनाकधृते नमः इति स्पृश्यावाहनं च ॥ आवाहये महादेव देवदेव सनातन ॥ इमां पूजां गृहाण त्वं मम पापं व्यपोहतु ॥ ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं सोहं शङ्करस्य सर्वेन्द्रियवाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राण इहागत्य इह जीवस्थिति सुखं चिरं तिष्ठन्तु इति प्राणप्र-

---

इस मंत्रका लक्ष जप करावे ॥ ८ ॥ महादेवकी मूर्ति बनाकर शास्त्रके अनुसार पूजन करे और पांच पल प्रमाण सोनेका शिव बनवावे ॥ ९ ॥ धूप, दीप, नैवेद्य इत्यादिकोंकरके इस मंत्रसे पूजे ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः हरके अर्थ नमस्कार है ऐसे कहके रूपेके पात्रमें मूर्तिको स्थापित करे ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः महेश्वरके अर्थ नमस्कार है ऐसे कह धूपपात्रको उठाके स्थापन करे ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः पिनाकधारीको नमस्कार है ऐसे स्पर्श करके आवाहन करे । हे देवतोंके देव महादेव सनातन ! तुम इस पूजाको ग्रहण करो मेरे पापको दूर करो । फिर ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं सोहं शंकरस्य सर्वेंद्रियवाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राण इहागत्य इह जीवस्थिर्ति सुखं चिरं तिष्ठंतु ऐसे उच्चारण कर प्राणप्रतिष्ठा कर शिवजीका ध्यान करता हुआ पूजन करे ॥ ॐ ह्रौं ह्रीं जूं सः पशुपतये

तिष्ठां विधाय शिवं ध्यायन् पूजयेत् ॥ ॐ हौं ह्रीं जूं सः पशुपतये नमः इति पंचामृतेन स्नानम् ॥ ॐ हौं ह्रीं जूं सः शिवाय नमः इति चन्दनादिभिः पूजनम् ॥ ॐ हौं ह्रीं जूं सः महादेवाय नमः ॥ इति विसर्जनम् ॥

गोदानं च ततः कुर्यात्कृष्णां च कपिलां ततः ॥
विप्राय वेदविदुषे सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥ १० ॥
प्रदक्षिणां ततः कुर्याद्विप्रस्येशानरूपिणः ॥
शतसंख्यद्विजांश्चैव भोजयित्वा विसर्जयेत् ॥ ११ ॥
प्रयागे मकरे माघे पत्न्या सह वरानने ॥
स्नानं कुर्याच्च भो देवि व्रतमेकादशीं चरेत् ॥ १२ ॥
एवं कृते न संदेहो रोगनाशश्च जायते ॥
पुत्रं चापि लभेद्देवि चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १३ ॥

नमः ऐसे कहके पंचामृतसे स्नान करावे ॥ ॐ हौं ह्रीं जूं सः इस मंत्रसे चंदनादिको करके पुजा करे ॐ हौं ह्रीं जूं सः महादेवाय नमः ऐसे कहके विसर्जन करे फिर गोदान करे काली अथवा कपिला गौको वेदपाठी ब्राह्मणके अर्थ देवे सुवर्णकी दक्षिणा देवे पीछे शिवरूपी ब्राह्मणकी प्रदक्षिणा करे सौ (१००) ब्राह्मणोंको भोजन करवाके उनका विसर्जन करे ॥ १० ॥ ११ ॥ हे वरानने ! मकरसंक्रांतियुक्त माघ महीनेमें प्रयागजीमें स्नान करे । हे देवि ! एकादशीका व्रत करे ॥१२॥ ऐसे करनेसे निःसंदेह रोगका नाश होता है । हे देवि ! बहुत कालतक जीनेवाले पुत्रको प्राप्त होता है॥१३॥

यद्येवं न प्रकुरुते सप्तजन्मस्वपुत्रकः ॥ १४ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अथाष्टादशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ।

गोमत्या उत्तरे कूले क्रोशद्वयप्रमाणतः ॥
विष्णुदासेति विख्यातो देवीपुत्रो वरानने ॥ १ ॥
शंकरे वै पुरे रम्ये तस्य भार्या च सुन्दरी ॥
कर्कशा कुलटा सा वै पतिविद्वेषकारिणी ॥ २ ॥
शुश्रूषां कुरुते नैव श्वश्रूणां च वरानने ॥
स्वधर्मनिरतो नित्यं शिवभक्तिपरायणः ॥ ३ ॥

जो यदि ऐसे नहीं करे तो सात जन्मतक पुत्र नहीं होवे ॥ १४ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वतीह० रोहिणी० द्वितीयचरणप्राय० नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

शिवजी कहते हैं-हे वरानने ! गोमती नदीके उत्त० तटपर दो कोसपर विष्णुदास नामसे विख्यात देवीपुत्र संज्ञक मनुष्यजाति था ॥ १ ॥ रमणीक शंकर पुरमें था और तिसकी स्त्री सुन्दरी नामवाली कर्कशा और जारिणी थी सो वह पतिसे विद्वेष करती ॥ २ ॥ हे वरानने ! अपनी सासूकी सेवा नहीं करती और यह विष्णुदास नित्य अपने धर्ममें तत्पर शिवजीकी भक्तिमें निपुण रहता था

क्वापि वै सोऽकरोचैव विप्राणां चैव सेवकः ॥
पित्रोश्च परमो दासः सदा च प्रियभाषणः ॥ ४ ॥
एतस्मिन्नगरे देवि व्रती कश्चित्समागतः ॥
भिक्षार्थमागतो द्वारे तया भिक्षा ददे न च ॥ ५ ॥
अपभ्रंशमवोचत्सा भिक्षुकं प्रति सुन्दरी ॥
विष्णुदासो गृहे नासीत्तद्दिने कुत्रचिद्गतः ॥ ६ ॥
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युर्बभूव ह ॥
भक्तत्वान् मम भो देवि यक्षलोके गतः स वै ॥ ७ ॥
त्रिंशद्वर्षसहस्राणि यक्षेण सह भोगवान् ॥
तस्य भार्या मृता क्रूरा श्वश्रूणां दुःखदायिनी ॥ ८ ॥
सा गता नरके घोरे रौरवे नाम्नि भामिनी ॥
भुक्त्वा नरकजं दुःखं पुनर्व्याघ्री बभूव ह ॥ ९ ॥

॥ ३ ॥ खेती करता भया ब्राह्मणोंका सेवक और मातापिताका परमदास तथा प्रिय बोलनेवाला था ॥४॥ हे देवि ! इस नगरमें कोई ब्रह्मचारी भिक्षाके वास्ते तिस विष्णुदासके द्वारपर आ गया तब इसकी स्त्रीने भिक्षा नहीं दी ॥ ५ ॥ वह सुन्दरी नामक स्त्री तिस भिक्षुकको दुष्ट वचन बोलती भई उस दिन विष्णुदास घरपर नहीं था कहीं गया था ॥ ६ ॥ ऐसे बहुतसा काल बीत चुका तब उस विष्णुदासकी मृत्यु होती भई । हे देवि ! वह मेरा भक्त था इसलिये यक्षलोकमें प्राप्त भया ॥ ७ ॥ तीस हजार वर्षोंतक यक्ष अर्थात् कुबेरके लोकमें भोग भोगता भया फिर सास श्वशुरके दुःख देनेवाली वह तिसकी स्त्रीभी मरती भई ॥ ८ ॥ हे भामिनि ! वह रौरव नामवाली नरकमें प्राप्त होती भई नरकके दुःखको भोगके पीछे

पुनः शृगाली वै जाता मानुषी च ततोऽभवत् ॥
पुनर्विवाहिता सा वै मर्त्यलोके वरानने ॥ १० ॥
वन्ध्या चैव विशालाक्षि पूर्वजन्मविपाकतः ॥
रोगो बहु भवेद्देवि सुखं नैवोपजायते ॥ ११ ॥
तस्याः पुण्यं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापप्रणाशनम् ॥
स्वपतिं प्रत्यहं माघे स्नापयेदुष्णवारिणा ॥ १२ ॥
श्वश्रूचरणयोः प्रातर्नमस्कुर्यात् प्रयत्नतः ॥
अलाबूं नैव खादेत्तु षोडशाब्दप्रमाणतः ॥ १३ ॥
माघे नियमतो देवि पतिना सह सुव्रते ॥
स्नानं प्रतिदिनं कुर्याद्दीपं दद्याद्यथाविधि ॥ १४ ॥
ततः कृत्वा सुवर्णस्य वृक्षं वै द्विपलस्य च ॥
रौप्यां दशपलां देवि वेदीं शुभ्रां च कारयेत् ॥ १५ ॥

व्याघ्री होती भई ॥ ९ ॥ फिर शृगाली (गीदडी) भई पीछे अब स्त्री भई है । हे वरानने ! इस मृत्युलोकमें फिर वही इसके संग विवाही गई है ॥ १० ॥ हे विशालाक्षि ! पूर्व जन्मके विपाकसे यह वंध्याभी है । हे देवि ! इसके बहुतसा रोग है सुख नहीं होता है ॥ ११ ॥ अब पूर्वपापको नष्ट करनेवाले तिसके पुण्यको कहेंगे दिन २ प्रति माघ महीनेमें गरम जलसे अपने पतिको स्नान करावे ॥ १२ ॥ नित्यप्रति प्रातःकाल सासके चरणोंमें यत्नसे प्रणाम करे और सोलह वर्षतक तूंबीको भक्षण नहीं करे ॥ १३ ॥ हे देवि ! माघके महीनेमें नियमसे हमेशा पतिके संग स्नान करे । हे सुव्रते ! यथार्थविधिसे दीपदानभी करे ॥ १४ ॥ फिर दो पल सुवर्ण अर्थात् आठ तोले सुवर्णका वृक्ष बनावे और दश पल प्रमाण चांदीकी वेदी

वृक्षं तस्यां च संस्थाप्य कल्पवृक्षस्वरूपिणम् ॥
पूजयित्वा ततो देवं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ १६ ॥
सगणं देवदेवेशं वृषकेतुं वरप्रदम् ॥
ततो वै पूजयेद्देवि विधिवच्चारुरूपिणम् ॥ १७ ॥
वस्त्रकाञ्चनकेयूरैः कुण्डलाभ्यां विशेषतः ॥
तद्वृक्षं वेदिकायुक्तं तस्मै विप्राय दापयेत् ॥ १८ ॥
अन्यान्विप्रान् वरारोहे भोजयेद्विविधै रसैः ॥
पायसैर्मोदकैः शुभ्रैः षट्षष्टिप्रमितान्प्रिये ॥ १९ ॥
ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सनूपुराम् ॥
सप्तम्यां रवियुक्तायां व्रतं कुर्यान्मम प्रिये ॥ २० ॥
गोपालस्य च मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥ २१ ॥

बनाय ॥ १५ ॥ तिस वेदीपर कल्पवृक्षरूपी तिस वृक्षको स्थापित कर शंख-चक्र-गदा-धारी विष्णुदेवकी पूजा करे ॥ १६ ॥ हे देवि ! पीछे विधिपूर्वक सुन्दररूपवाले वरदायक महादेवको सगण (गणोंसहित) पूजे ॥ १७ ॥ वस्त्र सुवर्णके आभूषण कुंडल इन्होंसे युक्त किये हुए तिस वृक्षको वेदीसमेत तिस आचार्य ब्राह्मणके अर्थ दे देवे ॥ १८ ॥ हे वरारोहे ! हे प्रिये !! अन्य छियासठ (६६) ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके रसोंकरके खीर सुन्दर लड्डू आदिकोंकरके भोजन करावे ॥ १९ ॥ फिर सुवर्णकी सींगकी और खुरोंके आभूषणोंसे युक्त की हुई कपिला गौका दान करे। हे प्रिये ! रविवार सप्तमीके दिन मेरा व्रत करे ॥ २० ॥ गोपालदेवके मंत्रसे लक्ष जाप्य करावे तद्दशांश होम तद्दशांश तर्पण और मार्जन

एवं कृते न संदेहो शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥
कन्यका नैव जायन्ते रोगश्चैव निवर्त्तते ॥ २२ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसं० रोहिणीनक्षत्रस्य
तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

अथ एकोनविंशोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥
रोहिण्याश्चरणं देवि चतुर्थं साम्प्रतं शृणु ॥
यत्कृतं संचितं पूर्वमिह जन्मनि तत्फलम् ॥ १ ॥
बुद्धिशर्मा द्विजः कश्चिदन्तर्वेद्यां बभूव ह ॥
पुरोहितो महाभ्रष्टः परपाके सदा रतः ॥ २ ॥
भार्या पररता तस्य चञ्चला चपला सदा ॥
धनं च संचितं तेन प्रतिग्रहप्रसङ्गतः ॥ ३ ॥

करावे ॥ २१ ॥ ऐसे करनेसे निःसंदेह पुत्र उत्पन्न होता है कन्या नहीं जन्मती रोग निवृत्त होवे ॥ २२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणी०
तृतीय० नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

हे देवि ! अब रोहिणीके चौथे चरणको सुनो जो पूर्वसंचित कर्म किया है वह इस जन्ममें भोगा जाता है ॥ १ ॥ कोई बुद्धिशर्मा-नामवाला ब्राह्मण गङ्गा यमुनाके मध्यदेशमें बसता था पुरोहित पदवीवाला और महाभ्रष्ट था सदा अन्योंकी रसोई बनाया करता ॥ २ ॥ तिसकी स्त्री परपुरुषसे रत और चंचल तथा चपला थी तिस

मरणं तस्य वै जातं पश्चाद्भार्या मृता तु सा ॥
गतोऽसौ नरके घोरे पूर्वजन्मविपाकतः ॥ ४ ॥
युगमेकं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥
वृषयोनिं च संप्राप्तो रासभत्वं ततोऽलभत् ॥ ५ ॥
मानुषत्वं पुनर्याति मध्यदेशे वरानने ॥
अपुत्रता भवेद्देवि कन्यका चैव जायते ॥ ६ ॥
शरीरे रोगमुत्पन्नं सुखं नैव प्रजायते ॥
प्रायश्चित्तं ततो देवि प्रवक्ष्यामि वरानने ॥ ७ ॥
आकृष्णेति जपेन्मन्त्रं लक्षं वै विधिवत्प्रिये ॥
होमं कुर्यात्प्रयत्नेन तिलाज्यमधुना सह ॥ ८ ॥
कुण्डे वै वर्तुलाकारे दशांशं तर्पणं तथा ॥
मार्जनं तु विशेषेण ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ ९ ॥

ब्राह्मणने सदा प्रतिग्रहके प्रभावसे धन संचित किया ॥३॥ तिस ब्राह्मणका मरना हो गया फिर तिसकी स्त्रीभी मर गई यह अपने पूर्वजन्मके कर्मसे घोर नरकमें गया ॥४॥ हे वरारोहे ! एक युगतक तहां नरककी पीडाको भोगके बैलकी योनिको प्राप्त भया पीछे गधेकी योनिको प्राप्त भया ॥ ५ ॥ हे वरानने ! पीछे मध्यदेशमें मनुष्य भया है । हे देवि ! इसके पुत्र नहीं है कन्याही जन्मती है ॥ ६ ॥ शरीरमें रोग उत्पन्न हो रहा है सुख नहीं होता है । हे देवि ! हे वरानने ! ! अब इसका प्रायश्चित्त कहेंगे ॥ ७ ॥ ' आकृष्णेन रजसा० ' इस मंत्रका विधिपूर्वक लक्ष जाप करावे फिर यत्नसे तिल घृत मधु आदिकोंकरके होम करे ॥ ८ ॥ वर्तुल (गोल) आकारवाले कुंडमें हवन करावे और दशांश तर्पण तथा मार्जन करावे

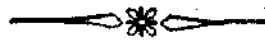
दशवर्णाः प्रदातव्या गुडधेनुस्तथा प्रिये ॥
शय्यां दद्यात्प्रयत्नेन विधिवद्ब्राह्मणाय च ॥ १० ॥
भोजयेद्ब्राह्मणान् शुद्धान् वेदपाठरतान् प्रिये ॥
सप्तसप्ततिसंख्यान् वै दीक्षितान् शुद्धमानसान् ॥ ११
प्रयागे माघमासे वै प्रातःस्नानं सभार्यया ॥
एवं कृते न संदेहः पुत्रस्तस्य प्रजायते ॥ १२ ॥
रोगः प्रमुच्यते तस्य वन्ध्यत्वं च प्रणश्यति ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं कन्यका नैव जायते ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रोहिणीनक्षत्र० चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

पीछे ब्राह्मणभोजन करावे ॥ ९ ॥ दश प्रकारके वर्णोंवाली दश गौओंका दान करे। हे प्रिये ! गुडधेनु अर्थात् शास्त्रोक्त विधिसे बनाई हुई गुडकी धेनु तथा शय्याको विधिपूर्वक यत्नसे ब्राह्मणके अर्थ दान देवे ॥ १० ॥ हे प्रिये ! वेदपाठमें तत्पर हुए शुद्ध सतंतर (७७) ब्राह्मणोंको दीक्षित अर्थात् यज्ञादि करनेवाले तथा शुद्ध मनवालोंको भोजन करावे ॥ ११ ॥ माघ महीनेमें प्रयागजीमें प्रातःकाल स्त्रीसहित होके स्नान करे ऐसे करनेसे निश्चय पुत्र उत्पन्न होवे ॥ १२ ॥ तिसका रोग दूर होवे और वंध्यापन दूर होवे जिसकी संतान नहीं जीती हो उसके पुत्र जीवे कन्या उत्पन्न नहीं होवे ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां रोहिणीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

अथ विंशोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

अथ वक्ष्ये महादेवि चन्द्रनक्षत्रजं फलम् ॥
यत्कृतं मानुषैः पूर्वं तच्छृणुष्व वरानने ॥ १ ॥
मध्यदेशे पुरे शुभ्रे वसत्येको द्विजः खलु ॥
ब्रह्मकर्मरतो नित्यं वेदवेदाङ्गपारगः ॥ २ ॥
प्रत्यहं पाठयामास चतुर्वेदान्तविस्तरान् ॥
वेदशर्मा द्विजः ख्यातस्तस्य पत्नी सुशीलका ॥३॥
प्रत्यहं पाठयेद्वेदं जीविकार्थं वरानने ॥
लोहकारस्य मरणं तत्पुरेऽभूद्वरानने ॥ ४ ॥
न दत्तं तस्य वै स्वर्णं लोहकारस्य संस्थितम् ॥
तत्स्वर्णं प्रत्यहं देवि बुभोज सह भार्यया ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं–हे महादेवि ! अब मृगशिर नक्षत्रमें जन्म-नेवाले मनुष्योंने जो पूर्व जन्ममें किया है सो कहेंगे । हे वरानने ! सुनो ॥ १ ॥ मध्यदेशमें सुन्दरपुरमें एक ब्राह्मण वसता था वह निश्चय ब्राह्मणके कर्ममें हमेशा तत्पर रहता था और वेदवेदांगके पारको जाननेवाला था ॥ २ ॥ वह दिनदिनप्रति विस्तारसहित चारों वेदोंको पढाया करता वेदशर्मा नाम था उसकी स्त्री सुशीला नामवाली थी ॥ ३ ॥ हे वरानने ! आजीविकाके वास्ते नित्यप्रति वेद पढाया करता था । हे वरानने ! उस नगरीमें एक लोहकारकी मृत्यु होती भई ॥ ४ ॥ तिस लोहकारका जमा किया हुआ सुवर्ण इस ब्राह्मणने नहीं दिया । हे देवि ! उस सुवर्णको दिन २ प्रति

एवं बहुगते काले मरणं ब्राह्मणस्य वै ॥
सूर्यलोकोऽभवद्देवि यतः सूर्यस्य सेवकः ॥६॥
विंशद्वर्षसहस्राणि सूर्यलोकेऽवसत्प्रिये ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके च मानवः ॥ ७ ॥
पुत्रकन्याविहीनस्तु धनधान्यसमन्वितः ॥
लोहकारस्य स्वर्णं हि गृहीतं नैव दत्तवान् ॥ ८ ॥
तेन कर्मविपाकेन लोहकारः सुतोऽभवत् ॥
प्रीतिमांश्चैव सर्वेषां पितृमातृप्रियंकरः ॥ ९ ॥
युवरूपसमापन्नस्तदा मृत्युर्भवेदनु ॥
पुनः पुत्रस्य चाभावः कन्या चैव प्रजायते ॥ १० ॥
तत्पापस्य विशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमतः शृणु ॥
गायत्रीलक्षजाप्येन दुर्गायाः पूजनेन च ॥ ११ ॥
दशवर्णप्रदानेन भूमिदानेन पार्वति ॥
सर्वं पापं क्षयं याति पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥ १२ ॥

स्त्रीसमेत हुआ भोगता भया ॥ ५ ॥ ऐसे बहुतसा काल बीत चुका तब उस ब्राह्मणका मरना हो गया तब उसको सूर्यका लोक प्राप्त भया क्योंकि यह सूर्यका भक्त (सेवक) था ॥ ६ ॥ हे प्रिये ! वह बीस हजार वर्षतक सूर्यलोकमें वसता भया फिर पुण्य क्षीण हो चुका तब मृत्युलोकमें मनुष्य भया है ॥ ७ ॥ पुत्रकन्यासे हीन है और धनधान्यसे संयुक्त है इसने पूर्वजन्ममें लोहकार (लुहार) का सुवर्ण लेके नहीं दिया था ॥ ८ ॥ तिस कर्मविपाककरके लुहार इसके पुत्र भया सबसे प्रीति रखनेवाला मातापितासे प्यार करनेवाला भया ॥ ९ ॥ जब जवान भया तब उसकी मृत्यु हो गई फिर इसके संतान नहीं होती कन्या जन्मती है ॥ १० ॥ तिस पापकी

गयाश्राद्धं प्रयत्नेन तदर्थं नियतः प्रिये ॥
प्रयागे मकरे मासि स्नानं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ १३ ॥
ततः पापं क्षयं याति पुनः पुत्रश्च जीवति ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे मृगशिरोन० प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अथ एकविंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

कान्यकुब्जे शुभे देशे कश्चिच्च नन्दने पुरे ॥
बोधशर्मा द्विजश्चासीत् भिक्षुवृत्तिस्तु निर्धनः ॥१॥
परान्नं भुज्यते नित्यं परप्रेष्यरतः सदा ॥
तस्य पत्नी समाख्याता बाधमा नाम वै पुरा ॥ २ ॥

शुद्धिके वास्ते मुझसे प्रायश्चित्त सुनो, गायत्रीमंत्रका लक्ष जाप्य, दुर्गापूजन, दशवर्णवाली गौओंका दान, भूमिदान इनके करनेसे हे पार्वति ! पूर्वजन्मका सब पाप नष्ट होगा ॥ ११ ॥ १२ ॥ हे प्रिये ! तिसके वास्ते नियमसे गयाश्राद्ध करे मकरके महीनेमें यत्नसे प्रयागजीमें स्नान करे ॥ १३ ॥ तब पाप नष्ट हो और पुत्र जीवे संपूर्ण रोग नष्ट हो जावें इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वती० मृगशिरोनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

शिवजी कहते हैं-सुन्दर कान्यकुब्ज देशमें नंदनपुरमें कोई बोधशर्मा नामवाला भिक्षुकवृत्तिवाला निर्धन ब्राह्मण बसता भया ॥ १ ॥ वह नित्यप्रति पराये अन्नको भोजन करता और सदा

जन्मतो मरणं यावत् परान्नं भुज्यते च वै ॥
नरके पतनं तेन तयोर्जातं प्रतिग्रहात् ॥ ३ ॥
बहुवर्षसहस्राणि प्रवासो नरकेऽभवत् ॥
नरकान्निःसृतो देवि काकश्चैव मृगोऽभवत् ॥ ४ ॥
पुनर्वै मेषयोनिश्च पूर्वकर्मविपाकतः ॥
ततो वै मानुषो जातो मध्यदेशे वरानने ॥ ५ ॥
रोगवान्नृत्यशीलश्च पुत्रकन्याविवर्जितः ॥
परान्नं प्रत्यहं भुङ्क्ते श्राद्धं नैव कृतं पुरा ॥ ६ ॥
अतो वंशस्य वै च्छेदः फलं चैव तु पूर्वजम् ॥
शान्ति तस्य प्रवक्ष्यामि पूर्वपापक्षयो यतः ॥ ७ ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं जापयेच्छिवे ॥
ततः पापविशुद्धिः स्याद्दशांशहवनं यदा ॥ ८ ॥

पराई प्रेरणा (भृत्यपना) करता तिसकी स्त्री बाधमा नामवाली होती भई ॥ २ ॥ उसने जन्मसे मरणपर्यंत पराया अन्न भोजन किया है तिससे प्रतिग्रहके प्रभावसे उन दोनोंका नरकमें वास भया ॥ ३ ॥ बहुत हजार वर्षोंतक नरकमें वास रहा । हे देवि ! नरकसे निकलके पीछे काक फिर मृग भया ॥ ४ ॥ पीछे पूर्व कर्मविपाकसे मेंढा भया॥ हे वरानने ! पीछे मध्यदेशमें मनुष्य भया है॥५॥ रोगवान् और नाचनेमें तत्पर है पुत्र कन्यासे हीन है इसने पहिले नित्यप्रति पराया अन्नभोजन किया कभी श्राद्ध न किया ॥ ६ ॥ इस लिये पूर्व जन्मके फलसे वंश नष्ट हो गया है अब इसकी शांतिको कहेंगे जिससे कि पूर्व पाप नष्ट होवेगा ॥ ७ ॥ गायत्री मंत्र तथा " जातवेदसे सुन० " इस मंत्रकरके दो लाख जप करावे हे शिवे ! तद्दशांश होम करावे तब पापकी शुद्धि होवे ॥ ८ ॥

तर्पणं मार्जनं देवि ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥
शतसंख्यामितान् शुद्धान्गृहस्थानतिभक्तितः ॥ ९ ॥
वृषमेकं प्रदद्यात्तु नीलवर्णं विभूषितम् ॥
एवं कृते न संदेहो रोगनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥ १० ॥
पुत्रस्तु जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मृगशिरोद्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥

अथ द्वाविंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

नर्मदादक्षिणे तीरे पुरीका नाम वै पुरी ॥
तस्यां पुर्यां विशालाक्षि कुलालो धनवानपि ॥ १ ॥
कुलालकर्मतो देवि बहु द्रव्यमुपार्जितम् ॥
कर्मचन्द्र इति ख्यातस्तस्य पत्नी च देवकी ॥ २ ॥

हे देवि ! तर्पण तथा मार्जन करावे और शुद्ध तथा गृहस्थी सौ ब्राह्मणोंको भक्तिसे भोजन करावे ॥ ९ ॥ फिर नीलवर्णवाले विभूषित किये हुए एक बैलका दान करे ऐसे करनेसे निश्चय रोगका नाश होगा इसमें संदेह नहीं ॥ १० ॥ हे देवि ! पुत्र उत्पन्न होगा और वंध्यापन दूर होगा ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे मृगशिरोद्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकविंशतितमोऽध्यायः ॥ २१ ॥

शिवजी कहते हैं-हे विशालाक्षि ! नर्मदा नदीके दक्षिण तटपर पुरीका नामवाली नगरी थी तहां कोई धनाढ्य कुलाल (कुम्हार) बसता था ॥ १ ॥ हे देवि ! उसने कुम्हारके कर्मसे बहुतसा द्रव्य

स्वकर्मनिरतो नित्यं पात्रं कृत्वा दिने दिने ॥
एवं सर्वं वयो जातं वृद्धत्वं च ततोऽभवत् ॥ ३ ॥
वृद्धे जाते तदा देवि दारिद्र्यत्वमजायत ॥
शूर्पकारस्य वै द्रव्यं व्यवहारे गृहीतवान् ॥ ४ ॥
शतसंख्यामितं स्वर्णं व्ययं सर्वं कृतं शिवे ॥
कुलालस्याभवन्मृत्युः पत्नी तस्य मृता पुरा ॥ ५ ॥
नर्मदायां महादेवि तावुभौ मृत्युमापतुः ॥
तत्तीर्थस्य फलाद्देवि स्वर्गलोकं गतावुभौ ॥ ६ ॥
बहुवर्षसहस्राणि ताभ्यां भुक्तं फलं शुभम् ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके च जायते ॥ ७ ॥
मानुषेऽपि शुभं जन्म धनधान्यसमन्वितः ॥
पुनर्विवाहिता नारी पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ॥ ८ ॥

संचित किया वह कर्मचंद्रनामसे विख्यात था उसकी स्त्री देवकी नामवाली थी ॥ २ ॥ वह दिन २ प्रति घट आदि पात्र बनाके निरंतर अपने कर्ममें रत था ऐसे सम्पूर्ण अवस्था बीत गई पीछे वृद्ध होता भया ॥ ३ ॥ हे देवि ! वृद्ध हो गया तब दरिद्री हो गया तब व्यवहारमें छाज बनानेवाले (धानक) के धनको ग्रहण करता भया ॥ ४ ॥ हे शिवे ! सुवर्णकी सौ महोर जो द्रव्य लिया था वह सब खर्च दिया पीछे उस कुम्हारकी मृत्यु हो गई और तिसकी स्त्री पहलेही मर गई थी ॥ ५ ॥ हे महादेवि ! वे दोनों नर्मदानदीपर मृत्युको प्राप्त भये तिस तीर्थके प्रभावसे दोनों स्वर्गलोकमें प्राप्त होते भये ॥ ६ ॥ तिन्होंने बहुत हजार वर्षोंतक सुन्दर फल भोगा फिर पुण्य क्षीण हो गया तब यह मृत्युलोकमें जन्मा है ॥ ७ ॥ मनुष्यलोकमेंभी सुन्दर जन्म है यह धनधान्यसे युक्त

ऋणसंबन्धतो देवि पुत्रो जातस्तदा शिवे ॥
सूर्पकारो महादेवि वैरुद्ध्यं बालतः कृतम् ॥ ९ ॥
प्रत्यहं वसु यल्लब्धं तत्सर्वं च व्ययं तथा ॥
द्यूतवेश्याप्रदानेन धनं सर्वं व्ययं गतम् ॥ १० ॥
युवा जातो यदा देवि पुत्रकन्यासमन्वितः ॥
मरणं तस्य वै जातं पुनः पुत्रो न जायते ॥ ११ ॥
अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वं वरानने ॥
गायत्रीलक्षजाप्येन त्र्यम्बकेण तथा प्रिये ॥ १२ ॥
कर्तव्यं कुण्डमुच्चैस्तु त्रिकोणं विधिवत्प्रिये ॥
होमं च कारयेद्देवि दशांशं तर्पणं ततः ॥ १३ ॥
ततो वै कपिलां दद्याद्धेमशृङ्गीं सहाम्बराम् ॥
एवं कृत्वा वरारोहे पुनः पुत्रः प्रजायते ॥ १४ ॥

है पूर्वजन्मके प्रसंगसे वही स्त्री फिर विवाही है ॥ ८ ॥ हे देवि ! हे शिवे ! ऋणके संबंधसे वह सूर्पकार (छाज बनानेवाला धानक) इसके पुत्र भया उसने बालकपनसे विरोध किया ॥ ९ ॥ दिन २ प्रति जो धन लब्ध हुआ वह सब खर्च कर दिया जूवा खेलने वा वेश्यासंग करनेमें सब धन खर्च करा ॥ १० ॥ हे देवि ! जब जवान भया और इसके लडका लडकी भये तब तिस पुत्रका मरना हो गया फिर इसके संतान नहीं भई है ॥ ११ ॥ हे वरानने ! अब शांति कहेंगे सब सुन । हे प्रिये ! गायत्रीका अथवा " त्र्यंबकं यजामहे " इस मंत्रका लक्ष जाप्य करानेसे शांति होगी ॥ १२ ॥ हे देवि ! त्रिकोण ऊंचा कुंड विधिपूर्वक बनवावे दशांश होम करावे तिससे दशांश तर्पण करावे ॥ १३ ॥ फिर सुवर्णकी सींगकी और वस्त्रसे युक्त की हुई कपिला गौका दान करे । हे वरारोहे ! ऐसे

शूर्पकारस्य प्रतिमां पलसप्तदशस्य तु ॥
सुवर्णस्यैव भो देवि रचितां वस्त्रच्छादिताम् ॥१५॥
शूर्पं रौप्यस्य वै कुर्य्यात्पलषष्टिप्रमाणतः ॥
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय सुतेजसे ॥ १६ ॥
तस्योद्देशेन भो देवि ऋणबन्धात्प्रमुच्यते ॥
पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसं० मृगशिरोनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

अथ त्रयोविंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अथ वक्ष्याम्यहं देवि चतुर्थचरणं तथा ॥
मृगशिरो नाम नक्षत्रं तस्य पूर्वं च सञ्चितम् ॥ १ ॥

करनेसे फिर पुत्र होगा ॥ १४ ॥ और सतरह पल सोनेकी सूपकारकी मूर्ति बनाके हे देवि ! उसपर वस्त्र उढावे और साठ पल अर्थात् २४० तोले चांदीका छाज बनावे फिर इस सबोंको सुन्दर तेजस्वी वेदपाठी ब्राह्मणके अर्थ दान देवे ॥ १५ ॥ १६ ॥ हे देवि ! तिस शूर्पकार (छाज बनानेवाले धानक) के उद्देशकरके इस दानके देनेसे, पूर्वजन्मके ऋणसंबंधसे छूटे फिर इसके पुत्र होवे इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसहिताभाषाटीकायां मृगशिरोनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथन नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

हे महादेवि ! अब मृगशिरनक्षत्रके चौथे चरणमें जन्मनेके

अवन्तीपुरतो देवि दक्षिणे क्रोशपञ्चके ॥
पुरं तच्चैव विख्यातं केशवं नाम शोभनम् ॥ २ ॥
वसत्येको हि देवेशि ब्राह्मणो वेदपारगः ॥
किशोरशर्मा विख्यातो मृतगेहे प्रभुज्यते ॥ ३ ॥
कष्टेनैव महादेवि व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥
धनं च बहुधा कृत्वा पुण्यकार्यं न कारयेत् ॥ ४ ॥
ततो भ्रातुः कनिष्ठस्य भागं नैव ददौ च सः ॥
त्रिकोटिप्रमितं द्रव्यं स्वगृहे चैव सञ्चितम् ॥ ५ ॥
द्रव्यस्यैव विभागाय मरणं ब्राह्मणोपरि ॥
कृतं भ्रात्रा कनिष्ठेन द्रव्यं तस्मै न दत्तवान् ॥ ६ ॥
एवं बहुतिथे काले किशोरः स मृतस्तु वै ॥
गतो वै नरके घोरे युगमेकोनविंशतिम् ॥ ७ ॥

पूर्वसंचित कर्मको कहेंगे ॥ १ ॥ हे देवि ! उज्जैननगरीसे दक्षिणमें पांच कोशपर केशवनामक सुन्दरपुर है ॥ २ ॥ हे देवेश्वरि ! वहां किशोरशर्मा नामवाला एक वेदपाठी ब्राह्मण वसता था सो दिन २ प्रति मृतकके घरों भोजन करता था ॥ ३ ॥ हे महादेवि ! उसने बडी कृपणतासे खर्च चलाके बहुतसा धन संचित किया पुण्यकार्य कुछ न किया ॥ ४ ॥ पीछे वह अपने छोटे भाईको धनका हिस्सा नहीं देता भया तीन करोड रुपयोंका धन अपनेही घरमें संचित कर लिया ॥ ५ ॥ फिर द्रव्यके विभागके वास्ते तिस छोटे भाईने उस ब्राह्मणपर अपनी मृत्यु कर दी और यह उसको द्रव्य नहीं देता भया ॥६॥ ऐसे बहुत काल बीत चुका तब यह किशोरशर्मा ब्राह्मण मर गया फिर उन्नीस युगोंतक घोर नरकमें वास हुआ ॥७॥

पुनः कर्मवशाद्देवि गर्दभत्वं च जायते ॥
वृकयोनिस्ततो जातो मानुषत्वं भवेत्पुनः ॥ ८ ॥
मध्यदेशे वरारोहे पुत्रो नैव प्रजायते ॥
कन्यका बहवो गर्भा विनश्यन्ति वरानने ॥ ९ ॥
पूर्वजन्मकृतं कर्म भुज्यते देवि मानवैः ॥
इह लोके वरारोहे पुण्यं पापमनूनकम् ॥ १० ॥
भ्रातुस्तस्य कनिष्ठस्य मरणं पूर्वजन्मनि ॥
तदुद्देशेन भो देवि तस्माद्रोगं च जायते ॥ ११ ॥
तस्य पापस्य शुद्धिं च शृणु देवि प्रयत्नतः ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ १२ ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
गायत्रीजातवेदेन त्र्यम्बकेण तथैव च ॥ १३ ॥
लक्षत्रयं जपं चैव दशवर्णाः प्रदापयेत् ॥
हवनं विधिवत्कुर्यात् तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १४ ॥

हे देवि! पीछे कर्मके वशसे गधेकी योनि भई फिर मेंडककी योनि हो पीछे मनुष्य भया ॥८॥ हे वरारोहे! मध्यदेशमें जन्मा है इसके पुत्र नहीं होता कन्या जन्मती है बहुत गर्भ खंडित होते हैं ॥९॥ हे देवि! पूर्वजन्ममें किया हुआ कर्म पुण्य अथवा पाप सम्पूर्ण मनुष्योंसे इस लोकमें भोगा जाता है ॥ १० ॥ हे देवि! पूर्वजन्ममें तिसके भाईको इसके लिये अपना मरना करा था इसलिये इसके रोग होता है ॥११॥ हे देवि! अब यत्नसे इसके पापकी शुद्धिको सुनो गायत्रीमूलमंत्रसे लक्ष जप करावे ॥ १२ ॥ घरके धनसे छठे हिस्से धनको पुण्यके कार्यमें खर्च करे और गायत्री अथवा "त्र्यंबकं यजामहे०" इस मंत्रकरके ॥ १३ ॥ तीन लक्ष जप करावे

सौवर्णस्य वरारोहे सूर्यं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥
पलपञ्चप्रमाणेन द्विगुणं चन्द्रमेव च ॥ १५ ॥
रौप्यस्यैव प्रकुर्यात्तु यथाशास्त्रं प्रपूजयेत् ॥
मन्त्रेणानेन भो देवि दद्याद्विप्राय तद्वयम् ॥ १६ ॥
ॐ ह्रीं मार्त्तण्डाय स्वाहा ॥
सूर्यदेव महाभाग त्रैलोक्यतिमिरापह ॥
मम पूर्वकृतं पाप क्षम्यतां परमेश्वर ॥ १७ ॥
ॐ सोमाय स्वाहा ॥
ॐ सौम्यरूप महाभाग मन्त्रराज द्विजोत्तम ॥
पूर्वजन्मकृतं पापमोषधीश क्षमस्व मे ॥ १८ ॥
ततश्च ब्राह्मणान् पूज्य भोजयित्वा विसर्जयेत् ॥
एवं कृते न संदेहो विद्वान् पुत्रोऽभिजायते ॥ १९ ॥

दश प्रकारके वर्णोंवाली गौओंका दान करावे विधिपूर्वक हवन करावे तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ १४ ॥ हे वरारोहे ! पाच पल प्रमाण सोनेका सूर्य बनावे दश पलका चंद्रमा बनावे॥१५॥ रूपेका चंद्रमा बनावे । हे देवि ! पीछे शास्त्रके अनुसार इस मंत्रसे पूजा कर तिन दोनो मूर्तियोंको ब्राह्मणके अर्थ देवे ॥ १६ ॥ मंत्र ॥ "ॐ ह्रीं मार्त्तण्डाय स्वाहा" हे सूर्यदेव ! हे महाभाग ! त्रिलोकीके अंधकारको दूर करनेवाले हे परमेश्वर ! तुम मेरे पूर्वजन्मके पापको क्षमा करो ॥१७॥ "ॐ सोमाय स्वाहा" हे सौम्यरूप ! हे महाभाग ! हे मंत्रराज ! हे द्विजोत्तम ! हे औषधीश ! पूर्वजन्ममें किये हुए मेरे इस पापको दूर करो ॥ १८ ॥ फिर ब्राह्मणोंका पूजन कर भोजन कराके विसर्जन कर देवे ऐसे करनेसे विद्वान् पुत्र उत्पन्न होता है इसमें संदेह नहीं ॥ १९ ॥

रोगः सर्वैः क्षयं याति नात्र कार्या विचारणा ॥ २० ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मृगशिरोनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्राय० नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अथ चतुर्विंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि रौद्रनक्षत्रजं फलम् ॥
येन कर्मविपाकेन मृत्युलोके च भुज्यते ॥ १ ॥
अवन्तीपुर्यां भो देवि रङ्गकारश्च तिष्ठति ॥
वस्त्राणि रङ्गयन्नित्यं स्वधर्मं पालयेत्सदा ॥ २ ॥
कुबेर इति तन्नाम लीलानाम्नी च तत्प्रिया ॥
पतिव्रता च सा देवि रङ्गकारश्च तां त्यजन् ॥ ३ ॥
ब्राह्मणीं रमते चैकां पापप्रीतिं समुद्वहन् ॥
त्यक्त्वा पतिव्रता भार्यां ब्राह्मणीं प्रीतितोऽभजत् ॥ ४ ॥

सम्पूर्ण रोग नष्ट होता है इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ २० ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० मृगशिरो० प्रायश्चित्तकथन नाम त्रयोविंशोऽध्याय. ॥ २३ ॥

शिवजी कहते हैं—अब आर्द्रानक्षत्रमें जन्मनेवालेके फलको कहेंगे जिस कर्मविपाकसे मृत्युलोकमें भोगा जाता है ॥ १ ॥ हे देवि ! उज्जैन नगरीमें एक वस्त्र रंगनेवाला (रंगकार) बसता था वह सदा अपने धर्मकी पालना करता हुआ अनेक प्रकारके वस्त्रोंको रंगा करता ॥ २ ॥ कुबेर ऐसा उसका नाम तिसकी स्त्री लीलानामवाली थी । हे देवि ! वह पतिव्रता थी सो रंगकार तिस अपनी स्त्रीको त्यागता हुआ ॥ ३ ॥ एक ब्राह्मणीसे रमण करता पापकी

द्रव्यं च संचितं तेन रङ्गकारेण वै शिवे ॥
भूमिमध्ये च तद्द्रव्यं कृतं तेन च सुन्दरि ॥ ५ ॥
किञ्चिद्दानं कृतं तेन गङ्गायमुनसंगमे ॥
मरणं तस्य वै जातं सा च भार्या विवाहिता ॥ ६ ॥
तत्पुरे च सती जाता लीलानाम पतिव्रता ॥
सत्यलोकं गतः सोऽपि लक्षद्वयमितं प्रिये ॥ ७ ॥
पुनः पुण्यक्षये जाते मनुष्योऽभूत्सदाशिवे ॥
मध्यलोके च विख्यातो धनधान्यसमन्वितः ॥ ८ ॥
पुत्राश्च बहवो जाताः कोऽपि तेषु न जीवति ॥
शरीरे च ज्वरोत्पत्तिः खञ्जत्वं चरणे तथा ॥ ९ ॥
ब्राह्मणीगमनं देवि पूर्वजन्मनि वै कृतम् ॥
तेन पापेन भो देवि पुत्रस्तस्य न जीवति ॥ १० ॥

प्रीति बढाता हुआ अपनी पतिव्रता भार्याको त्यागके ब्राह्मणीको प्रीतिसे भजता भया ॥ ४ ॥ हे शिवे ! तिस रंगकारने जो द्रव्य संचित किया हे सुंदरि ! सो संपूर्ण तिसने पृथ्वीमें गाड दिया॥५॥ उसने गंगायमुनानदीके संगममें कुछ दानभी किया फिर वह मर गया और विवाही हुई वह तिसकी स्त्रीभी मर गई ॥ ६ ॥ सो लीलानामवाली वह पतिव्रता स्त्री उसही पुरमें सती हो गई तिससे वहभी हे प्रिये ! दो लाख वर्षतक स्वर्गलोकमें वास करता भया ॥ ७ ॥ हे सदाशिवे ! पीछे पुण्य क्षीण हो गया तब मध्यलोकमें धनधान्यसे युक्त प्रसिद्ध मनुष्य होता भया ॥ ८ ॥ इसके बहुतसे पुत्र भये परंतु तिनमें कोईभी नहीं जीवता है शरीरमें ज्वरी रहती है पैरसे लंगडा है ॥ ९ ॥ हे देवि ! इसने पूर्वजन्ममें ब्राह्मणीके संग गमन किया था तिस पापसे इसके पुत्र नहीं जीवता है॥१०॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तां शृणुष्व वरानने ॥
दशायुतं जपेद्देवि गायत्रीं वेदमातरम् ॥ ११ ॥
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥
षडंशं चैव दानं वै दद्याद्वेदविदे शिवे ॥ १२ ॥
ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चाच्छर्करापायसेन च ॥
गामेकां विधिवद्दद्याद्धेमवर्णां सुभूषिताम् ॥ १३ ॥
एवं कृते न संदेहो बहुपुत्रश्च जायते ॥
रोगस्यैव विमुक्तिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

हे वरानने ! उसकी शांतिको कहेंगे तिसको सुनो । हे देवि ! वेदमाता गायत्रीका लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥ तद्दशांश हवन और तिसका दशांश तर्पण तथा मार्जन करावे । हे शिवे ! वेदको जाननेवाले ब्राह्मणके अर्थ वरके वित्तसे छठे हिस्सेका दान करे ॥१२॥ पीछे शर्करा और खीरसे ब्राह्मणोंको भोजन करावे विधिपूर्वक सुवर्णसरीखे वर्णवाली एक गौको विभूषित की हुईको दान करे ॥१३॥ ऐसे करनेसे निश्चय पुत्र होवे रोगसे छूट जावे इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्वती० रौद्रनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

अथ पञ्चविंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

शृणु देवि वरारोहे नृणां वै पूर्वजन्मनि ॥
यत्कृतेन महाघोरे नरके परिपच्यते ॥ १ ॥
अवन्त्यां पश्चिमे द्वारे वैश्यो वसति भाग्यवान् ॥
धनधान्यसमायुक्तः स्वधर्मनिरतः सदा ॥ २ ॥
एवमर्द्धं वयो जातं दरिद्रत्वं ततोऽभवत् ॥
व्ययार्थे वै ततो देवि विप्रस्वर्णं गृहीतवान् ॥ ३ ॥
पलविंशप्रमाणं तद्व्ययं जातं वरानने ॥
ततो वैश्यस्य मृत्युर्वै भार्यया सहितस्य वै ॥ ४ ॥
स्वर्गं जातं ततो देवि नर्मदामरणादपि ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि स्वर्गस्यैव फलं शुभम् ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! हे वरारोहे ! ! मनुष्योंके पूर्वजन्ममें जिस कर्मसे उनको महाघोर नरकमें दुःख भोगा जाता है सो सुन ॥ १ ॥ उज्जैननगरीमें पश्चिमके दरवाजेकी तर्फ एक भाग्यवान् वैश्य बसता था वह धनधान्यसे युक्त और अपने धर्ममें सदा तत्पर रहता था ॥ २ ॥ इस प्रकार आधी अवस्था बीत चुकी तब दरिद्री हो गया । हे देवि ! तब खर्चोंके वास्ते ब्राह्मणके द्रव्यको(उधार) लेना भया ॥ ३ ॥ हे वरानने ! ऐसे बीस पल प्रमाण जो सुवर्ण लिया था सो सब खर्च हो गया फिर स्त्रीसहित हुए तिस वैश्यकी मृत्यु हो गई ॥ ४ ॥ हे देवि ! पीछे नर्मदानदीपर मरनेसे स्वर्ग लोक प्राप्त भया साठ हजार वर्षोंतक स्वर्गलोकका सुंदर फल

भुक्तं बहुविधं देवि भार्यया सहितेन वै ॥
ततः पुण्यक्षये जाते पुनर्मर्त्यौ बभूव तु ॥ ६ ॥
धनधान्यसमायुक्तौ पुत्रकन्याविवर्जितौ ॥
रुग्णौ दुर्बलगात्रौ च पूर्वकर्मफलेन तु ॥ ७ ॥
ऋणसम्बन्धतो देवि विप्रः पुत्रोऽभवत्तदा ॥
ऋणं यावत्प्रमाणं वै गृहीतं पूर्वजन्मनि ॥ ८ ॥
तावन्मात्रं गृहीत्वा तु ततो वै मरणं भवेत् ॥
पुनः पुत्रो न तस्यैव विंशद्वर्षे गते सति ॥ ९ ॥
तस्य दानं शृणुष्वादौ पूर्वपापक्षयो यतः ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १० ॥
स्वर्णपञ्चपलेनैव पुष्पं च मकराकृतिम् ॥
प्रदद्याद्वेदविदुषे पूर्वपापक्षयो भवेत् ॥ ११ ॥

भोगा ॥ ५ ॥ हे देवि ! पीछे स्त्रीसहित हुएको अनेक सुख भोगे फिर पुण्य क्षीण हो गया तब ये दोनो मनुष्य होते भये ॥ ६ ॥ धनधान्यसे युक्त हैं पुत्रकन्यासे रहित हैं रोगवाले हैं दुर्बल शरीरवाले हैं पूर्वकर्मफलसे (यह सब है) ॥ ७ ॥ हे देवि ! ऋणके संबंधसे इसके ब्राह्मण पुत्र होता भया जितना प्रमाण कर्जाका द्रव्य पूर्वजन्ममें ग्रहण किया ॥ ८ ॥ उतनेही द्रव्यको ग्रहण करके अर्थात् खर्च कराके मर जाता है फिर इसके पुत्र नहीं भया है बीस वर्ष व्यतीत हो चुके हैं ॥ ९ ॥ पहले तिसके दानको सुनो कि जिससे पूर्वजन्मका पाप नष्ट होगा घरके वित्तसे अष्टमांश द्रव्यको ब्राह्मणके अर्थ समर्पण करे ॥ १० ॥ और पांच पल सुवर्णका मकराकार पुष्प बनाय तिसको वेदको जाननेवाले ब्राह्मणके अर्थ दान देवे तब पूर्वजन्मका पाप नष्ट होवे ॥ ११ ॥

पुनः पुत्रः प्रसूयेत नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

अथ षड्विंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अवन्तीनगरी नाम्ना ततः क्रोशद्वयोपरि ॥
अग्निकोणे महादेवि मङ्गलं नाम वै पुरम् ॥ १ ॥
तस्मिन् ग्रामे वसत्येको ब्राह्मणो द्यूततत्परः ॥
अन्ये तु बहवस्तत्र वसन्ति सुद्विजोत्तमाः ॥ २ ॥
मद्यपानरतो नित्यं चौरविद्यासु तत्परः ॥
परस्त्रीलम्पटो देवि वेश्यायां निरतः सदा ॥ ३ ॥
प्रत्यहं स च भो देवि द्विजरूपो नराधमः ॥
चौरत्वाद्द्रव्यमुत्पाद्य नैव दानं समाचरेत् ॥ ४ ॥

फिर पुत्र उत्पन्न होवे इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १२ ॥
इति श्रीकर्मविपाक० रौद्रनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! उज्जैन नगरीसे दो कोशपर अग्निकोणमें मंगलनामवाला पुर है ॥ १ ॥ तहां तिस ग्राममें जूवामें तत्पर रहनेवाला एक ब्राह्मण वसता भया अन्य तो वहां बहुत उत्तम ब्राह्मण वसते थे ॥ २ ॥ वह ब्राह्मण मद्यपान तथा नित्य प्रति चोरीकी विद्यामें तत्पर था । हे देवि ! परस्त्रीमें लंपट वेश्यागामी था ॥ ३ ॥ हे देवि ! ब्राह्मणके रूपको धारण करनेवाला वह अधम

एवं बहुदिने याते तस्य मृत्युर्बभूव ह ॥
नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया ॥ ५ ॥
सप्ततिर्वै सहस्राणि रौरवे परिपच्यते ॥
महाकष्टं लभेद्देवि कृमिसूचीमुखादिभिः ॥ ६ ॥
पुनः कर्मवशाद्देवि नरकान्निर्गतो यदा ॥
बिडालकाकयोर्नि च तदा प्राप्तो द्वयं हि च ॥ ७ ॥
योनिद्वयफलं भुक्त्वा मानुषत्वं ततो लभेत् ॥
मध्यदेशे वरारोहे ततः पीडा महत्यपि ॥ ८ ॥
वंशच्छेदो भवेद्देवि पूर्वकर्मविपाकतः ॥
तस्योपरि विशालाक्षि शांतिं शृणु वरानने ॥ ९ ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण यथाविधि ॥
जपं वै कारयामास हवनं तर्पणं तथा ॥ १० ॥

नर दिन २ प्रति चोरीसे धनको इकट्ठा कर दान नहीं करता ॥४॥ ऐसे बहुतसे दिन बीत चुके तब तिसकी मृत्यु हो गई धर्मराजका दूत यमकी आज्ञासे तिसे नरकमें पटकता भया ॥५॥ सत्तर हजार वर्षतक रौरवनरकमें दुःख भोगा सुईसरीखे कृमियोंकरके महाकष्ट प्राप्त भया ॥ ६ ॥ हे देवि ! फिर कर्मके वशसे जब नरकसे निकसा तब बिलाव और काग इन दो योनियोंको प्राप्त भया ॥ ७ ॥ इन दो योनियोंके फलको भोगके पीछे मध्यदेशमें मनुष्यशरीर प्राप्त भया है । हे वरारोहे ! तहांभी बहुतसी पीडा है ॥ ८ ॥ हे देवि ! हे वरानने ! ! पूर्वकर्मविपाकसे वंश नष्ट हो गया अब इसकी शांतिको सुनो ॥ ९ ॥ " गायत्री, जातवेदसे०, त्र्यम्बकं यजा०" इन मंत्रोंसे यथार्थ विधिसे जप हवन और तर्पण करावे ॥ १० ॥

लक्षत्रयं जपेद्देवि पूर्वपापविशुद्धये ॥
ततो वै पूजयेद्देवि तुलसीं शुद्धरूपिणीम् ॥ ११ ॥
पूजयेद्विविधैश्चान्नैर्धूपनैवेद्यदीपकैः ॥
भूमिदानं ततो देवि यथाशक्ति प्रदापयेत् ॥ १२ ॥
एवं कृते महादेवि सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥
पुत्रश्च जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य द्वितीयचरणविचारणं नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

अथ सप्तविंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि तृतीयचरणं शिवे ॥
कृतं नरेण यद्देवि पूर्वजन्मनि किल्बिषम् ॥ १ ॥

हे देवि ! पूर्वपापकी शुद्धिके वास्ते तीन लाख जप करावे । हे देवि ! पीछे शुद्धरूपवाली तुलसीका पूजन करे ॥ ११ ॥ अनेक प्रकारके अन्न, धूप, दीप, नैवेद्य इनकरके पूजन करे । हे देवि ! पीछे शक्तिके अनुसार भूमिदान करे ॥ १२ ॥ हे महादेवि ! ऐसे करनेसे संपूर्ण पाप नष्ट होवें । हे देवि ! पुत्र उत्पन्न हो और बंध्यापन रोग दूर हो ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाक० भाषाटीका० षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

शिवजी कहते हैं-हे शिवे ! अब आर्द्रानक्षत्रके तीसरे चरणको कहेंगे यहां जन्मनेवाले मनुष्यने पूर्वजन्ममें जो पाप किया है सो

अवन्तीपुरतोऽवात्सीत् शूद्र एको महाधनः ॥
विक्रयं क्रियते छागमेषयोर्गृहवासिनोः ॥ २ ॥
गजमश्वं तथा रत्नं वस्त्राणि विविधानि च ॥
एकदा सूर्यग्रहणं दृष्टं तेन वरानने ॥ ३ ॥
गोसहस्रं कृतं दानं भार्यया सहितेन वै ॥
नर्मदायां विशालाक्षि स्वर्णवस्त्रयुतं तथा ॥ ४ ॥
तत्रैव चाभवत् पीडा मृत्युलोकसमुद्भवा ॥
स्वर्णकारस्य वै द्रव्यं व्यवहारनिमित्तकम् ॥ ५ ॥
गृहीतं चैव नो दत्तं ततः शृणु वरानने ॥
ततो बहुगते काले शूद्रस्य मरणं ह्यभूत् ॥ ६ ॥
ततोऽसौ नरके घोरे वर्षलक्षद्वयं तथा ॥
तत्रैव बहुधा पीडां भुक्त्वा चैव स्वकर्मतः ॥ ७ ॥

सुनो ॥ १ ॥ उज्जैननगरीमें एक महाधनी शूद्र वसता था सो घरमें रहनेवाले बकरी और मेंढोंको बेचनेका व्यवहार करता भया ॥२॥ हस्ती घोडा रत्न अनेक प्रकारके वस्त्र इन सबोंको बेचनेका व्यवहार करता भया। हे वरानने! एक समय तिसने सूर्यका ग्रहण देखा ॥ ३ ॥ हे विशालाक्षि! तब स्त्रीसहित हुए इसने नर्मदानदीपर सुवर्ण वस्त्रसे युक्त की हुई हजार गौओंका दान करा ॥ ४ ॥ तिसही जन्ममें मृत्युलोकसे उत्पन्न हुई पीडा होती भई तब उसने व्यवहारनिमित्त एक सुनारका द्रव्य लिया ॥ ५ ॥ ग्रहण किया हुआ धन फिर नहीं दिया। हे वरानने! सुनो तिससे पीछे बहुतसा काल बीत चुका तब तिस शूद्रका मरना होता भया ॥ ६ ॥ पीछे यह दो लाख वर्षतक नरकवास भोगता भया तहां

पुनर्जातो मर्त्यलोके काकश्च महिषो बकः ॥
मानुषत्वं ततो देवि कुले महति वै शुभे ॥ ८ ॥
स्वर्णकारस्य द्रव्यं वै गृहीतं पूर्वजन्मनि ॥
न दत्तं वै ऋणं देवि पुत्रस्य मरणं ततः ॥ ९ ॥
युवरूपो यदा जातो व्याधिग्रस्ततनुस्तदा ॥
देहार्द्धवातरोगश्च पुत्रस्य मरणं ततः ॥ १० ॥
भार्याद्वयसमायुक्त एका प्रीतिमती भवेत् ॥
पूर्वजन्मनि यत्कर्म पुण्यं पापं शरीरतः ॥ ११ ॥
मर्त्यलोके मनुष्येण भुज्यते नात्र संशयः ॥
अथातः संप्रवक्ष्यामि पापनिग्रहहेतवे ॥ १२ ॥
गायत्रीलक्षजाप्येन हरिवंशश्रुतेन च ॥
रथाश्ववस्त्रदानेन ग्रामदानेन वै तथा ॥ १३ ॥

अपने कर्मसे बहुतसी पीडा भोगके ॥ ७ ॥ पीछे यह मनुष्यलोकमें काग भया फिर भैंसा तथा बगुला भया । हे देवि ! पीछे महान् शुभ कुलमें मनुष्य भया है ॥ ८ ॥ इसने पूर्व जन्ममें सुनारका द्रव्य ग्रहण किया सो नहीं दिया । हे देवि ! इसलिये पुत्रका मरना होता है ॥ ९ ॥ जब जवानरूप भया तब यह बीमारीसे ग्रस्त हो गया है अर्द्धांगवातरोग है और पुत्रका मरना होता है ॥ १० ॥ इसके दो स्त्री थीं तिनमें एक अत्यंत प्रीतिवाली है पूर्वजन्ममें जो कर्म पुण्य अथवा पाप शरीरमें होता है ॥ ११ ॥ मनुष्यसे मृत्युलोकमें वही फल भोगा जाता है इसमें संदेह नहीं अब पाप दूर करनेके वास्ते उपाय कहेंगे ॥ १२ ॥ गायत्रीके लक्ष जप करानेसे, हरिवंश सुननेसे, रथ, अश्व, वस्त्र, ग्राम इनके

तिलधेनुप्रदानेन सर्वपापक्षयो भवेत् ॥
स्वर्णमुद्रासहस्रस्य प्रतिमां कारयेद्बुधः ॥ १४ ॥
पूर्वोक्तेन विधानेन पूजयित्वा प्रदापयेत् ॥
पार्थिवं पूजयेच्छंभुं तथा गोमयनिर्मितम् ॥ १५ ॥
लक्षत्रयं प्रमाणं च पञ्चगव्येन पूजयेत् ॥
पञ्चामृतेन भो देवि गोदुग्धेनैव पूजयेत् ॥ १६ ॥
तथा च विविधैर्मन्त्रैः षडङ्गैर्वेदसंभवैः ॥
मुच्यतेऽर्द्धाङ्गरोगेण नात्र कार्या विचारणा ॥ १७ ॥
वन्ध्यात्वं प्रशमं याति लभेत्पुत्रं न संशयः ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे रौद्रनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥

दान करनेसे ॥ १३ ॥ अथवा तिलधेनुके दानसे संपूर्ण पाप नष्ट हो जावें हजार (सुवर्णमुद्रा) महोरोंकी मूर्त्ति बनवावे ॥ १४ ॥ फिर पूर्वोक्त विधानकरके तिसका पूजन कर दान कर देवे । फिर पार्थिवशिवका अथवा गोबरसे बनाये हुए शिवका पूजन करे ॥१५॥ ऐसे तीन लाख प्रमाण पार्थिवशिव बनवाके पंचगव्यसे पूजन करे । हे देवि ! पंचामृत और दुग्धसे पूजे ॥१६॥ अनेक प्रकारका मंत्र वेद और षडंगके मंत्रसे पूजन करनेसे अर्धांग रोगसे छूट जावेगा इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १७ ॥ वंध्यापनरोग दूर होता है पुत्र उत्पन्न होता है इसमें संदेह नहीं जिसके संतान नहीं जीवती हो उस स्त्रीके चीरंजीवी दीर्घायु उत्तम पुत्र उत्पन्न होता है ॥१८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां रौद्रनक्षत्रस्य चतुर्थ० प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अथाष्टाविंशोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

ये नराश्च परद्रव्यं हरन्ति सततं प्रिये ॥
ते नरा दुःखितां यान्ति रोगेण च प्रपीडिताः ॥ १ ॥
ऋणं यस्य गृहीतं वै तदृणं न ददाति च ॥
ऋणसंबन्धतो देवि पुत्रो भवति दारुणः ॥ २ ॥
गृहीतमात्रं वै भग्नं धातुभग्नस्तथा नरः ॥
कन्याघातात्तु पूर्वं हि फलं भवति तादृशम् ॥ ३ ॥
अवन्तीपुरतो देवि ख्यातं चैव सुशोभनम् ॥
क्रोशमात्रं ततो देवि चोत्तरे नगरे तथा ॥ ४ ॥
वसन्तपुरमित्याख्यं वसन्ति बहवो जनाः ॥
नाम्ना तन्मध्य आभीरो नन्दनो वसति प्रिये ॥ ५ ॥
तस्य भार्या तु विख्याता नाम्ना वै सुन्दरी प्रिये ॥
सर्वथा च महादेवि कृपणः सह भार्यया ॥ ६ ॥

शिवजी कहते हैं–जो मनुष्य पराये द्रव्यको हरते हैं हे प्रिये ! वे मनुष्य निरंतर रोगसे पीडित होके दुःखको भोगते हैं ॥ १ ॥ जिसका ऋण लिया हो फिर उलटा नहीं देवे तो हे देवि ! ऋणके संबंधसे दारुण पुत्र उत्पन्न होता है ॥२॥ और ग्रहण किया हुआ सब धन नष्ट हो जावे तथा धातु गिरने लग जावे ऐसा यह फल कन्याके मारनेसे होता है ॥ ३ ॥ हे देवि ! उज्जैननगरीसे उत्तरकी तर्फ एक कोशपर सुंदर विख्यात ॥ ४ ॥ वसंतपुर है । हे प्रिये ! तहां बहुतसे जन बसते हैं । हे प्रिये । तहां नंदन नामवाला एक (आभीर) अहीरजाति बसता था॥५॥ हे प्रिये ! तिसकी स्त्री सुंदरी

मित्रं तस्य महादेवि ब्राह्मणो वेदपारगः ॥
स तिष्ठति पुरीमध्ये धनं तस्य स्थितं बहु ॥ ७ ॥
प्रत्यहं च परान्नेन भोजनं कुरुते स तु ॥
यदा वृद्धत्वमायातः पुरीं चैव तदात्यजत् ॥ ८ ॥
आगतो मित्रपार्श्वे वै वसन्ते वै पुरे शुभे ॥
आभीरेण गृहे वासं मित्रत्वाद्दत्तवान् स्वयम् ॥ ९ ॥
बहुकालमवात्सीत्स तत्प्रीत्या सुरसुन्दरि ॥
आभीरस्य ततो देवि स्वर्णं दृष्ट्वा प्रहर्षितः ॥ १० ॥
तस्य स्वर्णं समाहृत्य स्वगृहे स्थापितं तदा ॥
ब्राह्मणेन महत्कष्टं कृतं द्रव्यस्य शोकतः ॥ ११ ॥
महाशोकसमायुक्तः काश्यां चैव समागतः ॥
शरीरं चापि तत्याज स्वर्णशोकेन वै द्विजः ॥ १२ ॥

नामसे विख्यात थी। हे महादेवि! वह स्त्रीसहित कृपण था ॥६॥ एक वेदपाठी ब्राह्मण तिसका मित्र था वहभी उज्जैन पुरीमें रहता उसके बहुतसा धन था॥७॥ वह प्रतिदिन पराये अन्नसे भोजन करता जब वह वृद्ध अवस्थाको प्राप्त भया तब उज्जैनपुरीको त्यागके ॥८॥ वसंतपुरमें तिस अपने मित्रके पास आया तब तिस अहीरने मित्रभावसे तिसको अपने घरमें बसा लिया ॥ ९ ॥ हे देवि! वह ब्राह्मण तिसके प्रीतिसे बहुत कालतक वास करता भया और वह-अहीर सुवर्णको देख अत्यंत प्रसन्न होता भया॥१०॥ तिसके सुवर्णको ग्रहण करके अपने घरमें स्थापित किया तब द्रव्यके शोकसे ब्राह्मणने अत्यंत कष्ट पाया ॥११॥ महाशोकसे युक्त हुआ काशीजीमें चला गया वह ब्राह्मण सुवर्णके शोकसे शरीरभी त्यागता

शूद्रेणैव महादेवि तस्य स्वर्णं प्रभुज्यते ॥
ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत् ॥ १३ ॥
नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातना ॥ १४ ॥
ततस्तेन तु प्रेतत्वं भुक्तमब्दसहस्रकम् ॥
उलूकत्वं वरारोहे कौशिक्या निकटे ततः ॥ १५ ॥
सरय्वा उत्तरे कूले मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥
मध्यदेशे च भो देवि पत्न्या सह वरानने ॥ १६ ॥
धनधान्यसमायुक्तो राजसेवासु तत्परः ॥
जातः पुनर्वसोर्देवि प्रथमे चरणे खलु ॥ १७ ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि यतो गोशतदत्तवान् ॥
भूपतित्वं ततो देवि धनाढ्यत्वं भवेत् खलु ॥ १८ ॥
ब्राह्मणस्य हृतं स्वर्णं स्वयं चौर्येण यत्पुरा ॥
तेन पापेन भो देवि पुत्रस्य मरणं खलु ॥ १९ ॥

भया ॥१२॥ हे महादेवि ! शूद्रने तिसका सुवर्ण भोगा पीछे बहुत काल बीत चुका तब तिसकी मृत्यु हो गई ॥१३॥ धर्मराजका दूत यमकी आज्ञासे नरकमें पटकता भया साठ हजार वर्षोंतक नरककी पीडा भोगी ॥१४॥ पीछे उसने हजार वर्षोंतक प्रेतयोनि भोगी । हे वरारोहे ! पीछे कौशिकीनदीके निकट उल्लू भया ॥ १५ ॥ फिर सरयूनदीके उत्तर किनारेपर मनुष्य भया ! हे देवि ! मध्यदेशमें स्त्रीसहित है ॥१६॥ धनधान्यसे युक्त और राजाकी सेवामें तत्पर है । हे देवि ! सो यही पुनर्वसुके प्रथमचरणमें जन्मा है॥१७॥ हे देवि ! इसने पूर्वजन्ममें सौ (१००) गौओंका दान किया था इसलिये राजकार्यमें युक्त है और धनाढ्य है ॥१८॥ ब्राह्मणका सुवर्ण आपही

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु पार्वति ॥
गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ २० ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां याः फलेति तथा प्रिये ॥
लक्षत्रयं जपं कुर्याद्दशांशहवनं ततः ॥ २१ ॥
तर्पणं मार्जनं चैव दशांशः क्रमतस्तथा ॥
हरिवंशस्य श्रवणं चण्डिकार्चनमेव च ॥ २२ ॥
शिवार्चनमशेषेण वापिकां चैव कारयेत् ॥
कूपं चैव तडागं च पथि मध्ये च कारयेत् ॥ २३ ॥
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं शनौ चाश्वत्थपूजनम् ॥ २४ ॥
पलसप्तदशेनैव प्रतिमां कारयेद्बुधः ॥
चतुष्कोणगतां वेदीं रौप्यैर्दशपलान्वितैः ॥ २५ ॥

हरा था पहले चोरी करी थी । हे देवि ! इसलिये उसके पुत्रका मरना होता है॥१९॥ हे पार्वति ! तिसकी शांतिको कहेंगे सुन घरके वित्तसे आठवें भाग द्रव्यको पुण्यके कार्यमें खर्च करे ॥ २० ॥ हे प्रिये ! गायत्री तथा " जातवेदसे सुनवाम० याः फला० " इन मन्त्रोंकरके तीन लाख जप करावे फिर तद्दशांश हवन करावे॥२१॥ तर्पण तथा मार्जनभी दशांशक्रमसे करावे हरिवंशको सुने देवीका पूजन करे ॥ २२ ॥ अच्छे प्रकारसे शिवपूजन करे बावडी खुदवावे मार्गमें कुवा खुदवावे तालाव बनवावे ॥ २३ ॥ कोहला अर्थात् पेठेको पञ्चरत्नसे भरके गङ्गाजीमें दान करे शनिवारके दिन पीपल वृक्षका पूजन करे ॥ २४॥ सतरह पल सुवर्णकी प्रतिमा बना फिर दश पलप्रमाण चांदीकी चतुष्कोण वेदी बनावे ॥ २५ ॥

तन्मध्ये प्रतिमां स्थाप्य सपुत्रस्य द्विजस्य तु ॥
पूजां कुर्यात्तु वै भक्त्या मन्त्रेणानेन वै शिवे ॥२६॥
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ ब्रह्मणे नमः ॥
ॐ अनन्ताय नमः ॥ ॐ पुरुषाय नमः ॥
ॐ पुरुषोत्तमाय नमः ॥ ॐ शार्ङ्गिणे नमः ॥
ॐ पीताम्बराय नमः ॥ ॐ चक्रपाणये नमः ॥
ॐ अच्युताय नमः ॥ ॐ गदाधराय नमः ॥
वासुदेवादिदशभिर्मन्त्रैरेभिः पृथक् पृथक् ॥
पूजयेत्प्रतिमां तां तु ततो दद्याद्द्विजन्मने ॥ २७ ॥
पूजयेद्देवदेवेशं सर्वपापापनुत्तये ॥
ततः संप्रार्थ्य देवेशं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ २८ ॥
पीताम्बरं चतुर्बाहुं पुण्डरीकनिभेक्षणम् ॥
वासुदेवं जगन्नाथं धराधरगुरो हरे ॥ २९ ॥

हे शिवे ! तिसके ऊपर पुत्रसहित तिस ब्राह्मणकी प्रतिमाको स्थापित कर उस मूर्तिको भक्तिसे इस मन्त्रकरके पूजे ॥२६॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय १ ॐ ब्रह्मणे नमः २ ॐ अनन्ताय नमः ३ ॐ पुरुषाय नमः ४ ॐ पुरुषोत्तमाय नमः ५ ॐ शार्ङ्गिणे नमः ६ ॐ पीताम्बराय० ७ ॐ चक्रपाणये० ८ ॐ अच्युताय नमः ९ ॐ गदाधराय नमः १० ऐसे इन वासुदेव आदि दश मन्त्रोंकरके पृथक् २ तिस प्रतिमाका पूजन कर पीछे ब्राह्मणके अर्थ दान कर देवे॥२७॥ संपूर्ण पाप दूर होनेके वास्ते शंखचक्रगदाधारी विष्णु भगवान् देवेशकी प्रार्थना कर विष्णुका पूजन करे ॥ २८ ॥ पीतांबरधारी चतुर्भुज कमलनेत्र वासुदेव जगन्नाथ ऐसे तिनकी प्रार्थना करे ।

मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर ॥
ततो गां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सनूपुराम् ॥३०॥
विधिवद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय तपस्विने ॥
दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ ३१ ॥
भूमिदानं ततो दद्याद्विप्राय विदुषे ततः ॥
एवं कृते न संदेहः पूर्वपापं विनश्यति ॥ ३२ ॥
सन्तानं जायते देवि रोगाणां संक्षयस्ततः ॥
कन्यका नैव जायन्ते वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥३३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य प्रथमचरणे प्रायश्चित्तकथनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥२८॥

हे धरणीधर ! हे गुरो ! हे हरे ! ॥ २९ ॥ हे परमेश्वर ! पूर्वजन्ममें किये हुए मेरे पापकी क्षमा करो ऐसे कह पीछे सुवर्णकी सींगडी और खुरियोंसे युक्त की हुई कपिला गौका दान करे ॥ ३० ॥ वेदके जाननेवाले तपस्वी ब्राह्मणके अर्थ दश प्रकारकी गौओंका विधिपूर्वक दान करे पीछे ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ ३१ ॥ तिससे पीछे वेदके जाननेवाले ब्राह्मणको पृथिवीका दान देवे ऐसे करनेसे पूर्व किये पाप नष्ट होते हैं इसमें सन्देह नहीं है ॥ ३२ ॥ हे देवि ! पीछे सन्तान उत्पन्न होती है और रोगोंका नाश होता है और पुत्रियोंकी उत्पत्ति नहीं होती वंध्यात्वधर्म दूर होता है ॥ ३३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीह० पुनर्वसुनक्षत्रस्य प्रथमचरणे प्रायश्चित्तकथनं नामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

अथ एकोनत्रिंशोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥
अवन्तीपुरतो देवि पूर्वे क्रोशप्रमाणतः ॥ १ ॥
लक्ष्मणस्य पुरं ख्यातं तत्रैव बहवो जनाः ॥
वसन्ति वैष्णवाः सर्वे वेदकर्मविचक्षणाः ॥ २ ॥
स्वर्णकारो वसत्येकः स्वकर्मनिरतः सदा ॥
दामोदर इति ख्यातस्तस्य पत्नी प्रभावती ॥ ३ ॥
विष्णुभक्तिरतः शान्तः सज्जनानां च सेवकः ॥
पत्नी पतिव्रता तस्य पतिशुश्रूषणे रता ॥ ४ ॥
तस्य पुत्रद्वयं जातं गुणज्ञं पितृसेवकम् ॥
एका च बल्लवी तत्र निवासाय तदागता ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं–हे देवि ! अब वह कहूंगा कि जो पूर्वजन्ममें कर्म किया है उज्जैन पुरीसे पूर्वदिशामें एक कोशमें विस्तारवाला ॥ १ ॥ लक्ष्मणजीका पुर विख्यात है तहां बहुतसे वैष्णवजन और सब वेदकर्मोंके जाननेवाले वास करते हैं ॥ २ ॥ तहां एक स्वर्णकार अर्थात् सुनार अपने कर्मको सदा करनेवाला दामोदर नामकरके विख्यात होता भया और तिसकी स्त्री प्रभावती नामवाली हुई ॥ ३ ॥ वह विष्णुकी भक्तिमें प्रीति करनेवाला शांतचित्तवाला सज्जनोंका दास था तिसकी स्त्री पतिव्रता पतिकी सेवा करनेवाली थी ॥ ४ ॥ तिस सुनारके दो पुत्र गुणवाले और पिताकी सेवा करनेवाले उत्पन्न हुए और तहां एक बल्लवी स्त्री अर्थात् गौओंको पालन करनेवाली वसनेके अर्थ आती भई ॥ ५ ॥

पुत्रद्वयसमायुक्ता बहुगोधनसंयुता ॥
एको द्यूतरतः पुत्रो द्वितीयश्चोरसंमतः ॥ ६ ॥
उपार्जितं महिषीस्वं गोधनं बहुधा तथा ॥
चोरद्यूतोपचाराभ्यां धनाढ्यत्वमजायत ॥ ७ ॥
दुग्धादिकं महादेवि भुज्यते प्रत्यहं तदा ॥
स्वर्णकारो महाद्रव्यामाभीरीं सर्वसंयुताम् ॥ ८ ॥
आनीतवान् स्वगेहे तां तदा च वरवर्णिनीम् ॥
ततो बहुगते काले महामारीज्वरादिना ॥ ९ ॥
पुत्राभ्यां सममद्राक्षीद्द्रव्या मरणं तदा ॥
द्रव्यं तस्यास्तदा देवि स्वर्णकारो गृहीतवान् ॥१०॥
भुक्तं द्रव्यं च तत्सर्वं यावत्तिष्ठति भूतले ॥
भार्यया सह पुत्राभ्यां महिषीगोधनादिकम् ॥ ११ ॥

दो पुत्रोंकरके युक्त और बहुतसे गोधनसे युक्त थी परन्तु तिसका एक पुत्र तो जूवा खेलनेवाला था और दूसरा चोरोंसे मिला हुआ था अर्थात् चोर था॥६॥ महिषीधन और अनेक प्रकारकी गौओंका धन उसने चोरीके कर्मसे सञ्चित किया तब वह धनाढ्य होता भया ॥७॥ हे देवि! दिन २ प्रति दूध आदि पदार्थोंको भोगता भया फिर वह सुनार महाद्रव्यवाली सर्ववस्तुयुक्त हुई तिस अहीरीको ॥ ८ ॥ अपने घरमें ले आता भया फिर बहुत दिन पीछे महामारी और ज्वर आदि करके॥९॥ पुत्रोंसहित वह अहीरी मर गई तब हे देवि! उसके द्रव्यको वह सुनार ग्रहण करता भया॥१०॥ जबतक पृथ्वीतलपर रहा (जीवनपर्यन्त) तिसके सम्पूर्ण द्रव्यको महिषी और गोधन आदिको स्त्रीपुत्रोंसहित होके भोगता भया ॥ ११ ॥

ततो वयोत्तरे देवि मृत्युस्तस्याभवत्किल ॥
पत्नी तस्य मृता साध्वी ताभ्यां स्वर्गमभूत्पुरा॥१२॥
पञ्च वर्षसहस्राणि स्वर्गे सुखमजीजनत् ॥
पुनः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं भवेद्भुवि ॥ १३ ॥
अयोध्यानगराद्देवि सरय्वा उत्तरे तटे ॥
क्रोशद्वये विशालाक्षि पुरे देहलसंज्ञके ॥ १४ ॥
स्वकर्मनिरतः प्राज्ञः स्वविद्यायां विचक्षणः ॥
स्वदेशे चैव विख्यातः शत्रूणां च विमर्दनः ॥ १५ ॥
पुनर्विवाहिता पत्नी साध्वी या पूर्वजन्मनि ॥
तस्य नेत्रे विशालाक्षि पूर्वजन्मफलाद्धृते ॥ १६ ॥
बाल्ये चैव तु पुत्रस्य नेत्रं वामं प्रणाशितम् ॥
तेन पापेन भो देवि गतं नेत्रद्वयं शिवे ॥ १७ ॥

हे देवि! फिर अवस्था पूरी हो ली तब तिसकी मृत्यु हो गई और वह पतिव्रता तिसकी स्त्रीभी मर गई तब उनसे पहले स्वर्ग प्राप्त भया ॥ १२ ॥ पांच हजार वर्षोंतक स्वर्गमें वास रहा फिर पुण्य क्षीण हो गया तब मनुष्यशरीर भया है ॥ १३ ॥ हे देवि ! सरयू नदीके उत्तर किनारेपर अयोध्यानगरीसे दो कोशपर देहल नाम पुरमें॥१४॥ अपने कर्ममें तत्पर विद्वान् अपनी विद्यामें निपुण अपने देशमें विख्यात शत्रुओंको नष्ट करनेवाला है ॥१५॥ जो पूर्वजन्ममें इसकी पतिव्रता स्त्री थी वही फिर विवाही गई है। हे विशालाक्षि! पूर्वजन्मके फलसे तिसके नेत्र चले गये अर्थात् अन्धा है ॥ १६ ॥ हे देवि ! इसने बालक अवस्थामें पुत्रका वाम नेत्र नष्ट कर दिया था। हे शिवे ! तिस पापसे इसके दोनों नेत्र नष्ट हो गये ॥ १७॥

भक्षितं तस्य तत्स्वर्णं न दत्तं ब्राह्मणाय वै ॥
तेन पापेन भो देवि मृतः पुत्रो वरः शुभे ॥ १८ ॥
मित्रसंबन्धतः पापात् पुत्रपौत्रद्वयं मृतम् ॥
पूर्वजन्मकृतं देवि शुभाशुभफलं तथा ॥ १९ ॥
भुज्यते प्राणिभिः सर्वैस्तथा देवि विशेषतः॥
म्लेच्छसेवारतो नित्यं म्लेच्छस्यैव च संगतिः॥२०॥
कुमार्गतो भवेद्देवि मर्त्यलोके जनिर्यदा ॥
शान्तिं शृणु महादेवि पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ २१ ॥
गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां याः फली त्र्यम्बकेण वा ॥२२॥
विष्णोरराटमन्त्रेण जपं वै कारयेत्तथा ॥
पञ्चलक्षप्रमाणेन यथा पापं प्रणश्यति ॥ २३ ॥

पूर्व जन्ममें तिस अहीरका सुवर्ण भोगा ब्राह्मणके अर्थ दान न दिया। हे देवि! हे शुभे! तिस पापसे इसका उत्तम पुत्र मर गया है॥१८॥ मित्रसम्बन्धी पाप होनेसे पुत्र और पौत्र दोनों मर गये। हे देवि! पूर्वजन्ममें किया हुआ शुभाशुभ फल ॥ १९ ॥ सम्पूर्ण प्राणियोंसे विशेषकरके इस जन्ममें भोगा जाता है। हे देवि! पूर्वजन्ममें नित्य यह म्लेच्छकी सेवामें रहता इसलिये म्लेच्छकीही सङ्गति हुई है ॥२०॥ जब मृत्युलोकमें जन्म भया तबसेही कुमार्गमें रहता। हे देवि! पूर्वपापको नष्ट करनेवाली शांतिको सुनो ॥२१॥ घरके वित्तसे आठवें भाग धनको पुण्यके कार्यमें खर्च करे। गायत्री० याः फली० मन्त्र, जातवेदसे सुन० यह मन्त्र, त्र्यंबकमंत्र ॥२२॥ अथवा विष्णोरराट० इन मंत्रोंकरके पांच लाख प्रमाण जप

होमं वै कारयेद्देवि दशांशं विधिपूर्वकम् ॥
ततो वै तर्पणं कुर्यान्मार्जनं तु विशेषतः ॥ २४ ॥
प्रतिमां कारयेत्तद्वद्विष्णोश्चैव सदाशिवे ॥
अष्टादशपलस्यैव सुवर्णस्य हरिं विभुम् ॥ २५ ॥
तद्वदेव शिवस्यैव रजतस्य परं विभुम् ॥
प्रतिमां पूजयेद्देवि मन्त्रेणानेन सुव्रते ॥२६॥
ॐ गरुडध्वज देवेश चराचरगुरो हरे ॥
वासुदेव जगन्नाथ पूर्वपापं विनाशय ॥ २७ ॥
ॐ नन्दिकेश्वर भूतेश देवदेव सुरेश्वर ॥
मम पूजां गृहाण त्वं पूर्वपापं प्रणाशय ॥ २८ ॥
ततः इन्द्रादिदशदिक्पालान् पूजयेत् ॥
ॐ इन्द्राय नमः ॐ अग्नये नमः ॐ यमाय
नमः ॐ निर्ऋतये नमः ॐ वरुणाय नमः ॐ

करावे तब संपूर्ण पाप नष्ट होवे॥२३॥ विधिपूर्वक दशांश होम करावे तिससे अनन्तर तर्पण और मार्जन करावे ॥२४॥ हे सदाशिवे ! अठारह पल सुवर्णकी हरिविष्णुभगवान्‌की मूर्ति बनवावे ॥ २५ ॥ इसी तरह अठारह पलप्रमाण चांदीकी शिवकी मूर्ति बनवावे । हे देवि ! हे सुव्रते ! पीछे इस मन्त्रकरके पूजन करे ॥ २६ ॥ ॐ हे गरुडध्वज ! हे चराचरके गुरु ! हे हरे ! हे वासुदेव ! हे जगन्नाथ ! मेरे पूर्वपापको नष्ट करो ॥ २७ ॥ ॐ हे नंदिकेश्वर ! हे भूतेश ! हे देवदेव ! हे सुरेश्वर ! तुम मेरी पूजाको ग्रहण करो । पूर्वजन्मके पापको नष्ट करो ॥ २८ ॥ पीछे इन्द्र आदि दश दिग्पालोंका पूजन करे । ॐ इंद्राय नमः १ ॐ अग्नये० २ ॐ यमाय० ३ ॐ निर्ऋत० ४ ॐ वरुणाय० ५ ॐ वायवे० ६ ॐ कुबेराय नमः ७

वायवे नमः ॐ कुबेराय नमः ॐ ईशानाय नमः
ॐ ब्रह्मणे नमः ॐ अनन्ताय नमः॥
गन्धपुष्पाक्षतैः सर्वान्पूजयेच्च पृथक् पृथक् ॥
ततो गां कपिलां देवि स्वर्णशृङ्गीं प्रपूजयेत् ॥ २९ ॥
मन्त्रेणानेन भो देवि सर्वपापहरां शुभाम् ॥
ॐनमो भगवत्यै कामेश्वर्यै मम पापं व्यपोहतु स्वाहा॥
पुरा मम कृतं पापं कामधेनो सुरेश्वरि ॥
कपिले त्वं जगन्मातर्मम कार्यं प्रसाधय ॥ ३० ॥
ततश्च दद्याद्गां देवि ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥
दशवर्णास्ततो दद्यात् पात्राणि विविधानि च ॥३१॥
वृषभं च ततो देवि नीलवर्णं सुसंस्कृतम् ॥
ब्राह्मणाय प्रदद्यात्तु सर्वपापस्य संक्षयः ॥ ३२ ॥

ॐ ईशानाय० ८ ॐ ब्रह्मणे० ९ ॐ अनंताय नमः १० ऐसे इनका नाम उच्चारण कर गंध पुष्प अक्षत आदिकों करके सबों-को पृथक् पृथक् पूजे । हे देवि ! पीछे सुवर्णकी सींगडियोंसे युक्त की हुई कपिला गौका पूजन करे ॥२९॥ हे देवि ! सम्पूर्ण पापोंको हरनेवाली शुभकपिला गौको इस मंत्रसे पूजे। मंत्रः ॐ नमो भग-वत्यै कामेश्वर्यै मम पापं व्यपोहतु स्वाहा । पहिले किये हुए मेरे पापको दूर करो । हे कामधेनो ! हे सुरेश्वरि ! ! हे कपिले ! ! ! तुम जगत्की माता हो मेरे कार्यको सिद्ध करो ॥ ३० ॥ हे देवि ! पीछे शिवस्वरूपी ब्राह्मणके अर्थ तिस गौका दान कर देवे पीछे दश प्रकारके वर्णोंवाली गौओंका दान करे और अनेक प्रकारके पात्रोंका दान करे । हे देवि ! पीछे अलंकृत किये हुए नील वृष-भको ब्राह्मणके अर्थ देवे तब पाप नष्ट होवे ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

भोजयेद्विविधैरन्नैः पायसैश्च समोदकैः ॥
ब्राह्मणान् शतसंख्याकान् रुद्रविष्णुस्वरूपिणः ३३॥
प्रतिमां दापयेत्पश्चाद्ब्राह्मणाय वराय च ॥
बन्धुभिः सह भुञ्जीत ततो विप्रविसर्जनम् ॥ ३४ ॥
यथाशक्ति प्रदद्याद्वै ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणाम् ॥
हरिवंशस्य श्रवणं पार्थिवस्य च पूजनम् ॥ ३५ ॥
भूमिदानं विशेषेण ब्राह्मणाय च दापयेत् ॥
एवं कृते वरारोहे पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥ ३६ ॥
पापं प्रशमयेच्छीघ्रं मम वाक्यं च नान्यथा ॥
रोगादिविविधं दुःखं तत्सर्वं विलयं व्रजेत् ॥ ३७ ॥
वंशवृद्धिर्भवेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ ३८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥२९॥

अनेक प्रकारके अन्नोंकरके दूधके पदार्थ और लड्डू आदिकोंकरके शिवविष्णुस्वरूपी सौ (१००) ब्राह्मणोंको भोजन करवावे ॥ ३३॥ पीछे तिस मूर्तिको उत्तम ब्राह्मणके अर्थ दान देवे और बंधुजनोंसे युक्त होके भोजन करे पीछे ब्राह्मणोंका विसर्जन करे ॥ ३४ ॥ शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंके अर्थ दक्षिणा देवे हरिवंश पुराणको सुने पार्थिव शिवका पूजन करे ॥ ३५ ॥ विशेषकरके ब्राह्मणके अर्थ पृथ्वीका दान देवे । हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे पूर्वजन्मका पाप दूर होता है ॥ ३६ ॥ पाप शीघ्रही शांत होता है यह मेरा वचन अन्यथा नहीं है रोग आदि जो अनेक दुःख हैं वे सब शीघ्रही नष्ट होवें ॥ ३७ ॥ हे देवि ! वंशकी वृद्धि होवे इसमें कुछ विचार नहीं ॥ ३८ ॥

इति श्रीकर्मवि० पुनर्वसु० द्वितीयचरणप्रा० नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥२९॥

अथ त्रिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

पुर्यामवन्तिकायां वै नापितो वसति प्रिये ॥
स्वकर्मणः परिभ्रष्टः कृषिकर्मरतः सदा ॥ १ ॥
पत्नी तस्य महादेवि परपुंसि रता सदा ॥
कर्कशा नाम विख्याता दर्दुरा नाम्न नामतः ॥ २ ॥
एकस्मिन् दिवसे देवि वैश्यो धनसमन्वितः ॥
स्वर्णकोटिं च संगृह्य निकटे तस्य चागतः ॥ ३ ॥
नापितेन ततो देवि वैश्यो धनसमन्वितः ॥
अर्द्धरात्रे गते काले ततः खड्गेन वै हतः ॥ ४ ॥
द्रव्यं सर्वं गृहीत्वा तु तां पुरीं च ततस्त्यजन् ॥
सर्वं स्वर्णं व्ययीकृत्वा न दानं च कृतं क्वचित् ॥५ ॥
एकदा समये देवि नापितेन सह स्त्रिया ॥
प्रयागे मकरे मासि मासमेकं निरन्तरम् ॥ ६ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! उज्जैननगरीमें एक नाई वसता भया वह अपने कर्मसे भ्रष्ट था और सदा खेतीका काम किया करता ॥ १ ॥ हे महादेवि ! तिसकी स्त्री सदा परपुरुषसे रमण करती कर्कशा थी और दर्दुरा नामवाली थी ॥ २ ॥ हे देवि ! एक दिन एक धनाढ्य वैश्य किरोड रुपय्योंके सुवर्णको ग्रहण कर तिसके पास आया ॥ ३ ॥ हे देवि ! तब वह धनसे युक्त हुआ वैश्य नाईने अर्द्धरात्रीके समय तलवारसे मार दिया ॥ ४ ॥ फिर संपूर्ण द्रव्यको ग्रहण कर तिस पुरीको त्यागता भया संपूर्ण सुवर्ण खर्च कर दिया कुछभी दान न किया ॥ ५ ॥ हे देवि ! एक समय

प्रत्यहं क्रियते स्नानं प्रातःकाले सदाशिवे ॥
गोदानं च कृतं तेन वृषभं स्वर्णभूषितम् ॥ ७ ॥
ततो वै मरणं तस्य नापितस्य सुरेश्वरि ॥
निर्जले तस्य भो देवि चोपले पथि मध्यगे ॥ ८ ॥
यमदूतैर्महादेवि नरके नाम कर्दमे ॥
क्षिप्तो यमाज्ञया वर्षसहस्रं षष्टिसंमितम् ॥ ९ ॥
नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥
पुनर्महिषयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः ॥ १० ॥
ऋक्षे पुनर्वसौ देवि तृतीयचरणे वरे ॥
प्रातःस्नानफलं देवि नृपवंशसमुद्भवः ॥ ११ ॥
मध्यदेशे वरारोहे सरय्वा उत्तरे तटे ॥
महाधनेन संयुक्तश्चौराणां कर्मकारकः ॥ १२ ॥

तिस नाईने स्त्रीसहित होके माघमहीनेमें प्रयागजीमें निरंतर ॥ ६॥ दिन २ प्रति प्रातःकाल स्नान किया । हे सदाशिवे ! फिर गोदान किया और स्वर्णसे विभूषित किये हुए बैलका दान किया ॥ ७ ॥ हे सुरेश्वरि ! पीछे तिस नाईका मरना मार्गमें कहीं निर्जलस्थानमें एक पत्थरपर हुआ ॥ ८ ॥ हे महादेवि ! पीछे धर्मराजके दूतोंने यमकी आज्ञासे साठ हजार वर्षोंतक नरकमें गेर रक्खा ॥ ९ ॥ हे देवि ! नरकसे निकल व्याघ्रकी योनिको प्राप्त भया पीछे भैंसेकी योनिको प्राप्त भया फिर मनुष्य भया ॥ १० ॥ हे देवि ! पुनर्वसुनक्षत्रके तीसरे चरणमें जन्मनेवाला यह प्रातःकाल स्नानके फलसे राजकुलमें उत्पन्न भया है ॥ ११ ॥ हे वरानने ! मध्यदेशमें सरयूनदीके उत्तर तटपर महाधनसे युक्त है चौरोंका कर्म करनेवाला

पत्नी तस्य भवेद्वन्ध्या मृतवत्सा सुतायुता ॥
कफरोगसमायुक्ता ज्वरेणैव प्रपीडिता ॥ १३ ॥
मित्रस्यैव वधः पूर्वं नापितेन यतः कृतः ॥
तेन कर्मफलेनैव महारोगसमुद्भवः ॥ १४ ॥
पुत्रोऽपि जायते देवि तस्य मृत्युर्भवेत् किल ॥
शान्तिं तस्य प्रवक्ष्यामि शृणु देवि समासतः ॥१५॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपो यदा ॥
तदा पापं क्षयं याति पूर्वजन्मनि यत्कृतम् ॥ १६ ॥
हरिवंशस्य श्रवणं चण्डीपाठं शिवार्चनम् ॥
विधिवद्देवि कर्तव्यं पापं सर्वं विनश्यति ॥ १७ ॥
चतुरस्रे ततः कुण्डे होमं चैव तु कारयेत् ॥
तिलधान्यादिभिर्देवि दशांशजपसंख्यया ॥ १८ ॥
वैश्यस्य प्रतिमां देवि कारयेद्वै सुवर्णतः ॥
पञ्चविंशपलेनैव रचितां च प्रयत्नतः ॥ १९ ॥

है ॥१२॥ तिसकी स्त्री वंध्या है अथवा संतान नहीं जीवती है वा कन्याही जन्मती है कफरोगसे युक्त है अथवा ज्वरसे पीडित है ॥१३॥ इसमें जो पूर्वजन्ममें (नाईकी योनिमें) मित्रका वध किया तिस कर्मफलसे यह महारोगसे युक्त है ॥ १४ ॥ हे देवि ! पुत्रभी जन्मा था तिसकी मृत्यु हो गई अब तिसकी शांति कहेंगे । हे देवि ! संक्षेपसे सुन ॥ १५ ॥ जब गायत्रीमूलमंत्रसे पांच लक्ष जप करावे तब पूर्वजन्मका पाप नष्ट हो ॥१६॥ हरिवंशको सुने दुर्गापाठ करावे विधिसे शिवजीका पूजन करे । हे देवि ! ऐसे करनेसे संपूर्ण पाप नष्ट होवे ॥ १७ ॥ पीछे जपोंकी दशांश संख्यासे चौकुंटे कुंडमें तिलधान्य आदिकोंसे होम करे ॥१८॥ हे देवि ! सुवर्णकी वैश्यकी

ताम्रपात्रे शुभे स्थाप्य पूजयेत्प्रतिमां ततः ॥
मन्त्रेणानेन भो देवि गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥ २० ॥
ॐ नमस्ते देवदेवेश शङ्खचक्रगदाधर ॥
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा मया पापं कृतं पुरा ॥ २१ ॥
तत्सर्वं क्षम्यतां देव शरणागतवत्सल ॥
ॐ चक्रधराय नमः ॐ गोविन्दाय नमः ॐ दामोदराय नमः ॐ कृष्णाय नमः ॐ हंसाय नमः ॐ परमहंसाय नमः ॐ अच्युताय नमः ॐ हृषीकेशाय नमः ॥
ॐ चक्रादिनामभिश्चैतैः सर्वदिक्षु प्रपूजयेत् ॥
प्रतिमां पूजयित्वा तु तां विप्राय प्रदापयेत् ॥२२॥
ततो गां कृष्णवर्णां तु ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥
पञ्चसंख्यमितं देवि प्रदद्याद्वै कुटुम्बिने ॥ २३ ॥

मूर्ति बनावे यत्नसे पचीस पलकी मूर्ति बनावे ॥१९॥ फिर उत्तम तांबेके पात्रमें तिस मूर्तिको स्थापित कर पीछे गंध अक्षता आदिकोंकरके इस मंत्रकरके पूजन करे ॥२०॥ मंत्र । ॐ हे देवदेवेश! हे शंखचक्रगदाधर! अज्ञानसे अथवा प्रमादसे मैंने पूर्वजन्ममें पाप किया ॥ २१ ॥ हे शरणागतवत्सल! तिस संपूर्णको क्षमा करो । ॐ चक्रधराय नमः १ ॐ गोविंदाय० २ ॐ दामोदराय नमः ३ ॐ कृष्णाय० ४ ॐ हंसाय० ५ ॐ परमहंसाय० ६ ॐ अच्युताय० ७ ॐ हृषीकेशाय नमः ८ ऐसे इन चक्रधरनामोंकरके संपूर्ण दिशाओंमें पूजे प्रतिमाका पूजन करके ब्राह्मणके अर्थ देवे ॥ २२ ॥ पांच काली गौओंका दान कुटुंबी ब्राह्मणके अर्थ देवे ॥ २३ ॥

ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि यथासंख्यान्वरानने ॥
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ २४ ॥
वन्ध्यात्वं नाशयत्याशु सर्वरोगो विनश्यति ॥ २५ ॥
इति श्रीकर्मवि० पार्वतीहरसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य तृतीय-
चरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

अथ एकत्रिंशोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

अवन्त्याः पश्चिमे देवि कोशमात्रोपरि प्रिये ॥
कैवर्त्तको वसत्येको नन्दने च पुरे शुभे ॥ १ ॥
मनोहर इति ख्यातो धनाढ्यो जायते महान् ॥
मत्ता तस्याऽभवत्पत्नी पतिशुश्रूषणे रता ॥ २ ॥
मत्स्यमांसस्य भो देवि विक्रयं चाकरोत् खलु ॥
संचितं बहुरत्नं च न दानं बहुधाकरोत् ॥ ३ ॥

हे देवि ! यथासंख्य शक्तिके अनुसार ब्राह्मणभोजन करावे । हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे शीघ्रही पुत्र होवे ॥२४॥ शीघ्रही वंध्यापन दूर होवे और संपूर्ण रोग नष्ट होवे ॥ २५ ॥

इति श्रीकर्मविपाक० पुनर्वसुनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

हे देवि ! अवन्ती नगरीसे पश्चिमकी तर्फ एक कोशपर नंदन नामक पुरमें एक धीवर वसता था ॥ १ ॥ सो मनोहर इस नामसे विख्यात धनाढ्य था मत्ता नामवाली जिसकी स्त्री पतिकी सेवा करनेवाली थी ॥ २ ॥ हे देवि ! वह सदा मत्स्योंके मांसका विक्रय

एकदा चन्द्रग्रहणे शतस्वर्णयुतं वृषम् ॥
अदाद्विप्राय विदुषे भार्यया सह भक्तितः ॥ ४ ॥
ततो मृत्युवशं यातो भार्या तस्य मृता पुरा ॥
यमदूतैर्महाघोरैर्नरके पातितं पुरा ॥ ५ ॥
यमाज्ञया महादेवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥
नरकान्निःसृतो देवि शृगालो गहने वने ॥ ६ ॥
पुनः काको वरारोहे ततो भवति मानुषः ॥
गुणज्ञो देवताभक्तो वेश्यासुरततत्परः ॥ ७ ॥
रागी सूक्ष्मतनुर्वक्ता ज्ञानवान् सुतवर्जितः ॥
तस्य भार्या भवेत्स्थूला कुरूपा कर्कशा तथा ॥ ८ ॥
पूर्वजन्मप्रसंगाच्च मत्स्यमांसोपभोगिनी ॥
मासि पुष्पं भवेद्देवि गर्भस्य पतनं तथा ॥ ९ ॥

करता था उसने बहुत धन संचित किया परंतु बहुतसा दान नहीं किया ॥ ३ ॥ एक समय चंद्रमाके ग्रहणमें सौ (१००) महोरोंसे युक्त कर एक बैलको विद्वान् ब्राह्मणके अर्थ स्त्रीसहित होके भक्तिसे दान देता भया ॥ ४ ॥ पीछे मृत्युके वशमें आ गया और इसकी स्त्री पहलेही मर गई थी फिर महाघोर धर्मराजके दूतोंने नरकमें पटक दिया ॥ ५ ॥ हे महादेवि ! यमकी आज्ञासे साठ हजार वर्षोंतक वह नरकमें रहा फिर नरकसे निकसके गहर वनमें गीदड भया है ॥ ६ ॥ हे वरारोहे ! पीछे काग भया पीछे मनुष्य भया गुणज्ञ है और देवताका भक्त है परंतु वेश्यागामी है ॥ ७ ॥ प्रीति करनेवाला सूक्ष्म शरीरवाला कहनेवाला तथा ज्ञानवान् है पुत्ररहित है तिसकी भार्या स्थूल शरीरवाली है कुरूपा और कर्कशा है ॥ ८ ॥ हे देवि ! पूर्वजन्मके प्रसंगसे मत्स्यमांसको खा-

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ॥
यत्कृतेन वरारोहे शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥ १० ॥
हरिवंशस्य श्रवणं त्रिवारं च विधानतः ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं तथा ॥ ११ ॥
दशांशं हवनं देवि दशांशं चैव तर्पणम् ॥
मार्जनं च विशेषेण दशांशं चैव कारयेत् ॥ १२ ॥
ततो गां कपिलां दद्याद्दशवर्णां ततः प्रिये ॥
सूर्यस्य प्रतिमां देवि स्वर्णैर्दशपणैस्तथा ॥ १३ ॥
भूषितां विविधैर्वस्त्रैः स्वर्णरौप्यविभूषणैः ॥
पूजयित्वा विधानेन मन्त्रेणानेन पार्वति ॥ १४ ॥
ॐ त्वं ज्योतिः सर्वलोकानां पूज्यस्त्वं सर्वदेहिनाम् ॥
पूर्वजन्मकृतं पापं हर मे तिमिरापह ॥ १५ ॥

नेवाली है महीने २ के प्रति रजस्वला होती है परंतु गर्भपात होता है ॥ ९ ॥ अब इसकी शांति कहेंगे । हे देवि ! हे सुशोभने ! जिसके करनेसे शीघ्रही पुत्र उत्पन्न होता है ॥ १० ॥ विधिपूर्वक तीन वार हरिवंशको सुने गायत्री मूलमंत्रसे पांच लाख जप करावे ॥ ११ ॥ हे देवि ! दशांश होम करावे दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे ॥ १२ ॥ पीछे कपिला गौका दान करे और दशवर्णवाली गौका दान करे दश तोले प्रमाण सुवर्णकी सूर्यकी मूर्ति बनवावे ॥ १३ ॥ पीछे अनेक वस्त्रोंसे विभूषित कर सोना-चांदीके विभूषणोंसे युक्त कर हे पार्वति ! विधानकरके इस मंत्रसे पूजे ॥ १४ ॥ ॐ तुम संपूर्ण लोकोंकी ज्योति हो संपूर्ण देहधारियोंके पूज्य हो । हे तिमिरनाशक ! मेरे पूर्वजन्मकृत पापको

ॐ श्रीसूर्याय नमः ॐ सवित्रे नमः ॐ साक्षिणे
नमः ॐ त्रिगुणात्मने नमः ॐ द्वादशात्मने नमः
ॐ केयूरधारिणे नमः ॐ तीक्ष्णांशुधारिणे नमः
ॐ कलाकाष्ठादिरूपिणे नमः ॐ विष्णवे नमः
ॐ ब्रह्मणे नमः ॐ रुद्राय नमः ॐ मार्तण्डाय नमः ॥
ॐ मन्त्रैर्द्वादशभिर्देवि पूजयेत्प्रतिमां ततः ॥
धूपदीपादिभिश्चैव ताम्बूलैश्च विधानतः ॥ १६ ॥
पूजितां प्रतिमां दद्याद्ब्राह्मणाय वराय च ॥
दासीं दासं धनं धान्यं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ १७ ॥
अश्वदानं रथं वस्त्रं पात्राणि विविधानि च ॥
शय्यादिकं वरारोहे वित्तशाठ्यं न कारयेत् ॥ १८ ॥
एवं कृते न संदेहश्चिरंजीविसुतं लभेत् ॥
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न चान्यथा ॥ १९ ॥

हरो॥१५॥ ॐ श्रीसूर्याय नमः १ ॐ सवित्रे न० २ ॐ साक्षिणे० ३ ॐ त्रिगुणात्मने० ४ ॐ द्वादशात्मने० ५ ॐ केयूरधारिणे० ६ ॐ तीक्ष्णांशुधारिणे० ७ ॐ कलाकाष्ठादिरूपिणे० ८ ॐ विष्णवे० ९ ॐ ब्रह्मणे० १० ॐ रुद्राय० ११ ॐ मार्तंडाय नमः १२। हे देवि ! इन बारह मंत्रोंकरके धूप दीप आदिकोंसे तथा नागरपान समर्पण कर विधिसे पूजन करे ॥१६॥ पूजा की हुई मूर्तिको उत्तम ब्राह्मणके अर्थ दान दे देवे। दास, दासी, धन, धान्य येभी सब वस्तु ब्राह्मणके अर्थ देवे ॥ १७ ॥ अश्व, रथ अनेक प्रकारके वस्त्र इन सबोंकाभी दान करे। हे वरारोहे ! वित्तशाठ्य अर्थात् कृपणता नहीं करे ॥ १८ ॥ ऐसे करनेसे निश्चय चिरंजीवी पुत्रकी प्राप्ति होती है और पूर्वजन्ममें किया हुआ पाप नष्ट होता है ॥ १९ ॥

सप्तम्यां रवियुक्तायां व्रतं कुर्यात्सुरेश्वरि ॥
पापं व्याधिः क्षयं याति ज्वरः क्वापि न जायते ॥२०॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुनर्वसुनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकत्रिंशोऽध्यायः ॥३१॥

अथ द्वात्रिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

पापेन जायते व्याधिः पापेनैवासुतो भवेत् ॥
पापेन जायते मूर्खः पापेनैव दरिद्रता ॥ १ ॥
पूर्वजन्मकृतं यत्तु पापं वा पुण्यमेव वा ॥
इह जन्मनि भो देवि भुज्यते सर्वदेहिभिः ॥ २ ॥
पुण्येन जायते विद्या पुण्येन जायते सुतः ॥
पुण्येन सुन्दरी नारी पुण्येन लभते श्रियम् ॥ ३ ॥

हे सुरेश्वरि ! रविवारके दिन सप्तमीका व्रत करे । हे सुरेश्वरि ! ऐसे करनेसे संपूर्ण पाप और व्याधि नष्ट होती है और ज्वर कहींभी नहीं रहता है ॥ २० ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पुनर्वसुनक्षत्रस्य नामैकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

शिवजी कहते हैं-पापसे व्याधि होती है और पापसेही पुत्र नहीं होता पापसेही मूर्ख होता है पापसे दरिद्री होता है ॥ १ ॥ हे देवि ! पूर्वजन्ममें किया हुआ पुण्य अथवा पाप इस जन्ममें संपूर्ण देहधारियोंसे भोगा जाता है ॥ २ ॥ पुण्यसे विद्या होती है पुण्यसे पुत्र उत्पन्न होता है पुण्यसे सुंदरी नारी और पुण्यसे

अथातः संप्रवक्ष्यामि पुष्यनक्षत्रजं फलम् ॥
तत्सर्वं शृणु मे देवि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ४ ॥
मध्यदेशे वरारोहे धनाढ्यो वल्लवोऽवसत् ॥
हंसकेतुरिति ख्यातो भार्या तस्य तु केकयी ॥ ५ ॥
बहवो वृषभास्तस्य महिष्यो गास्तथा प्रिये ॥
धर्मकर्मरतः शूद्रो विक्रयेद्गोवृषादिकम् ॥ ६ ॥
घृततक्रस्य भो देवि विक्रयं कुरुते सदा ॥
एको वैश्यो धनाढ्यो वै तस्य मित्रं तदाभवत् ॥ ७ ॥
महाप्रीतिस्तयोर्जाता बहुवर्षप्रमाणतः ॥
एकदा तु निशायां वै शूद्रेण वणिकः प्रिये ॥ ८ ॥
शुभरत्नादिलाभाय कटारेण तदा हतः ॥
द्रव्यं सर्वं गृहीतं तु भूमिमध्ये तथा धृतम् ॥ ९ ॥

लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है ॥ ३ ॥ अब पुष्य नक्षत्रमें जन्मनेवालेके फलको कहेंगे । हे देवि ! उसने जो पूर्वजन्ममें किया है सो संपूर्ण सुन ॥ ४ ॥ हे वरारोहे ! मध्यदेशमें एक धनाढ्य गोपजाति (अहीर) वसता भया उसका नाम हंसकेतु था और तिसकी स्त्री केकयी नामवाली थी ॥ ५ ॥ हे प्रिये ! उसके बहुतसे बैल, भैंस, गौ रहती थी वह शूद्र धर्मकर्ममें रत था और गाय, बैलोंको बेंचता था ॥ ६ ॥ हे देवि ! घृत तथा तक्रको बेंचता था तब उसका मित्र एक धनाढ्य वैश्य होता भया ॥ ७ ॥ फिर बहुत वर्षोंतक तिन दोनोंकी अत्यंत प्रीति रही । हे प्रिये ! एक समय उस शूद्रने वह वैश्य ॥ ८ ॥ सुंदर रत्न आदिकके लाभके वास्ते कटारीसे हत कर दिया फिर उसका संपूर्ण धन हरके भूमिमें गाड

तन्मध्ये तु षडंशस्य व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥
बहुवर्षगते काले शूद्रो मृत्युवशोऽभवत् ॥ १० ॥
पातयामास घोरे तु यमदूतो यमाज्ञया ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ११ ॥
ततो जातो महादेवि राक्षसो गहने वने ॥
पुनः शृगालयोनिं च मानुषत्वं भवेत्पुनः ॥ १२ ॥
धनधान्यसमायुक्तो भार्या जाता तु या पुरा ॥
वन्ध्या रोगसमायुक्ता कन्यका चैव जायते ॥ १३ ॥
तस्य रोगो भवेत्पश्चाद्विविधश्च वयोन्तरे ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि मित्रं च निहतं यतः ॥ १४ ॥
तत्पापेन च भो देवि पुत्रो नैवोपजायते ॥
बहुपुत्रप्रघाती च कम्परोगी प्रजायते ॥ १५ ॥

दिया ॥ ९ ॥ फिर तिसमेंसे छठे हिस्से धनको दिन २ प्रति खर्च-ता भया बहुतसे वर्ष बीत चुके तब वह शूद्र मृत्युके वश हो गया ॥ १० ॥ यमकी आज्ञासे यमका दूत उसको घोर नरकमें पटकता भया फिर साठ हजार वर्षतक नरककी पीडाको भोगके गहर वनमें राक्षस हुआ पीछे गीदडकी योनिको प्राप्त भया फिर मनुष्य भया है ॥ ११ ॥ १२ ॥ यह धनधान्यसे युक्त है और पूर्वजन्ममें तो इसकी स्त्री थी वह वंध्या रोगसे युक्त है अथवा कन्याही जन्मती है ॥ १३ ॥ पीछे अवस्थांतरमें इसके अनेक प्रकारका रोग हो गया है । हे देवि ! इसने जो पूर्वजन्ममें मित्र मारा था ॥ १४ ॥ हे देवि ! तिस पापसे इसके पुत्र नहीं होता है बहुत पुत्रोंको मारनेवाला और कंपवात रोगवाला है ॥ १५ ॥

तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ॥
षडंशं वै ततो दानं विदुषे ब्राह्मणाय च ॥ १६ ॥
गां तथा महिषीं दद्याद्विधिवद्भोजयेद्द्विजान् ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं च जपं ततः ॥ १७ ॥
कुण्डे कोणत्रये चैव होमं वै कारयेत्ततः ॥
जपस्यैव दशांशेन हवनादिकमाचरेत् ॥ १८ ॥
ततो वै प्रतिमां कुर्याद्वैश्यस्यैव विधानतः ॥
द्वादशेन पलेनैव सुवर्णस्य विशेषतः ॥ १९ ॥
पूजयेत्पूर्वजैर्मन्त्रैस्ततो विप्राय दापयेत् ॥
एवं कृते न संदेहो पुत्रो भवति नान्यथा ॥ २० ॥
सर्वरोगः क्षयं याति नात्र कार्या विचारणा ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥३२॥

हे देवि ! हे शुमानने ! तिसकी शांतिको कहते हैं सुन। विद्वान् ब्राह्मणके अर्थ छठे हिस्से धनका दान देवे ॥ १६ ॥ गौ तथा महिषीका दान करे विधिपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन करावे गायत्री तथा जातवेदसे सुन० इन मंत्रोंका दो लाख जप करावे ॥ १७ ॥ त्रिकोण कुंडमें होम करावे जपकी दशांश संख्यासे हवन आदि कर्म कराना योग्य है ॥ १८ ॥ पीछे विधिपूर्वक बारह पलप्रमाण सुवर्णकी वैश्यकी मूर्ति बनवावे ॥ १९ ॥ पूर्वोक्त मंत्रोंकरके प्रतिमाका पूजन कर पीछे ब्राह्मणके अर्थ दान दे देवे ऐसे करनेसे पुत्र होता है इसमें संदेह नहीं ॥ २० ॥ संपूर्ण नष्ट होता है इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० पुष्यनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

अथ त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि शृणु देवि विशेषतः ॥
आदौ पापफलं देवि भुज्यते देवमानुषैः ॥ १ ॥
पश्चात्पुण्यफलं देवि परलोके इहापि वा ॥
एकः शिल्पकरो देवि वसते हस्तिनापुरे ॥ २ ॥
हेमदास इति ख्यातो भार्याद्वयसमन्वितः ॥
प्रत्यहं शिल्पकार्यं च करोति व्ययकारणात् ॥ ३ ॥
काशीतः पश्चिमे देवि स्वकर्मनिरतः सदा ॥
अश्वत्थानां च वृक्षाणां छेदनानि चकार सः ॥ ४ ॥
एवं बहुगते काले शिल्पकारो मृतः प्रिये ॥
नरके तस्य पतनं षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! अब कहेंगे सो सब विशेषकरके सुनो पहले पापका फल संपूर्ण देव मनुष्य आदिकोंसे भोगा जाता है ॥ १ ॥ हे देवि ! पीछे पुण्यका फल इस लोकमें तथा परलोकमें भोगा जाता है । हे देवि ! हस्तिनापुरमें एक शिल्पकार (कारीगर) वसता भया ॥ २ ॥ हेमदास नामवाला और दो स्त्रियोंसे युक्त था अपने खर्च चलानेके वास्ते दिन२ प्रति कारीगरीका काम किया करता था ॥ ३ ॥ हे देवि ! वह सदा अपने कर्ममें तत्पर होके काशीजीसे पश्चिमकी तरफ पीपलवृक्षोंको छेदन करता भया ॥४॥ हे प्रिये ! ऐसे बहुतसा काल बीत चुका तब वह शिल्पकार मरता भया साठ हजार वर्षतक नरकमें पड़ता भया ॥ ५ ॥

पत्न्या सह वरारोहे यातो योनिं विडालकाम् ॥
विडालयोनिं वै भुक्त्वा सरटस्तु ततोऽभवत् ॥ ६ ॥
पुनः स्यान्मानुषो देवि मध्यदेशे सुपूजितः ॥
पूर्वजन्मनि वृक्षाणां छेदनं प्रत्यहं कृतम् ॥ ७ ॥
तेन पापेन भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते ॥
कन्यकाश्चैव संजाताः स्त्रिया रोगः सुदारुणः ॥ ८ ॥
शरीरे महती पीडा रात्रौ निद्रा न लभ्यते ॥
कन्यकायाश्च वैधव्यं वृक्षच्छेदनतः प्रिये ॥ ९ ॥
तस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि ततः पापनिवर्त्तनम् ॥
चतुर्थांशं तु वै दानं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ १० ॥
दशायुतं जपं कुर्यात् गायत्रीमूलमन्त्रतः ॥
पलपञ्चसुवर्णस्य वृक्षं वै कारयेत्ततः ॥ ११ ॥
पूजयित्वा यथान्यायं वृक्षं विप्राय दापयेत् ॥
पञ्चधेनुं तथा दद्यात् वृषं चाभरणान्वितम् ॥ १२ ॥

हे वरारोहे ! फिर स्त्रीसहित हुआ बिलावकी योनिमें प्राप्त भया है बिलावकी योनिको भोगके पीछे किरलिया भया ॥ ६ ॥ हे देवि ! पीछे मध्यदेशमें उत्तम मनुष्य भया है पूर्वजन्ममें इसने दिन २ प्रति वृक्ष काटे हैं ॥७॥ हे देवि ! तिस पापसे इसके पुत्र नहीं होता है कन्या जन्मती है और स्त्रीके दारुण रोग हो रहा है ॥ ८ ॥ इसके शरीरमें बहुतसी पीडा है रात्रीमें निद्राभी नहीं आती है। हे प्रिये ! वृक्षोंके छेदन करनेसे इसकी कन्या विधवा हो गई है ॥ ९ ॥ अब इसकी शांति कहेंगे तिससे पाप निवृत्त होवेगा घरके वित्तसे चतु-र्थांश धनको ब्राह्मणके अर्थ दान देवे ॥ १० ॥ गायत्री मूलमंत्रसे लक्ष जप करावे और पांच पल सुवर्णका वृक्ष बनवावे ॥११॥ यथाबि-

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥
गङ्गामध्ये च दातव्यं ततः पापक्षयो भवेत् ॥ १३ ॥
सर्वव्याधिः क्षयं याति कन्यका च सुखान्विता ॥
पुत्रश्चैव प्रजायेत नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

अथ चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

मध्यदेशे वरारोहे लोहकारश्च तस्थिवान् ॥
गौरेका लोहकारेण बाल्यतः पालिता शिवे ॥ १ ॥
एकस्मिन्दिवसे देवि पङ्के मग्ना च गौर्वरा ॥
तच्छ्रुत्वा लोहकारस्तु न गतस्तत्र वै शिवे ॥ २ ॥

विधिसे पूजित उस वृक्षको दान कर देवे पांच गौ और आभूषित किये हुए एक बैलका दान करे ॥ १२ ॥ कोहले और नारियलको पंचरत्नसे भरके गंगाजीके मध्यमें दान करे तब पाप नष्ट होवे ॥ १३ ॥ संपूर्ण व्याधि दूर हो और कन्या सुखसे युक्त हो पुत्र उत्पन्न होवे इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पुष्यनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

शिवजी कहते हैं-हे वरारोहे अर्थात् उत्तम जंघोंवाली ! हे शिवे ! मध्यदेशमें एक लोहकार (लुहार) होता भया उसने बालकपनसेही एक गौ पाली थी ॥ १ ॥ हे देवि ! एक दिन वह गौ कीचमें

मृता रात्रौ तदा देवि पंके वैतरणी च सा ॥
बहुधस्रात्ततो देवि मरणं तस्य वै गृहे ॥ ३ ॥
तस्य पत्नी सती जाता सत्यलोकं गतौ च तौ ॥
दशलक्षमितं वर्षं सत्यलोके च तस्थिवान् ॥ ४ ॥
पुनः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके तदाभवत् ॥
मानुषः शुभजन्मा च धनधान्यसमन्वितः ॥ ५ ॥
पत्न्या सह वरारोहे ब्राह्मणानां च सेवकः ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि पंके मग्ना च यत्र गौः ॥ ६ ॥
न गतस्तत्र भो देवि तस्मात्पुत्रो न जायते ॥
कन्या जाता पुरा देवि तस्या मृत्युश्च जायते ॥ ७ ॥
तदर्थं वाटिकां कूपं पथि मध्ये च कारयेत् ॥
कुर्याच्चैव तुलादानं पात्राणि विविधानि च ॥ ८ ॥

धसक गई तब सुनके वह लोहार उसको लाने नहीं गया ॥ २ ॥ हे देवि ! तब वह गौ उस कीचमें रात्री समय मर गई । हे देवि ! पीछे बहुत दिन बीत चुके पीछे घरमेंही उस लोहारकीभी मृत्यु हो गई ॥ ३ ॥ तब उसकी स्त्री सती हो गई तिससे दोनोंको सत्यलोक प्राप्त भया दश लाख वर्षतक स्वर्गलोकमें ठहरे ॥ ४ ॥ फिर पुण्य क्षीण हो गया तब मृत्युलोकमें मनुष्य भया उत्तम कुलवाला तथा धनधान्यसे युक्त है ॥ ५ ॥ हे वरारोहे ! स्त्रीसहित हुआ ब्राह्मणोंका सेवक है । हे देवि ! पूर्वजन्ममें जहां कीचमें गौ धसक गई थी ॥ ६ ॥ तहां नहीं गया था । हे देवि ! इसलिये पुत्र नहीं होता है और पहले कन्या जन्मी थी उसकीभी मृत्यु हो गई है ॥ ७ ॥ तिस पापकी शांतिके वास्ते मार्गमें बावडी अथवा कुआ बनावे तुला दान करे अनेक प्रकारके पात्रोंका दान करे ॥ ८ ॥

गोयुग्मं घृतकुंभं च ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥
गायत्रीमन्त्रजाप्यं च लक्षमेकं तु कारयेत् ॥ ९ ॥
होमं कुर्यात्ततो देवि तिलधान्यादितण्डुलैः ॥
ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि शतसंख्यान्वरानने ॥ १० ॥
एवं कृत्वा वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा ॥
वन्ध्यात्वं नाशमायाति व्याधिनाशो भवेद्ध्रुवम् ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

अथ पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यानगराद्देवि पूर्वे क्रोशचतुर्दशे ॥
तत्राप्येको वसच्छाककारो वैडुम्बराभिधः ॥ १ ॥

गोयुग्म (गौका जोडा) घृत कलश इनका दान ब्राह्मणके अर्थ देवे और एक लाख गायत्रीका जप करावे ॥ ९ ॥ हे देवि ! पीछे तिल, जव, चावलोंसे होम करे । हे वरानने ! पीछे सौ (१००) ब्राह्मणोंका भोजन करावे ॥ १० ॥ हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे पुत्र होता है इसमें अन्यथा नहीं । वंध्यापन रोग दूर और निश्चय व्याधिका नाश होवे ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पुष्यनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! अयोध्यानगरीसे पूर्वदिशामें चौदह कोशपर एक शाककार वैडुंबर नामवाला बसता भया ॥ १ ॥

चिन्ता तस्याऽभवत्पत्नी पतिसेवापरायणा ॥
शाककारो महासाधुर्विष्णुभक्तिरतः सदा ॥ २ ॥
गुरुसेवारतो नित्यं प्रत्यहं शाकविक्रयी ॥
एका मार्जारिका श्वेता पालिता तेन वै हता ॥ ३ ॥
प्राप्तो वै तमसातीरे तीर्थे मृत्युर्मम प्रिये ॥
विष्णुभक्तिरतो यस्मात्तीर्थे मृत्युफलादपि ॥ ४ ॥
न गतो यमलोकं तु भुक्त्वा स्वर्गं तु चाऽभवत् ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि पुनः पुण्यक्षयो यदा ॥ ५ ॥
तदा वृषभयोनिश्च मर्त्यलोकेऽभवत्पुनः ॥
मानुषत्वं ततो यातो धनधान्यसमन्वितः ॥ ६ ॥
सुन्दरो विष्णुभक्तित्वात्पुत्रेण रहितः शिवे ॥
गर्भाणां पतनं यातं यतो मार्जारिका हता ॥ ७ ॥

और चिंता नामवाली तिसकी पत्नी पतिकी सेवामें तत्पर थी ऐसे शाककार महासाधु संपूर्णकालमें विष्णुकी भक्तिमें रत रहता भया ॥ २ ॥ और गुरुसेवामें नित्य रत दिनदिनके प्रति शाकको बेंचनेवाला था तिसने पाली हुई एक सुपेद बिल्ली मार दी ॥ ३ ॥ और हे प्रिये ! नित्य विष्णुभक्ति करनेसे तमसा नामक नदीपर मेरे तीर्थपर तिसकी मृत्यु हुई ॥ ४ ॥ वह यमलोकमेंभी न गया स्वर्गवास तिसको हुआ साठ हजार वर्ष स्वर्गवास होनेपर पुण्य नष्ट होनेसे ॥ ५ ॥ मृत्युलोकमें बैलकी योनिको प्राप्त हुआ फिर धनधान्यसे युक्त हो मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया ॥ ६ ॥ वह शाककार विष्णुभक्त होनेसे पुत्र करके रहित हुआ और तिसके कई गर्भ नष्ट होते भये क्योंकि बिल्ली हत करी थी ॥ ७ ॥

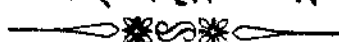
सगर्भा च तदा देवि ततो गर्भो विनश्यति ॥
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे वरे ॥ ८॥
गृहवित्तार्द्धभागं वै ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥
तदा पापं क्षयं याति नात्र कार्या विचारणा ॥ ९ ॥
शिवार्चनं कारयित्वा रौप्यमार्जारिकां तथा ॥
पलानां सतकैः कुर्यात् सगर्भा विमलां शुभाम्॥१०॥
पूजयित्वा ततो देवि ततो दद्याद्द्विजात्मने ॥
लक्षं जाप्यं ततो देवि त्र्यम्बकेण विशेषतः ॥ ११ ॥
ततो भवति वै शुद्धः पूर्वपापान्न संशयः ॥
पुत्रो भवति वै देवि रोगाणां संक्षयस्तथा ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे पुष्यनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तक०नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

और हे पार्वति ! वह बिल्ली सगर्भा थी इस कारणसे तिसके गर्भ नष्ट होते भये और हे वरारोहे ! हे पार्वति ! तिसकी शांतिको मैं तेरे प्रति कहता हूं ॥८॥ अपने घरमें जितना द्रव्य है तिसका आठवां भाग ब्राह्मणको दान करके दे देवे तब वह पाप दूर होता है इसमें कुछ विचार करना नहीं ॥ ९ ॥ और शिवजीका पूजन करके १०० पल मानवाली चांदीकी गर्भसे युक्त बहुत सुंदर एक बिल्ली बनवावे ॥ १० ॥ और हे देवि ! पूजन करके ब्राह्मणको दान देवे फिर त्र्यंबक मंत्रका लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥ तब संपूर्ण पापसे शुद्ध होता है इसमें संशय नहीं ऐसे करनेसे हे देवि ! पुत्रकी प्राप्ति और रोगोंका क्षय होता है ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पुष्यनक्ष० चतुर्थचरणप्रायश्चित्त० नाम पंचत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

अथ षट्त्रिंशोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ॥
जातस्य सर्पनक्षत्रे प्रथमे चरणे शुभे ॥ १ ॥
पुरी काशी समाख्याता त्रैलोक्ये देवि पूजिता ॥
तस्यास्तु पश्चिमे भागे क्रोशपञ्चदशे मिते ॥ २ ॥
माण्डव्यस्य पुरे शुभ्रे वसन्ति बहवो जनाः ॥
तन्मध्ये शूद्र एको हि प्राकरोल्लवणं सदा ॥ ३ ॥
डिण्डिभेति समाख्यातो गौरी तस्य वरानना ॥
बह्वर्थं सञ्चितं तेन न दानमकरोत् क्वचित् ॥ ४ ॥
एकदा दैवयोगेन ब्राह्मणानां निमन्त्रणम् ॥
भोजनं प्रददौ कृत्वा दक्षिणां वै समर्पयेत् ॥ ५ ॥
गामेकां कपिलां दत्त्वा भूपितां स्वपुरोधसे ॥
ब्राह्मणोऽकथयत् कश्चित् शूद्रं प्रति तदा प्रिये ॥६॥

शिवजी कहते हैं–हे देवि ! हे शोभने ! अब आश्लेषानक्षत्रके पहिले चरणमें जन्मनेवालेको कहते हैं सो सुन ॥ १ ॥ हे देवि ! त्रिलोकमें पूजित काशी नामवाली पुरी विख्यात है तिसके पश्चिम भागमें पंद्रह (१५) कोश परिमाणसे ॥ २ ॥ मांडव्य नामवाला पुर है तिसमें बहुतसे जन वास करनेवाले और तिन्होंमें एक शूद्र लवणकार वसता भया ॥ ३ ॥ और डिंडिभ नामसे विख्यात और गौरी नामवाली तिसकी स्त्री तिसने बहुतसा धन इकट्ठा किया और दान न किया ॥ ४ ॥ एक समय दैवयोगकरके ब्राह्मणोंको निमंत्रण दे भोजन करवाके दक्षिणा देता भया॥५॥ और हे प्रिये !

अहं ग्रामस्य वै पूज्यो मदीया गौः कथं प्रभो ॥
पुरोहिताय दत्तासि प्राणं ते च ददाम्यहम् ॥ ७ ॥
इति श्रुत्वा वचस्तस्य सोऽवदद्ब्राह्मणं प्रति ॥
क्रोधेन महता देवि ब्राह्मणाय तदाधमः ॥ ८ ॥
तदा क्रोधेन महता स शूद्रोऽताडयद्द्विजम् ॥
मरणं तस्य वै जातं तद्धस्ताद्वै वरानने ॥ ९ ॥
ततो बहुतिथे काले सस्त्रीकः प्रमृतः खलः ॥
पातनं तस्य वै जातं कर्मपाके तदा खलु ॥ १० ॥
निक्षिप्य यमदूतेन तत्रैव च यमाज्ञया ॥
पञ्चलक्षं ततो वर्षं कष्टं दत्तं मुहुर्मुहुः ॥११॥
तत्र जाता महापीडा नरकान्निःसृतस्ततः ॥
सर्पयोनिं स वै यातो गृध्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥१२॥

एक कपिला गौ आभूषणयुक्त अपने पुरोहितको देता भया तब उस शूद्रसे एक ब्राह्मण कहने लगा ॥ ६ ॥ कि मैं ग्रामका पूज्य हूं मेरी गौ पुरोहितको क्यों दी मैं तेरेको अपने प्राण देऊंगा ॥ ७ ॥ फिर वह शूद्र ब्राह्मणके वचनको सुनके बडे क्रोधसे युक्त हो ब्राह्मणके प्रति कहता भया ॥८॥ और बडे क्रोधसे वह शूद्र उस ब्राह्मणको ताडता भया तब हे वरानने ! तिसके हाथसे उस ब्राह्मणका मृत्यु हो गया ॥ ९ ॥ फिर कर्मोंके पूरे होनेमें बहुतसा काल हो लिया तब स्त्रीकरके सहित पापयुक्त उस शूद्रकाभी मृत्यु हुआ ॥१०॥ और उस शूद्रको यमराजके वचनोंसे दूतोंने नरकमें डाला तहां पांच लक्ष वर्षतक वारंवार कष्टको भोगता भया ॥११॥ और तहां बहुत पीडाको प्राप्त होके तिस नरकसे निकस सर्पकी योनिको प्राप्त हुआ फिर तिससे गीध पक्षीकी योनिको प्राप्त होता भया

मानुषत्वं ततो लब्धं मध्यदेशे वरानने ॥
पूर्वपापाच्च भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते ॥ १३ ॥
शरीरे रोग उत्पन्नो विग्रहस्तु वरानने ॥
प्रायश्चित्तं प्रवक्ष्यामि पूर्वकिल्बिषशान्तये ॥ १४ ॥
गायत्रीसूर्यमन्त्राभ्यां पञ्चलक्षजपं शिवे ॥
करोतु विधिवद्भक्त्या तदा वै वरवर्णिनि ॥ १५ ॥
होमं कारयितुं प्राज्यं कुण्डे चाष्टदले तथा ॥
दशांशतर्पणं तस्य मार्जनं तद्दशांशतः ॥ १६ ॥
प्रतिमां रुचिरां कृत्वा सुवर्णस्य महेश्वरि ॥
पलषष्ट्याः प्रयत्नेन पूजयित्वा यथाविधि ॥ १७ ॥
मन्त्रेणानेन विधिना गन्धधूपादिभिस्तथा ॥
दुर्गे देवि नमस्तुभ्यं सर्वसिद्धिप्रदेश्वरि ॥ १८ ॥
इमां पूजां गृहीत्वा तु मम कार्यं प्रसाधय ॥

॥ १२ ॥ फिर हे वरानने ! मध्यदेशमें मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया तहां हे देवि ! पहिले पापसे तिसके पुत्र नहीं हुआ ॥१३॥ और हे वरानने ! शरीरमें रोग उत्पन्न हो कष्टको प्राप्त होता भया तिसके पहिले पापके हरनेकी शांतिको कहते हैं ॥१४॥ हे शिवे ! हे वरवर्णिनि ! गायत्री और सूर्यके मंत्रका पांच लक्ष जप विधिसे भक्ति करके जपवावे ॥ १५ ॥ और अष्टदलवाला कुंड बनवाके घृतकी आहुति दिवावे और दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करवावे ॥१६॥ और हे महेश्वरि ! साठ (६०) पल सुवर्णकी मूर्ति बनवाय यथाविधि पूजन करवायके ॥१७॥ और हे दुर्गे ! हे देवि ! हे सर्वसिद्धिप्रदेश्वरि ! तेरे अर्थ नमस्कार है इस विधिसे इस मंत्र करके गंधधूपादिक देवे ॥१८॥ और यह कहे कि इस मेरी पूजको

ॐ ह्रीम् महेश्वर्य्यै नमः ॐ दुर्गायै नमः ॐ सर्वकामप्रदे तुभ्यं नमः ॐ ईश्वर्य्यै नमः ॐ त्र्यम्बकाय नमः ॐ ब्रह्मणे नमः ॐ विष्णवे नमः ॐ सर्वेश्वराय नमः ॐ भैरवाय नमः ॐ मार्त्तण्डाय नमः ॥

एतैश्च दशभिर्मन्त्रैः प्रतिमां पूजयेत्प्रिये ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्भक्तियुक्तेन चेतसा ॥ १९ ॥
पञ्चपात्रं ततो दद्यात्तदुद्देशेन पार्वति ॥
तिलदानं ततो दद्याद्वस्त्रदानं यथाविधि ॥ २० ॥
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापप्रणाशनम् ॥ २१ ॥
रोगात्प्रमुच्यते देवि वन्ध्यापि पुत्रमाप्नुयात् ॥ २२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे आश्लेषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥

ग्रहण करके मेरे कार्यको साधन कर। मंत्र। ॐ ह्रीं महेश्वर्य्यै नमः १ ॐ दुर्गायै नमः २ ॐ सर्वकामप्रदे तुभ्यं नमः ३ ॐ ईश्वर्य्यै नमः ४ ॐ त्र्यम्बकाय नमः ५ ॐ ब्रह्मणे नमः ६ ॐ विष्णवे नमः ७ ॐ सर्वेश्वराय नमः ८ ॐ भैरवाय नमः ९ ॐ मार्तण्डाय नमः १० ॥ ऐसे हे प्रिये ! इन १० मंत्रोंकरके प्रतिमाका पूजन करे फिर भक्तियुक्त चित्तवाला होके संकल्प कर ब्राह्मणको देवे॥१९॥ फिर उसीका उद्देश लेके पांच पात्रोंका और तिलका तथा वस्त्रोंका यथाविधि दान देवे ॥२०॥ और एक पेठा तथा नारियलको पंच रत्नसे युक्त कर पूर्वपापके दूर करनेके वास्ते गंगाजीके मध्यमें दान करे ॥ २१॥ ऐसे हे देवि ! रोगसे दूर होके वंध्याभी पुत्रको प्राप्त होवे ॥२२॥

इति श्रीकर्मवि०आश्लेषान०प्रथमचरणप्रा०नाम षट्त्रिंशोऽध्याय ॥३६॥

अथ सप्तत्रिंशोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

अलर्कस्य पुरे देवि शूद्र एकोऽवसत्पुरा ॥
शूद्राचाररतो नित्यं विक्रयं कुरुते सदा ॥ १ ॥
गोमहिष्यादिव्यापारैर्व्ययं कुर्यादिने दिने ॥
गोधनानि बहून्येव तेषां रक्षा न जायते ॥ २ ॥
दुर्लभ इति विख्यातो तत्राज्ञानी सदावसत् ॥
एकदा तस्य गोवृन्दे वने तिष्ठति भोऽनघे ॥ ३ ॥
वृष्टिस्तत्र महाजाता गावश्च पीडिता भृशम् ॥
तासां मध्ये भूरि गावो वर्षणेन मृताः पुरा ॥ ४ ॥
रक्षां शूद्रो नाऽकरोत्स तृणैराच्छादनादिभिः ॥
एवं बहुगते काले शूद्रः पापी मृतो यदा ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं–हे देवि ! अलर्का नामवाली पुरीमें पहले एक शूद्र वास करता भया और शूद्रकर्ममें नित्य रत था और बेंचनेका व्यवहार करता था ॥ १ ॥ और दिनदिनके प्रति गौ महिषी इन्होंके बेंचनेका व्यवहार करता था और तिसके गौ महिषी बहुत थीं तिन्होंकी रक्षा न होती थी ॥ २ ॥ वह दुर्लभ नामसे विख्यात अज्ञानी तहांही वास करता था एक कालमें हे अनघे ! वनमें गौ-ओंका समूह (चौना) स्थित होता भया ॥ ३ ॥ तहां वनमें महा-वर्षा होनेसे गौओंको वर्षाकी बडी पीडा हुई और तिन्होंके मध्यमें बहुतसी गौ वर्षासे मर गई ॥ ४ ॥ तृणसे तथा छायासे वह शूद्र गौओंकी रक्षा नहीं करता हुआ ऐसे बहुत काल होनेसे वह

नरके पातयामास यमदूतो यमाज्ञया ॥
बहुवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकजं फलम् ॥ ६ ॥
नरकान्निर्गतो देवि गजयोनिमवाप्तवान् ॥
गजयोनिं ततो भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽगमत् ॥ ७ ॥
स्वकर्मणा परित्यागं यतोऽकार्षीद्गवां पुरा ॥
ततः कर्मफलाद्देवि नैव पुत्रः प्रजायते ॥ ८ ॥
कृतं दानं पुरा देवि सर्वपर्वणि चाञ्जसा ॥
तेन पुण्येन भो देवि धनधान्यगजादिकम् ॥ ९ ॥
गोसंग्रहः कृतः पूर्वं मृतो तृणकणं विना ॥
तेन पापेन भो देवि महाव्याधिः प्रजायते ॥ १० ॥
तस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ॥
ब्राह्मणाय दशांशं च दानं दद्यात्सुरप्रिये ॥ ११ ॥

पापी शूद्र मर गया ॥ ५ ॥ और यमराजके दूत यमकी आज्ञासे तिसको नरकवास देते भये तहां बहुतसे हजारों वर्ष नरकके फलको भोगके ॥ ६ ॥ हे देवि ! नरकसे निकस हस्तीकी योनिको प्राप्त होता भया फिर हस्तीकी योनिको भोगके मनुष्यशरीरको प्राप्त होता भया ॥ ७ ॥ और पहले तहां अपने कर्मोंको त्यागके गौओंकी रक्षा नहीं करनेसे तिस कर्मके फलसे पुत्रकी प्राप्ति नहीं हुई ॥ ८ ॥ और हे देवि ! पहिले इसने पर्वपर्वमें विधिसे दान किया था तिस पुण्यके प्रभावसे धन धान्य हस्ती आदिसे युक्त होता भया ॥ ९ ॥ हे देवि ! पहिले गौओंका समूह तृणके देने बिना मृत्युको प्राप्त हुआ इस पापसे उसके शरीरमें महाव्याधि अर्थात् दुःखकी प्राप्ति हुई ॥ १० ॥ अब हे देवि ! हे सुशोभने ! तिस पापकी शांतिको कहते हैं । हे सुरप्रिये ! ब्राह्मणके अर्थ घरके धनका दशांश दान

गायत्रीलक्षजाप्येन जपं कुर्यात्प्रसन्नधीः ॥
दशांशं हवनं देवि मार्जनं तर्पणं तथा ॥ १२ ॥
दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणाय वरानने ॥
एवं कृते न संदेहो वरः पुत्रः प्रजायते ॥ १३ ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे सर्पनक्षत्रद्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

अथ अष्टत्रिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

गङ्गाया उत्तरे कूले मालाकारोऽवसत्पुरा ॥
डेलचन्द्रेति विख्यातो महाज्ञानी गुणाकरः ॥ १ ॥

देवे ॥ ११ ॥ और प्रसन्न मनवाला होके एक लक्ष गायत्रीका जप करवावे और हे देवि ! दशांश हवन तथा मार्जन तर्पणादि करवावे ॥ १२ ॥ और हे वरानने ! दशवर्णवाली गौओंका दान ब्राह्मणको देवे ऐसे करनेसे श्रेष्ठ पुत्रकी प्राप्ति होती है इसमें संशय नहीं॥१३॥ और सम्पूर्ण रोग नाशको प्राप्त होते हैं इसमें संशय नहीं ॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां सर्पनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

शिवजी कहते हैं-हे प्रिये ! गंगाजीके उत्तर किनारेपर डेलचंद्र नामवाला महाज्ञानी गुणोंसे युक्त अपने कर्ममें नित्य रत ब्राह्मणोंकी सेवामें तत्पर ऐसा मालाकार होता भया ॥ १ ॥

स्वकर्मनिरतो नित्यं द्विजसेवासु तत्परः ॥
तस्य पत्नी विशालाक्षि नाम्ना चन्द्रावती शुभा ॥२॥
गुरुदास इति ख्यातो वैश्यवर्णेषु पूजितः ॥
आसीत्तस्मै तदा तेन स्वर्णं दत्तं प्रियाय वै ॥ ३ ॥
लक्षत्रयं स्थितं स्वर्णं तस्य वैश्यपतेः प्रिये ॥
मालाकारेण तत्सर्वं भूमौ स्थाप्य तदा प्रिये ॥ ४ ॥
स्वयं गतः स वैश्येन सार्धं वेण्यां तदा प्रिये ॥
माघे नियमतः स्नानं कृते ताभ्यां यथाविधि ॥ ५ ॥
शूद्रस्तु स्वगृहं प्राप्तो वैश्यः काश्यां समागतः ॥
तत्र काश्यां विशालाक्षि मरणं तस्य चाभवत् ॥ ६॥
अविमुक्ते महातीर्थे देवदानवपूजिते ॥
मम पार्श्वे समायातो धर्मक्षेत्रप्रभावतः ॥ ७ ॥

और हे विशालाक्षि ! तिसकी पत्नी अर्थात् स्त्री चंद्रावती नामसे विख्यात शुभ लक्षणोंसे युक्त होती भई ॥ २ ॥ और तहांही गुरुदास नामसे विख्यात सब वैश्योंमें पूजित एक वैश्य होता भया तहां तिस वैश्यने अपने प्रिय उस मालाकारके वास्ते बहुतसा सुवर्ण दिया ॥ ३ ॥ और हे प्रिये ! तीन (३) लक्ष रुपय्योंका स्वर्ण तिस वैश्यके भया वह सब स्वर्ण तिस मालाकारने भूमिमें स्थापित किया ॥४॥ और यह मालाकार माघके महीनेमें उस वैश्यके साथ त्रिवेणी अर्थात् प्रयागमें यथाविधि स्नान करनेको गया फिर उन दोनोंने नियमसे स्नान किया ॥५॥ हे विशालाक्षि ! फिर स्नानके अनंतर शूद्र तो मालाकार अपने घर आया और वह वैश्य काशीको गया तहां काशीमें उस वैश्यका मृत्यु होता भया ॥ ६ ॥ मुक्तिको देनेवाला महातीर्थ देवता और दानवोंसे

मालाकारस्तु तत्स्वर्णे भुक्त्वा पुत्रस्त्रिया युतः ॥
बहुवर्षगते काले मरणं तस्य चाभवत् ॥ ८ ॥
तदा गन्धर्वनगरे बहुवर्षसहस्रकम् ॥
पत्न्या सह वरारोहे भुक्तं वै स्वर्गजं फलम् ॥ ९ ॥
ततो बहुगते काले मानुषत्वमवाप्तवान् ॥
धनाढ्यो गुणवान् भोक्ता देवब्राह्मणतत्परः ॥ १० ॥
तस्य पत्नी विशालाक्षि पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ॥
पुनर्विवाहिता देवि पतिसेवासु तत्परा ॥ ११ ॥
पुष्पं च जायते देवि मासि मासि निरन्तरम् ॥
पुत्रो न जायते देवि कन्यका खलु जायते ॥
यतो वैश्यस्य वै स्वर्णं न दत्तं पूर्वजन्मनि ॥ १२ ॥

पूजित ऐसे धर्मक्षेत्रके प्रभावसे वह वैश्य मेरे समीप आया ॥ ७ ॥ और मालाकार पुत्र स्त्रीसे युक्त हो तिस वैश्यके स्वर्णको भोगता भया तहां बहुतसे वर्ष व्यतीत होनेपै तिस शूद्रका मृत्यु होता भया ॥ ८ ॥ और गंधर्वलोककी प्राप्ति उसको बहुत वर्ष हुई तहां पत्नीसहित गंधर्वलोकमें स्वर्गके फलको भोगता भया ॥ ९ ॥ फिर बहुत कालके पीछे मनुष्यशरीरको प्राप्त हो धनसे युक्त गुणवान् भोगसे युक्त देव ब्राह्मणके पूजनमें तत्पर होता भया ॥ १० ॥ और हे विशालाक्षि ! तिसकी स्त्री पहिले जन्मके प्रसंगसे वही होती भई और पतिकी सेवामें तत्पर है फिरभी इसीसे विवाही हुई है ॥११॥ तिसको पुष्पकी प्राप्ति तो महीने महीनेमें निरंतर होती है परन्तु हे देवि ! पुत्र हुआ नहीं और पहिले जन्ममें वैश्यका स्वर्ण नहीं देनेसे तिसके कन्या होती भई ॥ १२ ॥

तत्कर्मणः फलाद्देवि पुत्रो नैव प्रजायते ॥
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथार्थतः ॥ १३ ॥
गृहद्रव्यषडंशेन पुण्यं कार्यं च कारयेत् ॥
हेम्नो दशपलस्यापि वैश्यं कृत्वा प्रयत्नतः ॥ १४ ॥
पूजयित्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥
षडङ्गजातवेदानां जपं वै कारयेत्ततः ॥ १५ ॥
जीर्णोद्धारं ततो देवि वापिकां कूपमेव च ॥
एवं कृते न संदेहः पुत्रो भवति नान्यथा ॥ १६ ॥
रोगस्तस्य निवर्तेत धनं च बहु जायते ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे आश्लेषानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टात्रिंशोऽध्यायः ३८॥

हे देवि ! तिस कर्मके फलसे पुत्र नहीं हुआ अब हे देवि ! तिस कर्मकी शांतिको यथावत् कहते हैं सुन ॥ १३ ॥ अपने घरमें जितना द्रव्य तिसका छठा भाग पुण्य करे और दश पल सुवर्णकी वैश्यमूर्ति यत्नसे बनवावै ॥ १४ ॥ विधानसे पूजा करके ब्राह्मणको संकल्प कर दे देवे और षडंगवेदका जप करवावे ॥१५॥ और हे देवि ! पुराने फूटे टूटे कूप तथा बावडी बगीचा आदिको समरुवावे ऐसे करनेसे पुत्रकी प्राप्ति निश्चय होती है यह मेरा वचन अन्यथा नहीं है ॥ १६ ॥ ऐसे करनेवाले तिस जनका रोग निवृत्त होवे और बहुतसा धन होवे ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे आश्लेषानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

अथैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्या नगरी श्रेष्ठा सर्वदेवसुपूजिता ॥
यस्याः प्रवेशमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥
तस्यास्तु पश्चिमं देवि योजनानां दशोपरि ॥
लक्ष्मणाख्यं पुरं यत्र वसंति बहवो जनाः ॥ २ ॥
तन्मध्ये शूद्र एको हि कैवर्तो धनधान्यवान् ॥
डालेति नाम विख्यातस्तस्य पत्नी च केशवी ॥३॥
तेन व्यापारतो देवि धनं च बहु संस्थितम् ॥
मांसं प्रभुज्यते नित्यं मांसं हि बहुधा प्रियम् ॥ ४ ॥
निर्दयः सर्वजन्तूनां कच्छपानां विशेषतः ॥
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत् किल ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-अयोध्या नगरी श्रेष्ठ है सब देवताओंने पूजी है जिसमें वास करनेही मात्रसे सब पापोंसे मनुष्य छूट जाता है ॥ १ ॥ हे देवि ! तिसके पश्चिम भागमें दश योजनपर लक्ष्मण नामवाला पुर है तहां बहुतसे जन वास करते हैं ॥ २ ॥ और तिसके मध्यमें एक शूद्रजातिका धीमर डालनामसे विख्यात धनधान्यसे युक्त बसता भया और तिसके केशवी नामवाली स्त्री होती भई ॥ ३ ॥ तिसने व्यापारसे बहुत धन इकट्ठा किया वह नित्य मांसको भक्षण करता था मांस उसको बडा प्रिय था ॥ ४ ॥ कच्छपादि सब जंतुओंमें दयाहीन था ऐसे बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिसका मृत्यु होता भया ॥ ५ ॥

यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तश्च यमाज्ञया ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ६ ॥
नरकान्निःसृतो देवि दर्दुरत्वं तथा गतः ॥
ऋक्षत्वं च ततो देवि मानुषत्वं ततोऽलभत् ॥ ७ ॥
पाण्डुरोगेण संयुक्तो वंशो नैव तु जीवति ॥
कन्याश्च बहवो जाता विधवा व्यभिचारिणी ॥ ८ ॥
अपत्यानां निरोधश्च युवत्वसमये सति ॥
अस्य पुण्यं प्रवक्ष्यामि यथा पापात्प्रमुच्यते ॥ ९ ॥
षडंशं ब्राह्मणे दानं श्रीविष्णोः पूजनं तथा ॥
विष्णोरराटमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ १० ॥
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ॥
रोगाश्च विलयं यांति नात्र कार्या विचारणा ॥ ११ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० आश्लेषानक्षत्रस्य चतुर्थ-
चरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥

फिर उसको यमराजसे आज्ञा पाय दूतोंने नरकमें डाला वह ६० हजार वर्ष नरकके दुःखोंका भोगके ॥ ६ ॥ फिर हे देवि ! नरकसे निकसके मेंडककी योनिको प्राप्त हुआ फिर रीछकी योनिमें होके मनुष्यशरीरको प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥ और पाण्डुरोगसे युक्त हुआ पुत्रकी संतान तिसकी नहीं जीवती भई और बहुतसी कन्या तिसके भई वेभी पापके प्रभावसे विधवा और व्यभिचारिणी हुई ॥ ८ ॥ और जवान समयमेंही संतानका निरोध हो गया अब जैसे पापसे मुक्त होवे तैसे पुण्यको कहते हैं ॥ ९ ॥ अब घरमेंसे छठा भाग द्रव्यका दान ब्राह्मणको दे विष्णुका पूजन कर विष्णोरराट० इस मंत्रका लक्ष जप करावे ॥ १० ॥ ऐसे करनेसे निश्चय पुत्र होवे

अथ चत्वारिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

पुरा देवि शुभं ख्यातं पुरं मङ्गलनामकम् ॥
तत्र वैश्यो वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ॥ १ ॥
तस्य नाम समाख्यातं मङ्गलं देवि वै शुभम् ॥
तस्य पत्नी विशालाक्षी सुन्दरी सुखदायिनी ॥ २ ॥
विष्णुभक्तिरतो नित्यं गुरुब्राह्मणसेवकः ॥
आचारे नियतश्चैव क्रयविक्रयतत्परः ॥ ३ ॥
एकदा तु गृहे देवि मित्रं तस्य समागतम् ॥
आदरं बहुधा कृत्वा भोजयामास शास्त्रतः ॥ ४ ॥

अन्यथा नहीं होवे और रोग नाशको प्राप्त होवे इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० आश्लेषा० चतुर्थ-चरण० नामैकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! पहिले एक शुभमंगल नामक पुर होता भया तिसमें एक वैश्य वसता भया और धनधान्यसे युक्त था ॥ १ ॥ और हे देवि ! शुभलक्षणोंवाला मंगलनामसे प्रसिद्ध होता भया और तिसकी स्त्री विशाल नेत्रोंवाली तथा सुंदर रूप-वाली तथा सुखको देनेवाली होती भई ॥ २ ॥ वह वैश्य नित्य विष्णुभक्तिमें रत गुरु ब्राह्मणकी सेवा करनेवाला आचारमें नियम-युक्त और लेने देनेमें बडा तत्पर होता भया ॥ ३ ॥ हे देवि ! एक समय तिसके घरमें तिसका मित्र आता भया तब उसने बहुत आदरसे बडाय यत्नसे उसको भोजन कराया ॥ ४ ॥

स्वर्णदानं ततो लक्षमुद्रादानं तु तत्प्रिये ॥
दत्तं वैश्येन भो देवि ब्राह्मणाय स्वशान्तये ॥ ५ ॥
ब्राह्मणेनापि तत्सर्वं स्थापितं तस्य वै गृहे ॥
ततोऽगात्तीर्थयात्रार्थं वाराणस्यां वरानने ॥ ६ ॥
तस्य मृत्युरभूद्देवि काश्यां चैव स्वकर्मतः ॥
बहुकाले गते देवि वैश्यो दारिद्र्यपीडितः ॥ ७ ॥
पुत्रदारैश्च संयुक्तस्तस्य द्रव्यं तदा प्रिये ॥
भुक्तं सर्वं तदा देवि स्वदत्तं चैव पुण्यदम् ॥ ८ ॥
वृद्धत्वे च पुनर्जाते तस्य मृत्युरभूत्किल ॥
अयोध्यामरणात्तस्य स्वर्गवासस्ततोऽभवत् ॥ ९ ॥
बहुवर्षसहस्राणि विष्णुलोके वरानने ॥
भुक्त्वा बहुविधं भोगं ततः पुण्यक्षयेऽनघे ॥ १० ॥

फिर हे प्रिये ! सुवर्ण और लक्ष रुपयोंका दान तिस वैश्यने अपनी शांतिके वास्ते ब्राह्मणके अर्थ दिया ॥ ५ ॥ और उस ब्राह्मणने सब धन उसके घरमेंही स्थापन कर दिया फिर हे वरानने ! वह ब्राह्मण तीर्थयात्राके निमित्त काशीजीमें चला गया ॥ ६ ॥ हे देवि ! अपने कर्मोंसे वहां काशीपुरीमें तिस ब्राह्मणका मृत्यु होता भया तब बहु काल हो गया । हे देवि ! वह वैश्य दरिद्रसे पीडित होता भया ॥ ७ ॥ और स्त्रीपुत्रसे संयुक्त वह वैश्य तिस ब्राह्मणके सब धनको भोगता भया जौनसा पुण्य करके ब्राह्मणको दिया था ॥ ८ ॥ फिर वृद्ध होनेसे तिसका मृत्यु हुआ और अयोध्याजीमें मरण होनेसे तिसको स्वर्गवास होता भया ॥ ९ ॥ हे वरानने ! तहां स्वर्गवास विष्णुलोकमें बहुत हजार वर्षोंतक अनेक प्रकारके

मृत्युलोके भवेज्जन्म धनधान्यसमन्वितः ॥
विष्णुपूजारतो नित्यं ब्राह्मणे भक्तिरुत्तमा ॥ ११ ॥
मित्रद्रव्यं स्वयं दत्तं भुक्तं तेन ततः प्रिये ॥
पुत्रोत्पत्तिः प्रथमतस्तस्य वै मरणं भवेत् ॥ १२ ॥
पुनः पुत्रो न जायेत काकवन्ध्या ततः प्रिया ॥
शरीरे कफवातादिरोगाश्च विविधास्तथा ॥ १३ ॥
वृद्धत्वं च तथा तस्य जायते नात्र संशयः ॥
तत्पापशमनार्थं च पुण्यं शृणु वरानने ॥ १४ ॥
षडंशं च ततो दानं ब्राह्मणाय वरानने ॥
गायत्रीमन्त्रजाप्यं च लक्षमेकं प्रयत्नतः ॥ १५ ॥
हवनं विधिवत्कुर्यात् तर्पणं मार्जनं तथा ॥
गामेकां कपिलां दद्यात्स्वर्णशृङ्गीं सहाम्बराम् ॥ १६ ॥

भोगोंको भोग पुण्य क्षीण होनेसे ॥ १० ॥ हे अनघे ! मृत्युलोकमें धनधान्यसे युक्त विष्णुपूजामें नित्य रत ब्राह्मणोंमें उत्तम भक्तियुक्त है ॥ ११ ॥ अब मृत्युलोकमें तिसका जन्म हुआ मित्रको दान करके दिये द्रव्यको आपही भोगनेसे पुत्रका जन्म पहिले भया था तिसका तो मृत्यु होता भया ॥ १२ ॥ फिर पुत्र नहीं होनेसे उसकी स्त्री काकवन्ध्या भई और तिसका शरीर कफवातादिसे अनेक प्रकार पीडित होता भया ॥ १३ ॥ और तिसको बुढापेकी प्राप्ति होती भई इसमें संदेह नहीं तिस पापके दूर करनेके वास्ते पुण्य कहता हूं तू सुन ॥ १४ ॥ हे वरानने ! घरमेंसे छठा भाग दान करके ब्राह्मणको देवे और यत्नसे एक लक्ष गायत्रीका जप करवावे ॥ १५ ॥ और विधिपूर्वक हवन, तिसका दशांश तर्पण तिसका दशांश मार्जन करे और सुवर्णके शृंग वस्त्रकरके

दद्यात्प्रयत्नतो देवि ब्राह्मणाय महात्मने ॥
तिलधेनुं ततो दद्यात्पात्रं वस्त्रं तथा प्रिये ॥ १७ ॥
हरिवंशश्रुतिर्ब्रह्मदम्पत्योः पूजनं चरेत् ॥
एवं कृते ततो देवि पुनः पुत्रः प्रजायते ॥ १८ ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ १९ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० मघानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

अथैकचत्वारिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥
अयोध्यानगराद्देवि योजनोपरि वल्लभे ॥
दक्षिणे नन्दिनिग्रामे वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥

सहित एक कपिला गौका दान देवे ॥ १६ ॥ और हे देवि ! यत्नसे महात्मा ब्राह्मणको देके तिलधेनुका दान तैसेही वस्त्रादि-युक्त करके देवे ॥ १७ ॥ और हे देवि ! ब्राह्मण ब्राह्मणीका पूजन करे, हरिवंशपुराणका श्रवण करे ऐसे करनेसे फिर पुत्रकी प्राप्ति होवे ॥ १८ ॥ और सब रोग दूर होवें इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० मघानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! अयोध्यापुरीसे एक योजनपर दक्षिणदिशामें नंदिनिग्रामके मध्य बहुतसे जन वास करते भये

द्विजस्तत्र वसत्येको मद्यवेश्यारतः सदा ॥
परस्त्रीलम्पटो नित्यं मद्यमांसरतस्तदा ॥ २ ॥
नामतो मित्रशर्मेति तस्य पत्नी तु कर्कशा ॥
प्रत्यहं द्यूतकरणे व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ ३ ॥
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥
पश्चान्मृता तु तत्पत्नी कर्कशा दुःखदायिनी ॥ ४ ॥
यमस्य किंकरैरेव निक्षिप्तो नरकार्णवे ॥
सप्ततिर्वै सहस्राणि वर्षाणि सुरवल्लभे ॥ ५ ॥
भुक्तं दुःखं नरकजं दम्पतिभ्यां तदा शिवे ॥
ततः पापक्षये देवि शुनो योनिरभूत् पुरा ॥ ६ ॥
शुनो योनिं ततो भुक्त्वा शूकरो निर्जने वने ॥
मानुषस्य पुनर्योनिं मध्यदेशे ततोऽलभत् ॥ ७ ॥

॥ १ ॥ तहां एक ब्राह्मण मदिरापान, वेश्यासंग, मांसादिमें प्रीति करनेवाला वास करता भया ॥ २ ॥ तिसका नाम मित्रशर्मा था कर्कशा नामवाली तिसकी स्त्री थी वह दिनदिनप्रति जुवाके व्यवहारमें युक्त रहता था ॥ ३ ॥ ऐसे बहुतसा काल होनेमें तिसका पहिले मृत्यु हुआ पीछे कर्कशा नामवाली तिसकी स्त्री मरती भई ॥ ४ ॥ और वह यमकी आज्ञासे दूतोंने नरकरूपी समुद्रमें गेर दिया तहां हे सुरवल्लभे ! सत्तर (७०) हजार वर्ष नरकमें वास करके ॥ ५ ॥ हे शिवे ! दोनों स्त्रीपुरुष नरकका दुःख भोगके पाप क्षय होनेपर श्वान अर्थात् कुत्तेकी योनिको प्राप्त हुए ॥ ६ ॥ फिर श्वानयोनिको भोगके मनुष्यरहित वनमें शूकरकी योनिको प्राप्त हुआ फिर मध्यदेशमें मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥

नन्दिग्रामफलादेवि धनधान्यसमन्वितः ॥
परस्त्रीलम्पटादेवि पादपीडा प्रजायते ॥ ८ ॥
मद्यपानफलादेवि गर्भपातः पुनः पुनः ॥
बह्व्यः कन्याः प्रजाताश्च बहुस्त्रीगमनात्प्रिये ॥ ९ ॥
पुत्रस्य मरणं देवि जातं वेश्यातिसंगमात् ॥
पूर्वजन्मकृतं पापं पुण्यं च गिरिजे वरे ॥ १० ॥
मानुषैर्भुज्यते सर्वं मृत्युलोके सुरेश्वरि ॥
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यथार्थं शृणु भामिनि॥११॥
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १२ ॥
वापीकूपतडागेषु जीर्णोद्धारः प्रयत्नतः ॥
माघकार्तिकवैशाखे श्रावणे च विशेषतः ॥ १३ ॥
प्रत्यब्दं भोजयेद्विप्रान् श्रोत्रियान्वेदपारगान् ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां द्विलक्षं जपमाचरेत् ॥ १४ ॥

और नंदिग्राममें मृत्यु हुआ तिसके फलसे धनधान्यसे युक्त है परस्त्रीगमन करनेसे पैरोंमें पीडा होनी भई ॥ ८ ॥ और हे देवि! दारू पीनेके फलसे वारंवार गर्भ नष्ट हुए और बहुतसी स्त्रियोंमें गमन करनेसे बहुतसी कन्या हुई ॥ ९ ॥ हे देवि ! वेश्यासंग करनेसे पुत्रका मरण हुआ । हे गिरिजे ! हे वरे ! पूर्वजन्मका किया हुआ पाप और पुण्य सब ॥ १० ॥ मनुष्य मृत्युलोकमें भोगते हैं और हे सुरेश्वरि ! इस पापकी शांति यथार्थतासे मैं कहता हूं तू श्रवण कर ॥ ११ ॥ अपने घरके धनमेंसे आठवां भाग दान करके ब्राह्मणको देवे ॥ १२ ॥ और बावडी तथा कूप तथा तालाव इन फूटे टूटोंको यत्नसे समरवावे और माघ, कार्तिक, वैशाख, श्रावण इनमें ॥ १३ ॥ विशेषकरके वर्ष २ के प्रति वेदके पढे हुए

जपतो हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा॥
महाभारतमाख्यानं श्रुत्वा पापं व्यपोहति ॥ १५ ॥
दशवर्णाः प्रदातव्याः पूर्वपापविशुद्धये ॥
एवं कृते वरारोहे सर्वरोगः प्रणश्यति ॥ १६ ॥
पुत्रो भवति भो देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥
काकवन्ध्या च या नारी पुनः पुत्रमवाप्नुयात् ॥ १७॥
कन्यका नैव जायंते धनवृद्धिर्भवेत्किल ॥
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न चान्यथा ॥ १८ ॥
इह जन्मनि शं भुङ्क्ते पुनः पापं न बाधते ॥ १९ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीशिवसंवादे मघानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

तथा वेदके पारगामी पवित्र ब्राह्मणोंको भोजन करवावे और गायत्री तथा जातवेदसे० इन मंत्रोंका दो २ लक्ष जप करावे ॥ १४ ॥ और दशांश हवन तथा दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे और महाभारतको श्रवण करनेसे सब पाप दूर हो जावे ॥ १५॥ फिर दश वर्णोंवाली गौओंका दान पहिले पापकी शुद्धिके लिये देना योग्य है और हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे सब रोग दूर होते हैं ॥ १६ ॥ ऐसे पुत्रकी उत्पत्ति और वन्ध्यापना दूर होता है, काकवन्ध्या नारी फिर पुत्रको प्राप्त होती है ॥ १७ ॥ और कन्या नहीं होती हैं धनकी वृद्धि निश्चय होवे और पूर्वजन्मकृत पाप नष्ट होवे इसमें अन्यथा नहीं है ॥ १८ ॥ इस जन्ममें सुखको भोगता है फिर उसको पाप बाधा नहीं करता है ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० मघानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

अथ द्विचत्वारिंशोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यायां विशालाक्षि कुलालो वसति प्रिये ॥
मथुराग्राममध्ये वै स्वकर्मनिरतः सदा ॥ १ ॥
पात्रं वै मृन्मयं देवि प्रकरोति तदा प्रिये ॥
तस्य मित्रं समायातो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ २ ॥
तस्य स्त्री च महादुष्टा ब्राह्मणी व्यभिचारिणी ॥
कुलालेनाभवत्प्रीतिर्मैथुनं प्रकरोति सा ॥ ३ ॥
ब्राह्मण्यां गमनं नित्यं बहुवर्षं निरंतरम् ॥
एवं बहुगते काले समतीते सुरेश्वरि ॥ ४ ॥
कुलालस्य ततो मृत्युर्वृद्धे जाते सुरेश्वरि ॥
पश्चात्तस्य मृता पत्नी या पुरा व्यभिचारिणी ॥ ५ ॥

महादेवजी कहते हैं-हे विशालाक्षि! अयोध्यापुरीमें मथुराग्रामके मध्य कुलाल अर्थात् कुम्हारजाती अपने कर्ममें रत सदा वास करता भया ॥ १ ॥ हे प्रिये! वह मृत्तिकाके पात्र करा करे था तिसका मित्र एक ब्राह्मण वेदके पाठ करनेवाला आता भया ॥ २ ॥ तहाँ तिस ब्राह्मणकी स्त्री महादुष्टा व्यभिचारिणी कुलालके साथ प्रीतिसे मैथुन करती भई ॥ ३ ॥ हे सुरेश्वरि! ब्राह्मणीसे गमन करते हुए बहुतसे वर्ष तिस कुलालको व्यतीत होते भये ॥ ४ ॥ फिर हे सुरेश्वरि! बुढापा होनेसे तिस कुलालका मृत्यु हुआ पीछे वह ब्राह्मणी तिसकी स्त्री मरती भई जोनसी पहिले व्यभिचारिणी

यमदूतैर्महाघोरैः कर्दमे नरके प्रिये ॥
यमाज्ञया च निक्षिप्तो वर्षं लक्षत्रयं शुभे ॥ ६ ॥
पतिव्रता समायाता लक्षत्रयगते सति ॥
नरकाब्धेः समुद्धृत्य स्वपतिं च ततः प्रिये ॥ ७ ॥
सत्यलोके समायाता स्वपत्या सह भामिनि ॥
भुक्त्वा लक्षत्रयं देवि भोगांश्च विविधानपि ॥ ८ ॥
ततः पुण्यक्षये जाते धवेन सह शोभने ॥
मर्त्यलोके ततो जातो धनधान्ययुतस्तदा ॥ ९ ॥
पुत्रकन्याविहीनश्च मृतवत्सत्वमाप्तवान् ॥
ब्राह्मण्यां गमनाद्देवि बहुरोगश्च जायते ॥ १० ॥
अथ शांतिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे शुभे ॥
सर्वस्वदानं कर्तव्यं रुद्रमन्त्रजपं तथा ॥ ११ ॥

थी ॥ ५ ॥ फिर हे प्रिये ! हे शुभे ! महाघोर यमराजके दूतोंने यमकी आज्ञा पाय नरकके कीचमें उस कुलालको गेर डाला तहां तिसको तीन लाख वर्ष व्यतीत हुए ॥ ६ ॥ फिर तीन लाख वर्ष-व्यतीत होनेपै तिसकी वह पतिव्रता स्त्रीभी तहां नरकमें आती भई फिर हे प्रिये ! हे भामिनि ! नरकाब्धिसे दोनोंका उद्धार हो सत्यलोकमें प्राप्त हुए तहां तीन लक्ष वर्षपर्यंत अनेक प्रकारके भोगोंको भोगते भये ॥ ७ ॥ ८ ॥ फिर पुण्यक्षय होनेमें हे सुशोभने ! मर्त्यलोकमें दोनोंका जन्म हुआ धनधान्यसे युक्त होते भये ॥ ९ ॥ तहां पुत्र और कन्यासे रहित मृतसन्तानपनेको प्राप्त होते भये और ब्राह्मणीके सङ्ग गमन करनेसे शरीरमें बहुत रोगकी प्राप्ति हुई ॥ १० ॥ अब हे गिरिजे ! हे शुभे ! मैं शांतिको कहता हूं तू श्रवण कर घरके संपूर्ण धनका दान तथा रुद्रमन्त्रका जप करे ॥ ११ ॥

पूजा कार्या पार्थिवानां वाटिकारोपणं तथा ॥
हरिवंशश्रुतिः कार्या भूमिदानं तथैव च ॥ १२ ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षं जाप्यं तथा प्रिये ॥
होमं च कारयेद्देवि तिलधान्यादितण्डुलैः ॥ १३ ॥
कुण्डे कुर्याद्द्विजद्वारा चतुष्कोणे सुरेश्वरि ॥
दशांशं हवनं देवि विधिवत्पापशुद्धये ॥ १४ ॥
दशवर्णास्ततो दद्यात् स्वर्णनिष्कचतुष्टयम् ॥
ब्राह्मणान्भोजयेत् शुद्धान् षष्टिं पायसलड्डुकैः॥१५॥
भूमिदानं ततः कुर्यात्तिलं दद्यात्प्रयत्नतः ॥
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ॥ १६ ॥
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति न च कन्या प्रसूयते ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वती० भवान० तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥

पार्थिवपूजन धर्मशाला आदि स्थान, हरिवंशपुराणका श्रवण और भूमिदान करे ॥ १२ ॥ तथा गायत्री मूलमंत्रका एक लक्ष जप करावे और हे देवि ! तिल, जव, चावल, घृत इन्होंकरके कुण्डमें हवन करावे और ॥ १३ ॥ हे सुरेश्वरि ! चौकूंटे कुंडमें दशांश हवन, दशांश तर्पण, दशांश मार्जन विधिवत् करावे॥१४॥ और दशवर्णवाली गौओंका दान, स्वर्णकी चार महोरोंका दान देवे, साठ ब्राह्मणोंको खीर लड्डुओंसे जिमावे ॥ १५ ॥ तथा यत्नसे भूमि और तिलका दान देवे ऐसे करनेसे वंशवृद्धि अर्थात् पुत्रप्राप्ति होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ १६ ॥ और सब रोग दूर

अथ त्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

काञ्चीपुर्यां महादेवि वैश्य एकोऽवसत्पुरा ॥
मेदसिन्द इति ख्यातस्तस्य स्त्री पालिका शुभा॥१॥
अश्वादिविक्रयं देवि च्छागपक्ष्यादिकं तथा ॥
प्रत्यहं क्रियते देवि बहुद्रव्यस्य संचयम् ॥ २ ॥
न देवान् मन्यते देवि पितॄन्नैव च मन्यते ॥
बहुष्वहस्सु गच्छत्सु प्रमृतौ पितरौ ततः ॥ ३ ॥
स तयोर्नाकरोच्छ्राद्धं यत्कर्तव्यं सुतैः प्रिये॥
ततो बहुदिने याते वृद्धे सति वरानने ॥ ४॥

होते हैं कन्याकी सन्तान नहीं होवे काकवंध्या स्त्री पुत्रको प्राप्त होती है और मृतवत्सा स्त्रीभी पुत्रको लब्ध होती है ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां मघा० नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! पहिले कांचीपुरीमें मेदसिंह नामवाला एक वैश्य और पालिका नामवाली तिसकी स्त्री वास करती थी ॥ १ ॥ हे देवि ! वे घोडा, बकरी, पक्षी आदिके बेचनेसे द्रव्यको इकट्ठा करते भये ॥ २ ॥ और हे देवि ! वह देवताओंको तथा पितरोंको नहीं मानते भये और बहुतसे दिन व्यतीत होते भये तब उसके माता पिता मर गये ॥ ३ ॥ हे प्रिये ! जो पुत्रोंको पिताका श्राद्ध कर्तव्य है सोभी तिसने न करा ऐसे हे वरानने ! बहुतसे दिन व्यतीत हो वृद्धताको प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥

मरणं तस्य वै जातं वैश्यस्य कृपणस्य च ॥
यमाज्ञया तु दूतेन कुम्भीपाके सुदारुणे ॥ ५ ॥
निक्षिप्तं शृंखलैर्बध्वा युगपञ्चदश समाः ॥
भुक्त्वा नरकजं दुःखं महाकृमिसमाकुलम् ॥ ६ ॥
नरकान्निःसृतो देवि महिषत्वं ततोऽलभत् ॥
पुनर्वै व्याघ्रयोनिश्च मूषयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥
काकयोनिं ततो भुक्त्वा गजयोनिस्ततोऽभवत् ॥
शुभे देशे विशालाक्षि धनधान्यसमन्वितः ॥ ८ ॥
व्याधिग्रस्तोऽभवद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः ॥
काकवन्ध्या भवेन्नारी मृतवत्सा ह्यपुत्रिणी ॥ ९ ॥
पूर्वजन्मकृतं पापं यतः शान्तिमवाप्नुयात् ॥
तत्सर्वं शृणु मे देवि विस्तरेण समन्वितम् ॥ १० ॥

फिर तिस कृपण वैश्यका मृत्यु हुआ तब यमराजकी आज्ञासे यमदूतोंने उसको दारुण अर्थात् कठोर नरकमें गेर दिया ॥ ५ ॥ और वह शृङ्खल अर्थात् संकलोंकरके बन्धा हुआ कृमियोंसे युक्त पंद्रह युग संख्यावाले वर्षोंपर्यंत नरकोंके दुःखोंको भोगके ॥ ६ ॥ हे देवि ! नरकसे निकस महिषी अर्थात् भैंसकी योनिको प्राप्त हुआ फिर भेडियाकी तथा मूसेकी योनिको प्राप्त हुआ ॥७॥ फिर काकयोनिको भोगके हस्तीकी योनिको प्राप्त हुआ फिर हे देवि ! शुभदेशमें धनधान्यसे युक्त ॥८॥ और हे देवि ! व्याधिसे पीडित पुत्र और कन्यासे रहित है इसकी स्त्री काकवन्ध्या वा मरनेवाले पुत्रोंकी उत्पत्ति करनेवाली वा पुत्रहीन होती भयी ॥९॥ हे देवि ! पूर्वजन्मके पाप जैसे शांतिको प्राप्त होवें तैसे विस्तारसे युक्त

प्रयागे नियतः स्नायी प्रतिमाघं भवेद्यदा ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां दशायुतजपं तथा ॥ ११ ॥
भूमिदानं च वै कृत्वा ततः पुत्रः प्रजायते ॥
वन्ध्यात्वं शमनं याति काकवन्ध्यात्वमप्यथ ॥ १२॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१३॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे मघानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्राय० नाम त्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥

अथ चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥
सौराष्ट्रविषये देवि शोभनं नाम वै पुरम् ॥
तत्र क्षत्री वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ॥ १ ॥

कहता हूं तू श्रवण कर ॥१०॥ नियमसे प्रयागके स्नान तथा माघमें प्रयागस्नान गायत्रीमंत्र तथा जातवेदसे० इस मन्त्रका लक्ष जप (१०००००) करावे॥११॥ और भूमिका दान करानेसे पुत्रकी प्राप्ति होती है और वंध्यापन, काकवन्ध्यापन येभी दूर होते हैं ॥१२॥ और मृतवत्सा चिरकालतक जीवनेवाले उत्तम पुत्रको प्राप्त होवे और सब रोग नाशको प्राप्त होवें इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां पार्व० मघा० चतुर्थ० नाम त्रयश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! सौराष्ट्रदेशमें शोभन नामवाला पुर होता भया तहां एक क्षत्री धनधान्यसे युक्त वास करता था ॥१॥

मोहनेति च विख्यातस्तस्य पत्नी सती शुभा ॥
वैश्यवृत्तिरतो नित्यं व्यापारं कुरुते सदा ॥ २ ॥
व्यापारार्थं ततो देवि वृषभा बहु पालिताः ॥
द्वौ वृषौ योजितौ देवि कूपे वै पतितौ प्रिये ॥ ३ ॥
मृतौ तौ रात्रिकालेऽपि जगाम स तदा न च ॥
पापं च स न जानाति गर्वद्वारा वरानने ॥ ४ ॥
यत्किंचित्क्रियते कर्म शुभं तु कलुषं बहु ॥
गुणाः स्वल्पा बह्वगुणा मोहनं नाम क्षत्रिणः ॥ ५ ॥
ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत् ॥
पश्चान्मृता तस्य पत्नी महालुब्धा वरानने ॥ ६ ॥
निक्षिप्तो नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ७ ॥

मोहननामसे विख्यात और शुभ लक्षणोंवाली सती तिसकी पत्नी ऐसे वह क्षत्री वैश्यवृत्तिमें रत होके व्यापार करता था ॥ २ ॥ हे देवि ! व्यापारके वास्ते बहुत बैल पाले । हे प्रिये ! वे बैल उसने कूपके जल काढनेमें युक्त किये वे कुवेमें गिर गये ॥ ३ ॥ फिर हे देवि ! वे बैल रात्रीसमय कूपमें पडके मृत्युको प्राप्त होते भये तब वहां गयाभी नहीं और वह गर्वमें प्राप्त होके तिनके मरनेके पापको नहीं मानता भया ॥ ४ ॥ और तिसके शुभ कर्म तो थोडा और पाप बहुत, गुण थोडे, अवगुण बहुत थे ॥ ५ ॥ ऐसे बहुत काल होनेमें तिसका मृत्यु हुआ । हे वरानने ! पीछे महालोभसे युक्त तिसकी स्त्रीभी मृत्युको प्राप्त होती भई ॥ ६ ॥ फिर उस क्षत्रीको यमके दूतोंने आज्ञा पाके साठ हजार (६००००) वर्षकी संख्यावाले घोर नरकमें डाला ॥ ७ ॥

पुनः सरटयोनिश्च वृषयोनिस्ततोऽभवत् ॥
मानुषत्वं ततो देवि मध्यदेशे वरानने ॥ ८ ॥
वृषयोश्च पुरा मृत्युर्न कृतं पापमोचनम् ॥
तस्माद्व्याधिः समुत्पन्नः पूर्वकर्मप्रयत्नतः ॥ ९ ॥
मुखरा याभवत्पत्नी पुरा च प्रबला प्रिये ॥
पुनर्विवाहिता देवि तद्रूपा मुखरा तथा ॥ १० ॥
तत्पापशमनार्थाय षडंशं दानमाचरेत् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं यदा ॥ ११ ॥
ततः पापं क्षयं याति शीघ्रं पुत्रो भवेत् प्रिये ॥
अपुत्रा मृतवत्सा च काकवन्ध्या च या शिवे ॥१२॥
पुत्रिण्यश्चैव ताः सर्वा नात्र कार्या विचारणा ॥
रोगाः सर्वे विनश्यन्ति शीघ्रमेव न संशयः ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० पूर्वान० प्रथमचरणप्राय-
श्चित्तकथनं नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥

वह तहांसे निकस सरट अर्थात् किरलिया जनावरकी योनिको प्राप्त हुआ फिर बैलकी योनिको प्राप्त होके हे देवि! हे वरानने!! मध्यदेशमें मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥८॥ ऐसे पहिले कर्मके प्रसंगसे बैलोंका मृत्यु होनेपैभी पापमोचन न किया तिससे शरीरमें व्याधि हुई॥९॥ और हे देवि ! तिसकी पत्नी मुखरा अर्थात् वाचाल और प्रबला थी सो अब पुनर्विवाहिताभी वैसीही प्राप्त होती भई॥१०॥ तिस पापकी शांतिके वास्ते अपने घरके द्रव्यका छठा भाग दान करे और पांच लक्ष गायत्रीका मूलमंत्र जपावे॥११॥ तब हे प्रिये! पाप दूर होके पुत्रकी प्राप्ति शीघ्र होती है और हे शिवे ! बिना पुत्रवाली मरनेवाले पुत्रोंवाली काकवन्ध्या ॥ १२ ॥ ये सब पुत्रो-

अथ पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

कर्णाटविषये देवि काष्ठकारोऽवसत्पुरा ॥
छिनत्ति सर्वकाष्ठानि व्ययं कृत्वा दिने दिने ॥ १ ॥
एका वै गोत्रजा कन्या तस्यां च मैथुनं कृतम् ॥
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥ २ ॥
पश्चात्तस्य मृता नारी कुलटा व्यभिचारिणी ॥
यमदूतैर्महाघोरैर्निक्षिप्तो नरकार्णवे ॥ ३ ॥
यमाज्ञया महादेवि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि नरके पच्यते च सः ॥ ४ ॥

वाली होती हैं इसमें कुछ विचार नहीं करना और सब रोग जलदी नाशको प्राप्त होते हैं इसमें संशय नहीं ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वान० प्रथम० नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! कर्णाटदेशमें पहिले एक लकडहारा बसता हुआ वह काष्ठका छेदन कर दिनदिनके प्रति बेंचा करता था॥१॥तिसने एक अपने गोत्रकी कन्यासे मैथुन किया जब बहुतसे दिन हो चुके तब उसका मृत्यु हुआ ॥ २ ॥ पीछे व्यभिचारिणी कुलटा जो तिसकी स्त्री थी उसकाभी मृत्यु हुआ फिर उनको यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय घोर नरकरूपी समुद्रमें डाले ॥ ३ ॥ हे देवि ! यमकी आज्ञासे नरकके दुःखोंको भोग साठ हजार (६००००) वर्षपर्यंत संख्यावाले नरकोंको व्यतीत करके ॥ ४ ॥

कुक्कुटत्वं ततो जातं चक्रवाकस्ततोऽभवत् ॥
मानुषत्वं ततो जातं देशे पूज्यतमे तथा ॥ ५ ॥
शूद्रसेवारतो नित्यं शूद्रस्नेहेन यन्त्रितः ॥
पितुर्मातुर्भवेद्वैरं महिष्याः क्रयविक्रये ॥ ६॥
पूर्वजन्मनि भो देवि कृतं वृक्षस्य छेदनम् ॥
तस्माद्रोगः समुत्पन्नः कटिशूलं निरन्तरम् ॥ ७ ॥
गोत्रकन्याभिगमनं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥
तेन पापेन भो देवि पुत्रस्य मरणं भवेत् ॥ ८ ॥
गर्भस्रावी ततो भार्या काकवन्ध्यात्वमाप्नुयात् ॥
बह्वयः कन्यास्ततो जाताः कष्टं प्राप्नोत्यहर्निशम् ९॥
अतः शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १० ॥

कुक्कुट अर्थात् मुरगेकी योनिको प्राप्त हुआ फिर चक्रवाक अर्थात् चकवेकी योनिको प्राप्त हुआ फिर पुण्ययुक्त देशमें मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया ॥ ५ ॥ तहां शूद्रसेवामें रत और शूद्रस्नेहमें सदा प्रीतियुक्त होके मातापितासे वैर और महिष्यादिके क्रयविक्रय अर्थात् बेचनेका व्यवहार करता है ॥ ६ ॥ हे देवि ! पूर्वजन्ममें तिसने वृक्षका छेदन किया तिस पापसे रोगयुक्त शरीर पैदा हुआ और निरंतर कटिमें शूलरोग रहा ॥ ७ ॥ और हे देवि ! पहिले जन्ममें अपने गोत्रकी कन्यामे गमन करनेसे पुत्र होके मर गया ॥ ८ ॥ फिर तिसकी भार्याका गर्भ खंडित होके काकवन्ध्यापनेको प्राप्त हुई फिर बहुतसी कन्या हुई ऐसे रात दिन कष्टको प्राप्त हुए ॥ ९ ॥ अब तिस पापकी शुद्धि करनेके वास्ते शांतिको कहते हैं घरमेंसे द्रव्यका आठवां भाग ब्राह्मणको दान करके देवे ॥ १० ॥

गायत्रीलक्षजाप्येन गोदानेन विशेषतः ॥
वाटिकारोपणेनापि गृहदानेन वै शिवे ॥ ११ ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥
पूर्वजन्मकृतं पापं क्षयं याति न संशयः ॥ १२ ॥
जायन्ते बहवः पुत्राः शूराः कीर्तिविवर्द्धनाः ॥
कन्यका नैव जायन्ते काकवन्ध्या तु शाम्यति ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसं० पूर्वानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्राय० नाम पञ्चचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४५ ॥

अथ षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

सिंहले वै महाद्वीपे तत्र सिंहापुरं शिवे ॥
कायस्थो वैष्णवोऽप्येकष्टीकारामेति नामतः ॥ १ ॥

हे शिवे ! गायत्रीके लक्ष जपसे तथा विशेष करके गोदान और धर्मशाला तथा घरका दान करनेसे ॥ ११ ॥ सब रोग नाशको प्राप्त होते हैं इसमें कुछ विचार नहीं करना ऐसे पहिले जन्मके किये पाप नष्ट होते हैं इसमें संशय नहीं ॥ १२ ॥ और बडे शूर वीर कीर्तिके बढानेवाले पुत्रोंका जन्म होवे और कन्याका जन्म तिसके होवेही नहीं, काकवन्ध्यापनाकी शांति होवे ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पूर्वा० प्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे शिवे ! सिंहलद्वीपके विषे सिंहनामसे विख्यात एक पुर है तिसमें एक कायस्थ विष्णुभक्त टीकाराम

तस्य भार्या विशालाक्षि सूर्यानाम्नी शुभा सती ॥
आतिथ्यकरणे शक्ता देवतात्यन्तपूजिका ॥ २ ॥
कार्तिके माघवैशाखे दीपदानं करोति सा ॥
कदाचिद्दैवयोगेन तीर्थयात्रार्थमागता ॥ ३ ॥
स्वर्णकारो महादेवि बहुस्वर्णेन संयुतः ॥
आगतः सिंहनगरे तत्र वासमकारयत् ॥ ४ ॥
प्रीतिः परस्परं चैव कायस्थस्वर्णकारयोः ॥
स्वर्णकारस्य कन्यैका सुन्दरी कमलानना ॥ ५ ॥
कायस्थस्याभवद्भार्या दैवयोगात्तदा शिवे ॥
स्वर्णकारस्य यत्सर्वं स्थितं तेन हृतं धनम् ॥ ६ ॥
द्रव्यक्षयमथो ज्ञात्वा स्वर्णकारो मृतः पुरा ॥
पुत्रदारादिकं त्यक्त्वा कायस्थश्च तदा शिवे ॥ ७ ॥

नामवाला ॥ १ ॥ तिसकी स्त्री सुंदर नेत्रोंवाली शुभलक्षणा बडी श्रेष्ठ सूर्यानामसे विख्यात होती भई और अभ्यागतके पूजन करनेमें शक्त देवताके अति पूजन करनेवाली होती भई ॥ २ ॥ और वह कार्तिक, माघ, वैशाख इन महीनोंमें दीपदान किया करती कभी दैवयोगसे वह तीर्थयात्राके वास्ते तीर्थपर प्राप्त हुई ॥ ३ ॥ तहां हे देवि ! एक स्वर्णकार बहुतसे स्वर्णसे युक्त होके सिंहनामवाले तिस पुरमें आके वास करता भया ॥ ४ ॥ और तहां स्वर्णकार और कायस्थकी महाप्रीति होती भई और स्वर्णकारकी एक सुंदरी कमलकेसे नेत्रोंवाली पुत्री थी ॥ ५ ॥ हे शिवे ! वह दैवयोगसे कायस्थकी भार्या होती भई और स्वर्णकारके घरमें जितना द्रव्य था सो सब कायस्थकेही घर चला आया ॥ ६ ॥ और वह स्वर्णकार द्रव्य नष्ट हुएको जानके दुःखी हो मृत्युको प्राप्त हो गया

तया सार्द्धं रमत्येको पापात्मा कमलानने ॥
एवं बहुगते काले कायस्थोऽपि मृतः प्रिये ॥ ८ ॥
कुम्भीपाकेऽभवद्वासो वर्षलक्षत्रयं तथा ॥
पुनः कर्मवशाद्देवि मृगयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ९ ॥
मानुषत्वं वरारोहे पुनः प्राप्तो महीतले ॥
धनधान्यसमायुक्तो वंशो नैव प्रजायते ॥ १० ॥
बहुरोगसमायुक्तो ज्वरोऽतीव मृतेः समः ॥
पुत्राणां मरणं देवि शीतलाद्यैरुपद्रवैः ॥ ११ ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि परस्त्रीगमनं कृतम् ॥
त्यक्ता विवाहिता नारी पुत्रकन्यासमन्विता ॥ १२ ॥
तत्पापेनैव भो देवि पुत्रादीनां विनाशनम् ॥
गर्भनाशो भवेद्देवि वन्ध्यात्वं जायते शिवे ॥ १३ ॥

तब वह कायस्थ पुत्र और स्त्री इत्यादिकोंको त्यागके ॥ ७ ॥ तिस स्वर्णकारकी कन्याहीसे रमण करता भया ऐसे बहुतसे दिन व्यतीत होनेपर हे कमलानने ! कायस्थभी मृत्युको प्राप्त होता भया ॥ ८ ॥ हे देवि ! तिसका कुंभीपाक नामवाले नरकमें वास होता भया और तीन (३) लक्ष वर्षपर्यंत नरकको भोगके फिर मृगकी योनिको प्राप्त हुआ ॥ ९ ॥ फिर हे वरारोहे ! भूमिपर मनुष्यशरीरको प्राप्त हो धनधान्यसे युक्त वंशकरके हीन होता भया ॥ १० ॥ और बहुत रोगसे युक्त मृत्युकी तुल्य ज्वरसे पीडित और तिसके पुत्रका मरण शीतला आदिके उपद्रवोंसे होता भया ॥ ११ ॥ हे देवि ! पहले जन्ममें परस्त्रीगमन करनेसे और पुत्रकन्यासमेत अपनी स्त्रीके त्यागसे ॥ १२ ॥ हे देवि ! तिस पापके प्रभावसे पुत्रादिकोंका मरण हुआ और हे देवि ! गर्भ नष्ट होते हैं

काकवन्ध्या भवेन्नारी सुखं नैव प्रजायते ॥
स्वल्पयोनिकृशाङ्गश्च कथाश्रवणतत्परः ॥ १४ ॥
विद्यादानविहीनश्च स्वकुले बहुनिष्ठुरः ॥
अस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि कृतं यत्पूर्वजन्मनि ॥१५॥
तत्सर्वं शृणु मे देवि यतः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ १६ ॥
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्य्यात् त्रिवारावृत्तिसंख्यया ॥१७॥
दशवर्णा ततो दद्यात्स्वर्णदानं विशेषतः ॥
निष्कत्रयं प्रदद्याच्च ततः पापक्षयो भवेत् ॥ १८॥
भोजयेद्ब्राह्मणान्षष्टिं तथा दद्याच्च दक्षिणाम् ॥
एवं कृते विधाने च पुत्रो भवति नान्यथा ॥ १९ ॥

और हे शिवे ! वन्ध्यापनेको तिसकी स्त्री प्राप्त होती भई ॥ १३ ॥ काकवन्ध्यापनेको प्राप्त हो तिसको सुख नहीं होता भया फिर कृशांग और सूक्ष्मभोगवाला कथाश्रवण करनेमें तत्पर ऐसा होता भया ॥ १४ ॥ विद्याके दानसे रहित अपने कुलमें कष्ट देनेवाला है अब पूर्वजन्ममें जो कुछ खोटा कर्म किया उन्होंकी शांतिको कहता हूं ॥ १५ ॥ हे देवि ! तिस सबको तू श्रवण कर जैसे संसारके जन सिद्धिको प्राप्त होवें । हे वरानने ! गायत्रीके मूलमंत्रका लक्ष जप करावे ॥ १६॥ तिससे दशांश हवन, दशांश तर्पण, दशांश मार्जन करावे और तीन आवृत्तिसे युक्त हरिवंशका श्रवण करे ॥ १७ ॥ और दशवर्णवाली गौओंका दान तथा विशेषतासे स्वर्णका दान और सुवर्णके तीन मोहरोंका दान करनेसे पापोंका नाश होता है ॥१८॥ और साठ (६०) संख्या ब्राह्मणोंको भोजन

रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥
एवं यदा न कुर्यात्तु तदा रोगाः पुनः पुनः ॥ २० ॥
जायन्ते नात्र संदेहः पूर्वजन्मफलात्किल ॥ २१ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्राय० नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६॥

अथ सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥
नर्मदादक्षिणे कूले ब्राह्मणो वसति प्रिये ॥
ब्रह्मकर्मकरो नित्यं सदा वेदपरायणः ॥ १ ॥
शंकरस्य पुरे देवि प्रत्यहं वेदपाठनम् ॥
अर्भकान्ब्रह्मजातीयान्पाठयामास वै तदा ॥ २ ॥

करावे और तिन्होंको दक्षिणा देवे ऐसे विधानपूर्वक करनेसे निश्चय पुत्रकी उत्पत्ति होवे यह अन्यथा नहीं है ॥ १९ ॥ और सब रोग नाशको प्राप्त होते हैं इसमें कुछ विचार नहीं करना और जो ऐसे नहीं करे तो वारंवार शरीरमें रोगोंकी प्राप्ति होवे ॥ २० ॥ इसमें संशय नहीं यह निश्चय पूर्वजन्मका फल है ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वा०तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

हे प्रिये ! नर्मदाके दक्षिणतीरपर एक ब्राह्मण वास करता भया वह ब्रह्मकर्ममें नित्य रत सब काल वेदमें परायण था ॥ १ ॥ हे देवि ! महादेवकी पुरीमें नित्यप्रति वेद पढाया करता था और

तस्य भार्याद्वयं चासीदेका प्रीतिमती सदा ॥
विरोधिनी ततो ह्येका ज्येष्ठा भार्या तु तां त्यजेत्॥३॥
एवं बहुगते काले ब्राह्मणस्य तदा शिवे ॥
ततो मृत्युवशं यातस्तस्य भार्या गरीयसी ॥ ४ ॥
चितां कृत्वा प्रयत्नेन भर्तुः खलु वरानने ॥
भर्त्रा सह च भो देवि सती जाता महामतिः ॥ ५ ॥
सत्यलोकस्त्वभूत्तस्य जायया सहितस्य वै ॥
बहुवर्षसहस्राणि सत्यलोकेऽवसत्तदा ॥ ६ ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोकेऽभवत्पुनः ॥
मानुषत्वं शुभे जन्म कुले महति पूजिते ॥ ७ ॥
धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो विचक्षणः ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि भार्यात्यागः कृतस्तथा ॥ ८ ॥

ब्रह्मजातीय बालकोंको पढाया करे था ॥ २ ॥ तिसकी दो भार्या थीं तिन्होंमें प्रीतियुक्त एक थी और दूसरी विरोधसे युक्त थी वह बडी थी उसको त्यागता भया ॥ ३ ॥ हे शिवे! ऐसे बहुत काल व्यतीत होनेसे तिस ब्राह्मणका मृत्यु होता भया और तिसकी श्रेष्ठ भार्या ॥ ४ ॥ हे देवि ! हे वरानने ! यत्नसे चिता बनाके पतिके साथ सती होती भई ॥५॥ तब स्त्रीकरके सहित तिसको सत्यलोककी प्राप्ति हुई और बहुतसे हजारों वर्षतक सत्यलोकमें वास करता भया ॥ ६ ॥ फिर तहांसे पुण्य क्षीण होनेपर मनुष्यलोकमें जन्म हुआ सब जनोंसे पूजित शुभलक्षणोंसे युक्त ऐसे उत्तम कुलमें जन्म हुआ ॥ ७ ॥ और हे देवि ! धनधान्यसे युक्त बुद्धिमान् वह वंशकरके रहित होता भया क्योंकि तिसने पहिले जन्ममें भार्याका

तेन दोषेण भो देवि ततः पुत्रो न जीवति ॥
दिने दिने कुक्षिपीडा तस्य चाभिनवा भवेत् ॥ ९ ॥
पुण्यं शृणु महादेवि यतः शान्तिर्भविष्यति ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १० ॥
वापीकूपतडागांश्च पथि मध्ये च कारयेत् ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां जपं कुर्याद्विचक्षणः ॥ ११ ॥
होमं च तद्दशांशेन तिलतण्डुलपायसैः ॥
दशवर्णाः प्रदातव्या विप्राणां भोजनं शतम् ॥ १२ ॥
एवं कृते न संदेहो वंशलाभो भवेदनु ॥
व्याधेश्चैव प्रमुच्येत सत्यं सत्यं वरानने ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे पूर्वानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४७॥

त्याग किया था ॥८॥ हे देवि! तिस दोषकरके पुत्र न भया और दिन दिनके प्रति तिसकी कुखमें नवीन पीडा होती भई ॥ ९ ॥ हे देवि ! अब मैं तिसकी शांतिके कारणको कहता हूं तू श्रवण कर घरमेंसे द्रव्यका छठा भाग पुण्य कर देवे ॥ १० ॥ और बावडी, कूप, तालावको रास्ताके मध्यमें करावे तथा गायत्री और जातवेद० इन मंत्रोंका जप बुद्धिवान् करावे ॥११॥ और दशांश हवन, तिल, चावल, घृत तथा खीर इन्होंसे करावे और दशवर्णवाली गौओंका दान देवे और सौ (१००) संख्या ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ १२ ॥ ऐसे करानेसे निश्चय वंशका लाभ होवे और हे वरानने ! व्याधिसेभी छूट जाता है यह सत्य है सत्य है ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० पूर्वा० चतुर्थ० नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

अथाष्टाचत्वारिंशोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यानगरे देवि वैश्योऽवात्सीत्सुरेश्वरि ॥
स्वकर्मनिरतो दक्षो विष्णुभक्तिपरायणः ॥ १ ॥
धनधान्यसमायुक्तो विप्रसेवासु तत्परः ॥
पत्नी तस्य वरारोहे सुन्दरी च पतिव्रता ॥ २ ॥
कश्चिन्मित्रं प्रियस्तस्य ब्राह्मणो वेदपारगः ॥
प्रत्यहं निकटे तस्य बहु स्वर्णमुपार्जयेत् ॥
ब्राह्मणोऽप्यात्मनः स्वर्णं ददौ वैश्याय वै शिवे ॥ ३ ॥
तीर्थयात्राप्रसङ्गेन वाराणस्यां गतः स वै ॥
गत्वा काश्यां वरारोहे शरीरं ब्राह्मणोऽत्यजत् ॥ ४ ॥
सर्वं वैश्येन तद्द्रव्यं भुक्तं बहुदिनोपरि ॥
शरीरत्याजनाद्देवि पुण्यतीर्थे स्त्रिया सह ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे सुरेश्वरि ! हे देवि ! अयोध्यानगरीमें एक वैश्य रहे था अपने कर्ममें रत बडा चतुर विष्णुभक्तिमें परायण था ॥ १ ॥ धनधान्यसे युक्त ब्राह्मणोंकी सेवामें रत था । हे वरारोहे ! तिसकी स्त्री अति सुंदर पतिव्रता धर्म करनेवाली होती भई ॥ २ ॥ और कोई ब्राह्मण वेदको पार करनेवाला तिस वैश्यके समीप नित्य प्रति स्वर्णको इकट्ठा किया करता । हे शिवे ! वह ब्राह्मण अपने स्वर्णको वैश्यकोही देता भया ॥ ३ ॥ और तीर्थयात्राके प्रसंगसे काशीजीमें गया वह काशीजीमें जाके अपने शरीरको त्यागता भया ॥ ४ ॥ हे देवि ! उस वैश्यको वह सब द्रव्य

अयोध्यायां विशालाक्षि स्वर्गवासं तथाक्षयम् ॥
दशपञ्चयुगं भुक्त्वा फलं चैव मनोहरम् ॥ ६ ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि ॥
कुले महति वै पूज्ये नरजन्म ततोऽभवत् ॥ ७ ॥
धनधान्यसमायुक्तो विष्णुपूजासु तत्परः ॥
ब्राह्मणस्यैव स्वर्णं हि न दत्तं वै गृहीतवान् ॥ ८ ॥
तस्मात्खलु वरारोहे पुत्रस्तस्य न जायते ॥
शरीरे च महाकष्टं मध्ये मध्ये प्रजायते ॥ ९ ॥
तस्य चोत्तरफाल्गुन्याः प्रथमे चरणे शुभे ॥
जन्म वै चाप्यभूद्देवि पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ १० ॥
अस्य पापस्य वै शान्तिं पुण्यं शृणु वरानने ॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्वारमेकं च तत्परः ॥ ११ ॥

बहुत कालतक भोगा पवित्र तीर्थपर शरीर त्यागनेसे वह वैश्य स्त्रीकरके सहित ॥५॥ हे विशालाक्षि! अयोध्यापुरीमें मरनेसे तथा अक्षय स्वर्गवासको प्राप्त होता भया और पंदरह (१५) युग वर्ष परिमित मनोहर तिसके फलको भोगता भया ॥६॥ हे सुरेश्वरि! तहां पुण्य क्षीण होनेपर मृत्युलोकमें बडोंसे पूजित उत्तम कुलमें मनुष्यजन्मको प्राप्त हुआ ॥७॥ धनधान्यसे युक्त विष्णुपूजामें रत है और ब्राह्मणका द्रव्य नहीं देनेसे तथा आपही भोगनेसे इस पापके प्रभावसे ॥८॥ हे वरारोहे! तिसके पुत्र नहीं हुआ और शरीरमें महाकष्टकी प्राप्ति मध्य मध्यमें होती भई ॥९॥ और हे देवि! तिसका उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रके पहिले चरणमें जन्म होता भया इससे पुत्र और कन्यासे रहित हुआ ॥ १० ॥ हे वरानने! इस पापकी पवित्र शांतिको तू श्रवण कर एकवार सावधान होके हरि-

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं तथा ॥ १२ ॥
होमं च तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥
दशवर्णाः प्रदातव्याः स्वर्णयुक्ताश्च साम्बराः ॥ १३ ॥
भूमिदानं ततो देवि विप्राय विदुषे प्रिये ॥
व्रतं सूर्यस्य वै कुर्य्यात्पत्न्या सह वरानने ॥ १४ ॥
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं सुवर्णं दक्षिणां ततः ॥ १५ ॥
शय्यादानं प्रयत्नेन प्रकुर्यान्नियतेन्द्रियः ॥
एवं कृते न संदेहः सर्वरोगो विनश्यति ॥ १६ ॥
अपुत्रो लभते पुत्रं काकवन्ध्या सुतं लभेत् ॥
मृतवत्सा सुतं सूते चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मवि० पार्वतीहर० उत्तरान० प्रथम० प्रायश्चि०
नाम अष्टाचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

वंशका श्रवण करे॥११॥ और घरमेंसे द्रव्यके छठे भागका दान कर देवे और गायत्रीके मूलमंत्रका दश हजार (१००००) जप करावे ॥१२॥ और तिसका दशांश हवन तथा दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे और दशवर्णवाली गौओंका दान सुवर्ण और वस्त्रोंसे युक्त करके देवे ॥ १३ ॥ हे देवि ! पृथिवीका दान वेदके पढे हुए ब्राह्मणको देवे और हे वरानने ! स्त्रीकरके सहित हुआ आदित्यका व्रत करे ॥ १४ ॥ और पेठे तथा नारियलको पंचरत्नसे युक्त कर सुवर्णकी दक्षिणासहित गंगाजीके मध्यमें देवे ॥१५॥ और शुद्धमन जितेंद्रिय होके यत्नसे शय्याका दान देवे ऐसे करनेसे सब रोग नष्ट होते हैं इसमें संदेह नहीं ॥ १६ ॥ ऐसे विना पुत्रवाले पुत्रको

अथ एकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

पुरुषोत्तमपुरे रम्ये स्वर्णकारोऽवसत्पुरा ॥
स्वकर्मनिरतो नित्यं हेमकृत्ये विचक्षणः ॥ १ ॥
ब्राह्मणस्तस्य वै मित्रं धनाढ्यो वेदवर्जितः ॥
तेन विप्रेण भो देवि स्वर्णं दत्तं शतं पलम् ॥ २ ॥
स्वर्णकाराय मित्राय माल्यार्थं च विचक्षणः ॥
ब्राह्मणाय न दत्तं हि माल्यं दिव्यं वरेऽनघे ॥ ३ ॥
ब्राह्मणस्याभवन्मृत्युः किंचित्काले गते सति ॥
स्वर्णं तत्स्वेच्छया भुक्तं पुत्रदारयुतेन च ॥ ४ ॥

प्राप्त होते हैं और काकवन्ध्या स्त्रीभी पुत्रको प्राप्त होती है मरनेवाले पुत्रोंवाली स्त्रीभी बहुत कालतक जीवनेवाले पुत्रको प्राप्त होती है ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां० उ० प्र० नामाष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

पुरुषोत्तमपुरके विषे पहिले एक स्वर्णकार वास करता भया अपने कर्ममें रत सुवर्णके काममें चतुर ॥ १ ॥ हे देवि ! तिस स्वर्णकारका एक ब्राह्मण मित्र होता भया वह धनसे युक्त था और वेदसे रहित था तिस विप्रने सौ (१००) पल संख्यावाला सुवर्ण उस स्वर्णकार (सुनार) को दिया ॥ २ ॥ हे अनघे ! तिस स्वर्णकारमित्रको माला बनानेके वास्ते दिया था फिर तिस स्वर्णकारने माला न दी ॥ ३ ॥ तब कुछ काल व्यतीत होनेपर तिस ब्राह्मणका मृत्यु हो गया तब वह द्रव्यसुवर्णकारने पुत्रदारासे युक्त हो भोगा

ततो बहुगते काले स्वर्णकारस्य वै शिवे ॥
मरणं वै तदा जातं पुत्रदारयुतस्य च ॥ ५ ॥
महाकटाहनरके दूतैः क्षिप्तो यमाज्ञया ॥
युगमेकं वरारोहे भुक्तं नरकजं फलम् ॥ ६ ॥
नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥
व्याघ्रयोनिं ततो भुक्त्वा शृगालत्वं ततोऽभवत् ॥ ७ ॥
ततः काकस्य वै योनिं भुक्त्वा नरकमाप्नुयात् ॥
देशे पुण्यतरे देवि मानुषत्वं सुरेश्वरि ॥ ८ ॥
पूर्वजन्मनि यत्स्वर्णं ब्राह्मणस्य हृतं प्रिये ॥
तेन पापेन भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते ॥ ९ ॥
गर्भस्रावो भवेन्नार्य्याः काकवन्ध्या च जायते ॥
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु देवि सुशोभने ॥ १० ॥

॥ ४ ॥ हे शिवे ! फिर बहुतसा काल पाके तिस स्वर्णकारका पुत्रदारासमेत मृत्यु हुआ ॥ ५ ॥ हे वरारोहे ! वह स्वर्णकार यमराजकी आज्ञा पाय दूतोंने महाकटाह नामवाले नरकमें प्राप्त किया तहां एक युग संख्यावाले वर्षोंतक नरकके फलको भोगता भया ॥ ६ ॥ और हे देवि ! नरकसे निकसके भेडियाकी योनिको प्राप्त हुआ फिर भेडियाकी योनिको भोगके गीदडकी योनिको प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥ और हे देवि ! तहांसेभी काकपक्षीकी योनिको प्राप्त हुआ फिर तहांके दुःखोंको भोग हे सुरेश्वरि ! अतिपवित्र देशमें मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ ८ ॥ हे प्रिये ! पहिले जन्ममें ब्राह्मणका सुवर्ण भोगा तिस पापसे पुत्र न हुआ ॥ ९ ॥ और गर्भके गेरनेवाली तिसकी स्त्री काकवन्ध्यापनेको प्राप्त होती भई । हे सुशोभने ! हे देवि ! इस पापकी शांति मैं कहता हूं तू श्रवण कर ॥ १० ॥

षडंशं च ततो देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥
दशायुतजपं कुर्याद्गायत्र्या नियमेन च ॥ ११ ॥
हरिवंशश्रुतिं देवि संकल्प्य श्रद्धया युतः ॥
होमं वै कारयेद्देवि स्वर्णदानं शतं पलम् ॥ १२ ॥
गोदानं विधिवत्कुर्याच्छिवपूजनमेव च ॥
एवं कृते न संदेहः शीघ्रं पुत्रमवाप्स्यते ॥ १३ ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥
काकवन्ध्या प्रसूयेत सत्यमेव न संशयः ॥ १४ ॥
रोगात्प्रमुच्यते शीघ्रं ज्वरं सर्वं क्षयं व्रजेत् ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसं० उत्तरानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥४९॥

घरमेंसे द्रव्यका छठा भाग ब्राह्मणको देवे दश हजार गायत्रीका नियमसे जप करावे ॥ ११ ॥ हे देवि ! हरिवंशका श्रवण करे और श्रद्धायुक्त होके हरिवंशका संकल्प करे होमादि करावे सौ (१००) पल संख्यावाले सुवर्णका दान देवे॥१२॥विधिपूर्वक गौका दान करे शिवजीका पूजन करे ऐसे करनेसे जलदी पुत्रकी प्राप्ति होय॥१३॥ मरनेवाले पुत्रोंकी माता बहुत कालतक जीवनेवाले पुत्रोंको प्राप्त होवे और काकवन्ध्याभी पुत्रको जन्मे यह सत्य है इसमें संशय नहीं सब ॥ १४ ॥ रोगोंसे जलदी छूटे और सब ज्वर नाशको प्राप्त होवे ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां भाषाटीकायां पार्व० उत्तरानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥

अथ पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

पुरे वै गहने देवि तैलकारोऽवसत्पुरा ॥
महाधनाढयो वै देवि कोटिद्रव्येण संयुतः ॥ १ ॥
तस्य च स्त्रीद्वयं चासीज्ज्येष्ठायां वै विषं ददौ ॥
कनिष्ठा च गृहे तस्य गृहिणी धर्मचारिणी ॥ २ ॥
एवं बहुगते काले तैलकारस्य वै शिवे ॥
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ३ ॥
महाकटाहे नरके निक्षिप्तश्च सुदारुणे ॥
तत्र च बहुधा पीडा नानानरकयातना ॥ ४ ॥
त्रिंशत् सहस्रं वै वर्षं तीव्रं दुःखं च जायते ॥
भुक्तं नरकजं दुःखं योनिं सर्पस्य वै शिवे ॥ ५ ॥
गृध्रत्वं कुक्कुटत्वं वै द्वे योनी च तदा गतः ॥
मानुषस्य च वै योन्यां जातः खलु वरानने ॥ ६ ॥

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! पहिले एक गहन नामवाले पुरमें तैलकार (तेली) वसता भया और वह महाधनसे युक्त कोटि संख्यावाले द्रव्यसे युक्त था ॥ १ ॥ और तिसके दो स्त्री (२) थी वह बडी स्त्रीको जहर देता भया छोटी स्त्री धर्ममें रत तिसके घरमें वास करती भई ॥ २ ॥ हे शिवे ! ऐसे तैलकारको बहुतसे दिन होते भये फिर उस तैलकारका मृत्यु हुआ तब वह यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय ॥ ३ ॥ महाकटाह नामवाले घोर नरकमें डाला तहां नाना प्रकारके नरकोंकी पीडाके भोगको प्राप्त हो ॥४॥ तीस हजार वर्षोंतक बडे दुःखको प्राप्त हुआ फिर हे शिवे ! नरकोंके दुःखोंको भोगके सर्पयोनिको प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥ हे वरानने ! गृध्रपक्षीकी

धनधान्यसमायुक्तो गुणज्ञो ज्ञानवानपि ॥
ततो वै तस्य मरणं गङ्गायां देव्यभूत्पुरा ॥ ७ ॥
तत्पुण्येन महादेवि मानुषो धनवानभूत् ॥
तैलकारो यतः पूर्वं ज्येष्ठायै च विषं ददौ ॥ ८ ॥
तत्पापेनैव भो देवि पुत्रो नैव प्रजायते ॥
बहुरोगेण संयुक्तो भार्या कष्टयुता सदा ॥९॥
अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सविस्तरम् ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं करोतु सः ॥ १० ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥ ११ ॥
त्र्यम्बकेति च मन्त्रेण दशायुतजपं पुनः ॥
दशवर्णां ततो दद्यात् कूष्माण्डं रत्नसंयुतम् ॥१२॥

योनिको प्राप्त हो फिर मुरगेकी योनिमें प्राप्त हुआ फिर मनुष्य-योनिमें प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥ हे देवि ! धनधान्यसे युक्त, गुणी, ज्ञानवान् ऐसा है यह गङ्गाजीमें मृत्युको प्राप्त हुआ था ॥७॥ हे देवि! तिस पुण्यके प्रतापसे धनी होता भया पहिले तैलकार होके जैसे जेठी स्त्रीको जहर देता भया ॥ ८ ॥ हे देवि ! तिस पापके प्रभावसे पुत्र न भया और बहुतसे रोगोंसे युक्त होता भया और तिसकी भार्या कष्टसे युक्त रहती है ॥९॥ हे देवि ! अब तिसकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर अपने घरमेंसे द्रव्यका आठवां भाग पुण्य करे ॥ १० ॥ और गायत्रीके मूलमन्त्रका लक्ष जप करावे और तिसका दशांश हवन, दशांश मार्जन, दशांश तर्पण करावे ॥ ११ ॥ और त्र्यंबकमंत्रका दश हजार जप करावे दशवर्णोंवाली गौओंका दान देवे रत्नोंसे संयुक्त किये पेठेका दान देवे ॥ १२ ॥

काश्यां वै ग्रहणे दद्यात्पत्न्या सार्द्धं महद्धनम् ॥
कार्तिके माघवैशाखे प्रातःस्नानं समाचरेत् ॥ १३ ॥
तिलधेनुं ततो दत्त्वा सद्यः पापात्प्रमुच्यते ॥
एवं कृते न संदेहो वंशलाभो भवेत् ध्रुवम् ॥ १४ ॥
कन्यकाजननी यापि सापि पुत्रवती भवेत् ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १५ ॥
रोगात्प्रमुच्यते शीघ्रं ज्वरो नैव प्रजायते ॥ १६ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्राय० नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५०॥

अथ एकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

गयापुर्यां पुरा देवि ब्राह्मणोऽध्यवसत्प्रिये ॥
वेदकर्मपरिभ्रष्टो मद्यपानरतः सदा ॥ १ ॥

और काशीजीमें ग्रहणसमयमें स्त्रीसहित बहुतसा द्रव्य दान देवे तथा कार्तिक, माघ, वैशाख इन मासोंमें प्रातःकाल स्नान करे॥१३॥ और तिलधेनुका दान देनेसे तत्काल पापसे छूट जाता है ऐसे करनेसे वंशका लाभ होवे इसमें संशय नहीं ॥१४॥ और जो कन्याकोभी जनती है वहभी पुत्रवाली होवे और मरनेवाले पुत्रोंकीभी माता बहुत कालतक जीनेवाले पुत्रको प्राप्त होती है ॥१५॥ और रोगसे जल्दी छूट जाता है ज्वरकी पीडा तिसके नहीं होवे ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

शिवजी कहते हैं-हे प्रिये ! गया नामवाली पुरीमें एक ब्राह्मण

स्तेयवेश्यासुसंसर्गी स प्रतिग्रहवानपि ॥
वयः सर्वं गतं चेत्थं वृद्धे जाते मृतः स वै ॥ २ ॥
यमदूता महाघोरे कटाहनरकेऽक्षिपन् ॥
लक्षत्रयमितं देवि भुक्तं नरकजं फलम् ॥ ३ ॥
चाणूरस्य कुले जन्म ततः प्रेतोऽगमत्पुरा ॥
बिडालत्वं ततो यातः फल्गुतीर्थे मृतः स वै ॥ ४ ॥
पुनर्मानुषयोनित्वं मध्यदेशे सुरेश्वरि ॥
कन्यकाजननी भार्या शरीरे सततं ज्वरः ॥ ५ ॥
चिन्तोद्विग्नः सदा देवि बहुदुःखेन पीडितः ॥
अस्य शान्तिं शृणुष्वादौ यतः पापक्षयो भवेत् ॥६॥
केशवस्याऽर्चनं चादौ साधूनां सेवनं सदा ॥
ब्राह्मणे दृढभक्तिश्च दाने वै भोजने तथा ॥ ७ ॥

वास करता भया वह वेदकर्मसे भ्रष्ट मदिरापानमें रत ॥ १ ॥ चौरपनमें युक्त वेश्यासंग प्रतिग्रहको लेनेवाला था ऐसे सब आयु व्यतीत कर वृद्धपनेको प्राप्त हो मर गया ॥ २ ॥ हे देवि ! वह यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय महाघोर नरकमें डाला तीन लक्ष परिमाणवाले वर्षोंतक नरकके दुःखोंको भोगता भया ॥ ३ ॥ फिर चाणूर नामवाले कुलमें जन्म होके तहांसे फिर प्रेतगतिको प्राप्त हुआ फिर बिलावकी योनिको प्राप्त हो फल्गुनामवाले तीर्थपर मृत्युको प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥ फिर हे सुरेश्वरि ! मध्यदेशमें मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया और तिसके कन्या पैदा करनेवाली भार्या हुई और शरीरमें निरंतर ज्वरकी पीडा ॥ ५ ॥ हे देवि ! चित्तमें उद्वेग बहुतसे दुःखसे पीडित रहता भया अब इसके पापकी शांतिको कहते हैं जैसे पापक्षय होवे तू श्रवण कर ॥ ६ ॥ केशव

गां सवत्सां ततो दद्याद्विप्राय प्रतिवत्सरम् ॥
श्रवणं विष्णुशास्त्रस्य हरिवंशश्रुतिं तथा ॥ ८ ॥
एवं कृते न संदेहो बहुपुत्रः प्रजायते ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति काकवन्ध्या च पुत्रिणी ॥ ९ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्राय० नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

अथ द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

स्वर्णकारोऽवसद्देवि पुरे भोजकटे तथा ॥
स्त्री तस्यासीन्महादुष्टा परपुंसि रता सदा ॥ १ ॥
तद्गृहे वैश्य एकोऽपि ह्यागतो धनसंयुतः ॥
तयोः प्रीतिरभूद्देवि स्वर्णकारकवैश्ययोः ॥ २ ॥

भगवान्का पूजन, सब कालमें श्रेष्ठ पुरुषोंका सेवन, ब्राह्मणोंमें दृढभक्ति, ब्राह्मणोंको दान तथा भोजन करना ॥ ७ ॥ और बछडा करके युक्त गौका दान ब्राह्मणके अर्थ प्रतिवत्सर करावे विष्णुपुराणका श्रवण करना तथा हरिवंशका श्रवण करना ॥ ८ ॥ ऐसे करनेसे बहुतसे पुत्रोंको प्राप्त होवे इसमें संशय नहीं और सब रोग नाशको प्राप्त होवे काकवन्ध्या स्त्रीभी पुत्रको प्राप्त होवे ॥९॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तरानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम एकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! एक स्वर्णकार भोजकट नामवाले पुरमें वास करता भया और तिसकी स्त्री महादुष्टा सर्वकालमें परपुरुषोंसे गमन करनेवाली होती भई ॥ १ ॥ हे देवि ! तिस स्वर्ण-

व्यापारार्थं गृहीतं तु वैश्यस्वर्णं तदा प्रिये ॥
पलं शतमितं देवि विक्रयं चाकरोत्किल ॥ ३ ॥
स्वर्णकारस्य या पत्नी सुन्दरी कुलटा परा ॥
प्रीत्या तदाऽभजत्पत्नी वैश्याय धनिकाय वै ॥ ४ ॥
एवं बहुगते काले वैश्यस्य मरणे सति ॥
पश्चान्मृतस्तदा सोऽपि स्वर्णकारो वरानने ॥ ५ ॥
उभौ च नरके प्राप्तौ बहुकालं तु दोषतः ॥
युगैकसंमितं देवि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ६ ॥
नरकान्निःसृतौ तौ तु शुनो योनिं तदा गतौ ॥
पुनर्वृषभयोनिं च नरयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥
महद्धनैः समायुक्तो देशे पुण्यतमे शुभे ॥
पूर्वजन्मप्रसङ्गेन स वैश्यः पुत्रतां गतः ॥ ८ ॥

कारके घरमें एक वैश्य धनसे युक्त आके बास करता भया और तिन दोनोंकी परस्पर प्रीति होती भई ॥ २ ॥ तब हे प्रिये ! तिस वैश्यका स्वर्ण सौ (१००) पल प्रमाण व्यापारके वास्ते स्वर्णकार ग्रहण करता भया ॥ ३ ॥ और जौनसी स्वर्णकारकी पत्नी कुलटा सुन्दरी नामवाली चतुरा थी वह प्रीतिसे उस धनयुक्त वैश्यको भजती भई ॥४॥ ऐसे बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिस वैश्यका मृत्यु हुआ फिर हे वरानने ! पीछेसे वह स्वर्णकारभी मृत्युको प्राप्त हुआ ॥५॥ तब वे वैश्य और स्वर्णकार दोनों नरकमें प्राप्त हुए । हे देवि ! पापके प्रभावसे एक युग संख्यावाले वर्षोंकी अवधिपर्यंत नरकके दुःखोंको भोगते भये ॥ ६ ॥ फिर नरकसे निकसके दोनों श्वानयोनिको प्राप्त होते भये फिर तहां बैलकी योनिको प्राप्त होके मनुष्ययोनिमें जन्म होता भया ॥ ७ ॥ पुण्यसे युक्त देशमें बहुत

भार्या तस्य तु भो देवि या पुरा व्यभिचारिणी ॥
पुत्रोत्पत्तिस्तदा तस्यां मरणं शीघ्रमाप्नुयात् ॥ ९ ॥
शरीरे महती पीडा सततं चिन्तया युतः ॥
अस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि यथोक्तं शृणु वल्लभे ॥ १० ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्ये च कारयेत् ॥
जातवेदेति मन्त्रेण पञ्चायुतजपं तथा ॥ ११ ॥
दशांशं हवनं कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा ॥
पापशान्त्यै च भो देवि भोजयेत् ब्राह्मणान् शतम् १२
गोदानं च विशेषेण शय्यादानं तथा प्रिये ॥
प्रतिमां कारयेद्देवि सुवर्णस्य तदा प्रिये ॥ १३ ॥
एकादशपलैनैव रचितां वस्त्रभूषिताम् ॥
पूजयेद्विधिवद्देवि मन्त्रेणानेन वै शिवे ॥ १४ ॥

धन करके युक्त होता भया । पूर्वजन्मके प्रसंगसे वह वैश्य पुत्रभावको प्राप्त होता भया ॥८॥ और हे देवि ! भार्या तिसकी जौनसी पहिले व्यभिचारिणी थी तिसके (वह वैश्य) पुत्र होके शीघ्रही मर गया ॥ ९ ॥ और हे वल्लभे ! इसके शरीरमें महापीडा है और निरंतर चिंतासे युक्त है अब यथोक्त तिसकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर॥१०॥अपने घरके द्रव्यसे आठवां भाग पुण्य करे जातवेदमंत्रका अर्द्ध लक्ष जप करावे॥११॥ दशांश हवन, दशांश मार्जन, दशांश तर्पण और पापकी शांतिके वास्ते सौ (१००) संख्या ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥१२॥ हे प्रिये ! विशेषतासे गौका दान देवे और हे प्रिये ! सुवर्णकी प्रतिमा अर्थात् मूर्ति बनवावे ॥ १३ ॥ एकादश (११) पल प्रमाण सुवर्णकी मूर्ति बनवाके फिर वस्त्रसे युक्त और आभूषणसे युक्त तिस मूर्तिको करे विधिवत् पूजन करे

श्रीविष्णो पुण्डरीकाक्ष भुवनानां च पालक ॥
चन्दनैः प्रतिमां दिव्यां पूजयामि गृहाण भोः ॥१५॥
ॐ शङ्खाय नमः ॐ चक्राय नमः ॐ गदायै नमः ॐ शार्ङ्गाय नमः ॐ गरुडाय नमः ॐ नन्दकाय नमः ॐ सुनन्दाय नमः ॐ जयाय नमः ॐ विजयाय नमः॥
ॐ भोः किरीटिन् महादेव शङ्खचक्रगदाधर ॥
पापं मया कृतं पूर्वं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥ १६ ॥
ततः प्रदक्षिणां कुर्य्यात्पत्न्या सह वरानने ॥
प्रतिमां पूजितां चैव ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १७ ॥
एवं कृते तदा देवि पुत्रो भवति नान्यथा ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहि० पार्वतीहरसंवादे हस्तनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५२॥

इन मन्त्रोंकरके ॥१४॥ ॐ शंखाय नमः १ ॐ चक्राय नमः २ ॐ गदायै नमः ३ ॐ शार्ङ्गाय नमः४ ॐ गरुडाय नमः५ ॐनन्दकाय नमः६ ॐ सुनन्दाय नमः ७ ॐ जयाय नमः ८ ॐ विजयाय नमः ९ ॥ ॐ हे किरीटिन् ! हे महादेव ! हे शङ्खचक्रगदाधर ! मैंने पूर्व जो पाप किया वह हे दयानिधे ! क्षमा करो ॥१५॥१६॥ फिर हे वरानने ! परिक्रमा करे प्रतिमाका पूजन करके संकल्प कर ब्राह्मणको देवे ॥१७॥ हे देवि ! ऐसे करनेसे पुत्र होवे और प्रकारसे पुत्र नहीं होवे और सब रोग दूर होवें इसमें विचार नहीं करना ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे हस्तनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५२ ॥

अथ त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

वङ्गदेशे महादेवि केशवं नाम वै पुरम् ॥
खड्गनामेति विख्यातो नापितो वसति प्रिये ॥ १ ॥
महाधनसमायुक्तो भाग्यवान् देवपूजकः ॥
तस्य पत्नी विशालाक्षी लीलानाम्नीति विश्रुता ॥२॥
तस्यां पुत्रद्वयं जातं नापितस्य तदा प्रिये ॥
एको द्यूतपरः पुत्रो द्वितीयश्चोरसंमतः ॥३॥
परस्त्रीलम्पटो देवि नापितस्य च वै सुतः ॥
ज्येष्ठपुत्रस्य या भार्या पुंश्चली चातिसुन्दरी ॥ ४ ॥
नापितं प्राभजत्सा तु श्वशुरं खड्गनामकम् ॥
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्तदा ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-कि हे देवि ! हे प्रिये ! वङ्गदेशमें केशव नाम पुर है तहां एक नापित अर्थात् नाई जातिसे प्रसिद्ध वास करता भया ॥ १ ॥ और महाधनसे युक्त भाग्यवान् देवताका पूजन करनेवाला ऐसा होता भया और तिसकी स्त्री विशाल नेत्रोंवाली लीलानामसे विख्यात होती भई ॥ २ ॥ हे प्रिये ! तिस स्त्रीमें नापितको दो पुत्र हुए एक पुत्र द्यूत अर्थात् जुवेमें तत्पर और दूसरा चोरीमें तत्पर होता भया ॥ ३ ॥ और हे देवि ! नापितका पुत्र परस्त्रीगमनमेंभी तत्पर होता भया और जेठे पुत्रकी जो भार्या थी वहभी जारकर्ममें अति चतुरतासे युक्त थी ॥ ४ ॥ सो-भी खड्गनामसे विख्यात अपने ससुरेको भजती भई ऐसे बहुत

तदा पत्नी सती जाता नापितस्य चिताग्निना ॥
सत्यलोकमभूद्देवि भार्य्यया सहितस्य वै ॥ ६ ॥
युगमेकायुतं देवि सत्यलोकेऽवसत्तदा ॥
ततः पुण्यक्षये जाते पुनर्मानुषतां गतः ॥ ७ ॥
धनधान्यसमायुक्तो ह्यपुत्रश्च सुशोभने ॥
पञ्च कन्याः प्रजायन्ते व्याधिस्तस्य प्रजायते ॥ ८ ॥
अस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापक्षयं यतः ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ ९ ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १० ॥
वाटिकाकूपमार्गांश्च तडागं चैव कारयेत् ॥
तुलसीसेवनं नित्यमेकादश्यां व्रतं ततः ॥ ११ ॥

काल व्यतीत होनेमें तिस नाईका मृत्यु हुआ ॥५॥ और हे देवि ! तब उसकी पत्नी नापितके चितामें सती होती भई तिसके प्रभावसे दोनोंको सत्यलोक होता भया ॥ ६ ॥ हे देवि ! एक युगपर्यंत सत्यलोकमें वास कर पुण्य क्षीण होनेपर मनुष्यलोकमें जन्म हुआ ॥ ७ ॥ हे सुशोभने ! धनधान्यसे युक्त, पुत्रसे रहित, पांच कन्याओंसे युक्त और शरीरमें व्याधि ऐसा होता भया ॥ ८ ॥ अब तिस पापकी शांतिको कहते हैं जिससे पहिले दोष नष्ट होवे अपने घरके द्रव्यसे अष्टम भाग ब्राह्मणको दान करके देवे ॥ ९ ॥ और गायत्रीके मूलमंत्रका लक्ष जप, दशांश हवन तथा दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे ॥ १० ॥ बगीचा, कुवा, तालाब पंथके मध्यमें करानेसे नित्य तुलसीजीके सेवनसे एकादशीके व्रत

वृंताकं मूलिकां चैव न भोक्तव्यं कदाचन ॥
दशवर्णां ततो दद्याद्धरिवंशश्रुतिं तथा ॥ १२ ॥
एवं कृते न संदेहः पुत्रो भवति तस्य वै ॥
कन्यका नैव जायन्ते वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ॥१३॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् १४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिता० पार्वतीहरसंवादे हस्तनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्राय० नाम त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५३॥

अथ चतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

कौशिक्या दक्षिणे कूले कारुको न्यवसत्प्रिये ॥
विष्णुभक्तिरतो नित्यं कृषिकर्मसु तत्परः ॥ १ ॥
धनं तु सञ्चितं देवि कार्पण्यात्पुण्यवर्जितम् ॥
एकस्मिन् समये रात्रौ क्षेत्रे व्याघ्रेण वै हतः ॥ २ ॥

करनेसे पाप दूर होते हैं ॥ ११ ॥ वृंताक तथा मूलिकाको भोजन नहीं करे और दश वर्णोंवाली गौओंका दान देवे और हरिवंशका श्रवण करे ॥ १२ ॥ ऐसे करनेसे तिसके निश्चय पुत्र होवे कन्याकी उत्पत्ति नहीं होवे और वन्ध्यापना दूर होवे ॥ १३ ॥ सब रोग नाशको प्राप्त होवें तथा काकवन्ध्या स्त्रीभी पुत्रको प्राप्त होवे ॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां हस्तनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

शिवजी कहते हैं-हे प्रिये ! कौशिकी नदीके दहिने किनारेपर कारुक अर्थात् चटाई बनानेवाला वास करता भया वह विष्णुभक्त और नित्य कृषिकर्ममें तत्पर होता भया ॥ १ ॥ हे देवि ! तिसने

यमदूतैर्महाघोरे रौरवे पातितस्तदा ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ३ ॥
ततः कर्मवशाद्देवि बिडालत्वं ततो गतः ॥
पुनः कुक्कुटयोनिर्वै शृगालत्वं ततोऽभवत् ॥ ४ ॥
पुनर्मानुषयोनिश्च मध्यदेशे वरानने ॥
पुत्रकन्याविहीनश्च अर्शोरोगेण पीडितः ॥ ५ ॥
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ॥
सूर्यमाराधयेन्नित्यं व्रतं सूर्यस्य वासरे ॥ ६ ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं तथा ॥
प्रयागे नियतः स्नानं माघवैशाखकार्तिके ॥ ७ ॥
भूमिदानं ततो देवि वित्तशाठ्यं न कारयेत् ॥
गोमिथुनं ततो दद्यात्सर्वालंकारभूषितम् ॥ ८ ॥

धनको संचित किया कृपणतासे पुण्यसे रहित हुआ। वह एक समय रात्रिमें क्षेत्रविषें व्याघ्र अर्थात् भेडियाने मार दिया ॥ २ ॥ तब वह यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय रौरव नामवाले नरकमें डाला तहां साठ हजार वर्षोंतक नरकोंमें महादुःखोंको भोगकर ॥ ३ ॥ हे देवि! तहांसे कर्मोंके वशमें प्राप्त हो बिडाल अर्थात् बिलावकी योनिको प्राप्त हुआ फिर कुक्कुटकी योनिको प्राप्त होके शृगाल अर्थात् गीदडकी योनिको प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥ हे वरानने! फिर मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया पुत्र और कन्याकी संतानसे रहित अर्श (बवासीर) रोग करके पीडित होता भया ॥ ५ ॥ अब पहिले पापकी शुद्धिके लिये शांतिको कहता हूं कि नित्यप्रति सूर्यनारायणका आराधन करना तथा आदित्यके दिन व्रत करना ॥ ६ ॥ गायत्रीके मूलमंत्रका जप दश हजार करावे प्रयागमें माघ, वैशाख, कार्तिक इन महीनोंमें नियमसे स्नान करे ॥ ७ ॥ हे देवि!

कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं तुलसीपत्रसंयुतम् ॥
माल्यस्य रचना कार्या स्वर्णैर्दशपलैः शुभा ॥ ९ ॥
विधिपूर्वं विशेषेण विविधं गन्धचर्चितम् ॥
आचार्याय ततो दद्यात् सर्वपापविशुद्धये ॥ १० ॥
पुत्रश्च जायते देवि कन्यका नैव जायते ॥
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥ ११ ॥
अधनो धनमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० हस्तनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुःपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥

फिर भूमिका दान करे और श्रद्धाहीन कर्म न करे और सब गहनोंसे युक्त दो गौओंका दान देवे ॥ ८ ॥ पेठे और नारियलको पंचरत्नसे तथा तुलसीपत्रसे युक्त कर गंगाजीके मध्यमें दान करे और दश पल सुवर्णकी सुंदर माला बनवावे ॥ ९ ॥ फिर विधिपूर्वक गंधादिसे पूजन कर सर्व पापकी शुद्धिके लिये संकल्प करके आचार्यके वास्ते देवे ॥ १० ॥ ऐसे करनेसे हे देवि ! पुत्रकी संतान होवे कन्याका जन्म नहीं होवे और सब रोग नष्ट होवें वन्ध्यापना शांत होवे काकवन्ध्या और मृतवत्सा पुत्रोंको प्राप्त होवे ॥ ११ ॥ निर्धन पुरुष धनको प्राप्त हो इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां हस्तनक्ष० नाम चतुःपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥

अथ पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

हस्तिनानगरे कश्चित्कायस्थो वसति प्रिये ॥
कवलेति समाख्यातस्तस्य स्त्री कमला शुभे ॥ १ ॥
महाधनसमायुक्तो मद्यपानरतः सदा ॥
वेश्यासुरतसंतृप्तो ब्राह्मणस्य विदूषकः ॥ २ ॥
एकस्मिन् समये देवि कश्चिद्विप्रः समागतः ॥
गङ्गाजलसमायुक्तं याचितं तेन भोजनम् ॥ ३ ॥
तच्छ्रुत्वा देहजक्रोधाद्ब्राह्मणं निरभर्त्सयत् ॥
ताडितो भर्त्सितस्तेन विषं पीत्वा द्विजो मृतः ॥ ४ ॥
ततो बहुगते काले मरणं तस्य चाभवत् ॥
तस्य पत्नी सती जाता तद्दिने च वरानने ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-कि हे प्रिये ! हे शुभे ! हस्तिनापुरमें एक कायस्थ वास करता था कवलनामसे विख्यात और तिसकी स्त्रीभी कमला नामवाली थी ॥ १ ॥ और वह महाधनसे युक्त था मदिरापानमें रत वेश्यासंगी ब्राह्मणको दोष लगानेवाला ॥ २ ॥ ऐसा था । हे देवि ! एक समय तिसके पास एक ब्राह्मण आता भया वह तिसके गंगाजलयुक्त भोजनकी याच्ना करता भया ॥३॥ तिस वचनको सुनके देहसे उठ क्रोधसे वह कायस्थ तिस ब्राह्मणको झिटकता भया वह ताडित और झिटका हुआ ब्राह्मण विष अर्थात् जहर पीके मृत्युको प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥ तब हे वरानने ! बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिस कायस्थकाभी मृत्यु हुआ तब तिसी

बहून्यब्दसहस्राणि सत्यलोकेऽवसत्तदा ॥
सौख्यानि बहुधा तत्र प्रभुक्तानि वरानने ॥ ६ ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं पुनर्गतः ॥
धनधान्यसमायुक्तो विप्रवंशे प्रजायते ॥ ७ ॥
जाताश्च बहवः पुत्रा गौराङ्गप्रियदर्शनाः ॥
गुणज्ञा रूपसंपन्ना म्रियन्ते प्रीतिवर्द्धनाः ॥ ८ ॥
द्वौ पुत्रौ शीलसंपन्नौ चोद्वाहेन समायुतौ ॥
पितुः कर्मवशाद्देवि ब्रह्महत्या पुरा यतः ॥ ९ ॥
राजरोगसमायुक्तो जायागर्भो विनश्यति ॥
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि पतिव्रते ॥१०॥
विष्णोरराटमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥
दशांशं हवनं कुर्यात् तर्पणं मार्जनं तथा ॥ ११ ॥

दिन तिसकी स्त्री सती होती भई ॥ ५ ॥ हे वरानने ! बहुत वर्षों-तक सत्यलोकमें वास कर तहां अनेक प्रकारके सुखोंको भोगता भया ॥ ६ ॥ फिर तहांसे पुण्य क्षीण होनेपर मनुष्यपनेको प्राप्त हो धनधान्यसे युक्त विप्रवंशमें पैदा हुआ ॥ ७ ॥ और तिसके गौर अंगवाले तथा प्रिय दर्शनवाले तथा गुणोंके जाननेवाले प्रीतिके बढानेवाले ऐसे बहुतसे पुत्र मरते भये ॥ ८ ॥ और हे देवि ! तिन्होंमें दो (२) पुत्र शीलतासे युक्त विवाहे हुएही पिताके कर्मोंके वशसे जो कि पहले ब्रह्महत्या की थी ॥ ९ ॥ तिससे क्षय-रोगसे युक्त हो गये और इसकी स्त्रीके सन्तान गर्भहीमें नष्ट होती है अब हे देवि ! हे प्रिये ! हे पतिव्रते ! इसकी शांतिको कहता हूं तू श्रवण कर ॥ १० ॥ 'विष्णोरराट०' इस मन्त्रका लक्ष जप करावे दशांश हवन करावे तथा तर्पण मार्जन करावे ॥ ११ ॥

वित्तस्य च षडंशं च ब्राह्मणे दानमाचरेत् ॥
वापीकूपतडागानि पथि मध्ये च कारयेत् ॥ १२ ॥
गामेकां कपिलां दद्यात् सवत्सां वस्त्रभूषिताम् ॥
सुवर्णस्य कृतं विप्रं पलपञ्चदशस्य तु ॥ १३ ॥
दद्याद्विप्राय विदुषे सर्वप्राणिरताय वै ॥
हरिवंशश्रुतिं देवि विधिपूर्वं च कारयेत् ॥ १४ ॥
पुत्रश्च जायते देवि गर्भपातश्च शाम्यति ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं निश्चयो नात्र संशयः ॥ १५ ॥
पुत्राणां मरणं देवि पूर्वपापप्रसङ्गतः ॥
प्रायश्चित्तं विना देवि कुतः शान्तिमवाप्नुयात् ॥१६॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे हस्तनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्राय० नाम पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥५५॥

और अपने घरके द्रव्यसे छठा भाग ब्राह्मणको दान करके देवे और बावडी, कूप, तालाव ये पंथके मध्य करवावे ॥ १२ ॥ और कपिला गौका दान वत्ससहित तथा वस्त्रादि आभूषणोंसे युक्त कर देवे और पंदरह (१५) पल सुवर्णका ब्राह्मण बनवावे ॥ १३ ॥ फिर सब प्राणियोंमें रत वेदके पढे हुए ब्राह्मणको देवे तथा हरिवंशका श्रवण करे ॥ १४ ॥ और हे देवि ! गर्भपातकी शांति होती है तथा काकवन्ध्यापनवालीभी निश्चय पुत्रको प्राप्त होती है इसमें संशय नहीं ॥ १५ ॥ हे देवि ! पूर्वपापके प्रसंगसे तिसके पुत्रोंका मरण हुआ प्रायश्चित्तके विना कैसे शांति होगी अर्थात् इस पापकी शांतिके लिये प्रायश्चित्त करना योग्य है ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां नाम पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥

अथ षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

गयापुर्यां महादेवि क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा ॥
कुकर्मणि रतो नित्यं धनाढ्यः कृपणः शठः ॥ १ ॥
स्त्री भवेच्चञ्चला तस्य द्वौ पुत्रौ च वरानने ॥
कन्या चैका विशालाक्षी जाता तस्यां वरानने ॥२ ॥
उद्वाहिता तदा देवि कन्यका व्यभिचारिणी ॥
महिषीपुत्रघातं च प्रत्यब्दमकरोत्प्रिये ॥ ३॥
अनेनैव प्रकारेण वयः सर्वं क्षयं गतम् ॥
ततः सर्पेण वै दष्टस्तस्य मृत्युरभूत्तदा ॥ ४ ॥
यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तो नरकार्णवे ॥
त्रिसप्ततिसहस्राणि वर्षाणि च वरानने ॥ ५॥

शिवजी कहते हैं–हे देवि ! गया नामवाली पुरीमें एक क्षत्री वास करता भया वह खोटे कर्ममें रत धनसे युक्त अतिकृपण शठ ऐसा होता भया ॥१॥ और हे वरानने ! तिसकी स्त्री चंचला और दो तिसके पुत्र तथा एक कन्या सुन्दर नेत्रोंवाली होती भई ॥ २ ॥ हे प्रिये ! विवाह होतेही वह कन्या व्यभिचारिणी होती भई और वह वर्ष२ के प्रति महिषीपुत्र काटडेको मारता॥३॥ इस प्रकार सब आयु व्यतीत कर दी फिर सर्पके दंशित होनेसे तिसका मृत्यु हो गया॥४॥ हे वरानने ! वह यमराजके दूतोंने महाघोर नरकमें डाला और सत्तर हजार वर्षकी संख्यावाले नरकमें भोगोंको भोगकर॥५॥

भुक्त्वा कष्टं विशालाक्षि गर्भत्वं च ततो गतः ॥
मध्यदेशे विशालाक्षि नरजन्मा च क्षत्रियः ॥ ६ ॥
पुत्रो न जायते देवि पूर्वपापानुसारतः ॥
कन्यका रजसा युक्ता विधवा जायते प्रिये ॥ ७ ॥
महिषीपुत्रघातेन रोगोत्पत्तिश्च जायते ॥
अस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुण्यं शृणु वरानने ॥ ८ ॥
स्ववित्तस्याष्टमं भागं ब्राह्मणाय ददेत वै ॥
एकां कृष्णां च गां देवि स्वर्णशृङ्गीं सवत्सकाम् ॥९॥
सर्वलक्षणसंपन्नां वस्त्रमुक्तादिभूषिताम् ॥
ब्राह्मणाय तदा दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ॥ १० ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यामयुतं जपमाचरेत् ॥
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं ततः ॥ ११ ॥
पथि मध्ये वरारोहे पञ्चवृक्षस्य वाटिकाम् ॥
कारयेद्विभवेनैव विष्णुवृक्षादिभिर्वृताम् ॥ १२ ॥

हे विशालाक्षि ! फिर मध्यदेशमें क्षत्रियजन्म होके पुत्रसे रहित हुआ पूर्वपापके प्रभावसे तिसकी कन्या युवाअवस्थामें विधवा होती है ॥६॥७॥ हे वरानने ! माहिषिपुत्रके घात करनेसे शरीरमें रोगकी उत्पत्ति हुई इस पापकी शांतिके अर्थ पुण्यको कहते हैं तू श्रवणकर ॥८॥ अपने घरके द्रव्यका आठवां भाग ब्राह्मणको दान देवे और एक काली गौ स्वर्णके शृंग बछडेसे तथा वस्त्रोंसे युक्त करके दान देवे॥९॥ और सब लक्षणोंसे युक्त तथा भूषणादिसे युक्त ब्राह्मणको देवे तैसेही सब सामग्रीयुक्त विशेषतासे शय्याका दान देवे॥१०॥ 'गायत्री, जातवेद' इन मन्त्रोंका दश हजार जप करावे और तिससे दशांश हवन तथा तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ ११॥ हे वरारोहे !

भोजयेद्देवि षट्षष्टिब्राह्मणान् वेदपारगान् ॥
निष्कत्रयसुवर्णस्य प्रतिमां वस्त्रभूषिताम् ॥ १३ ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्यात् विष्णुभक्ताय सुन्दरि ॥
एवं कृत्वा विशालाक्षि पूर्वजन्मकृतं च यत् ॥१४ ॥
पापं प्रणाशयेद्देवि नात्र कार्या विचारणा ॥
काकवन्ध्या च या नारी लभते पुत्रमुत्तमम् ॥ १५ ॥
पुत्रश्च जायते देवि सुरूपेण समन्वितः ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१६॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं॰ पार्वतीहरसंवादे चित्रानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥

पंथके मध्यमें पांच वृक्षोंके थांवले लुवावे ऐश्वर्ययुक्त होके पीपलादि वृक्षोंको लावे ॥ १२ ॥ हे देवि ! वेदके पढे हुए ६६ ब्राह्मणोंको भोजन करावे और तीन (३) निष्कप्रमाणवाले तीन तोले सुवर्णकी मूर्ति बना आभूषण वस्त्रसे युक्त करके ॥१३॥ हे विशालाक्षि ! विष्णुके भक्त ब्राह्मणको देवे । हे सुंदरि ! ऐसे करनेसे पहिले जन्ममें जो किया पाप ॥ १४ ॥ हे देवि ! सो नष्ट हो जाता है इसमें कुछ विचार नहीं करना और काकवन्ध्या स्त्रीभी उत्तम पुत्रको पैदा करती है ॥१५॥ हे देवि ! पुत्रभी उत्पन्न होके रूपसे युक्त होता है और सब रोग नाशको प्राप्त होते हैं इसमें कुछ विचार नहीं है ॥ १६ ॥ और मरनेवाले पुत्रोंवालीभी बहुत कालतक जीनेवाले पुत्रोंको पैदा करती है ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे चित्रानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षट्पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥

अथ सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

पुण्येन जायते पुत्रः पुण्येन लभते श्रियम् ॥
पुण्येन रोगनाशः स्यात् सर्वशास्त्रे च संमतः ॥ १ ॥
मध्यदेशे वरारोहे ब्राह्मणो न्यवसत्प्रिये ॥
सरय्वा दक्षिणे कूले कालिकापुरशोभने ॥ २ ॥
शुभे कालीपुरे तत्र द्विजोऽतिष्ठन्महाशनः ॥
स्तेनवेश्यापरस्त्रीणां रतिसंसर्गतत्परः ॥ ३ ॥
मद्यपानं विना देवि निद्रा तस्य न जायते ॥
तस्य स्त्री सुभवा नाम्नी पतिसेवापरायणा ॥ ४ ॥
प्रत्यहं पूजयेद्देवि स्वपतिं पापकारिणम् ॥
ततो बहुगते काले मरणं व्याघ्रतोऽभवत् ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-पुण्यसे पुत्र होता है पुण्यसेही लक्ष्मी होती है पुण्यसेही रोगका नाश होता है यह सब शास्त्रोंका मत है॥१॥ हे वरारोहे ! हे प्रिये ! मध्यदेशमें सरयूके दाहिने किनारेपर कालिका नामवाले सुंदरपुरमें एक ब्राह्मण वसता भया ॥ २ ॥ तहां शुभ कालीपुरमें स्थित हुआ वह ब्राह्मण चोरी, वेश्या, परस्त्रीसंग इन्होंमें तत्पर होता भया॥३॥ और हे देवि ! मदिरापान किये विना निद्रा तिसको नहीं प्राप्त होती थी तिसकी स्त्री सुभवा नामवाली पतिकी सेवामें परायण थी ॥४॥ हे देवि ! वह पापकारी अपने पतिका पूजन करती थी तब बहुत काल व्यतीत होनेसे भेडियाके सकाश-

तस्य पत्नी सती जाता चिताग्नौ च तदाहिता ॥
सत्यलोके ततो देवि कल्पमेकं बुभोज सा ॥ ६ ॥
पत्या सह वरारोहे ततः पुण्यक्षये सति ॥
मृत्युलोके भवेज्जन्म कुले महति पूजिते ॥ ७ ॥
धनधान्यसमायुक्तो बाल्यतो रोगवानपि ॥
पुण्यसंबन्धयोगेन पुण्यस्त्री या च संस्थिता ॥ ८ ॥
पुनर्विवाहिता सैव यायात् पुत्रविवर्जिता ॥
अस्य पापस्य शान्त्यर्थं पुण्यं शृणु वरानने ॥ ९ ॥
गृहवित्तषडंशस्य पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण त्रिलक्षं जपमाचरेत् ॥ १० ॥
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥
दशवर्णास्ततो दानं भूमिदानं विशेषतः ॥ ११ ॥

से तिसका मृत्यु भया ॥ ५ ॥ हे देवि ! तब तिसकी पत्नी चिताके अग्निमें सती होती भई तब तिसके प्रभावसे एक कल्पपर्यंत सत्यलोकमें सुखको भोगते भये ॥ ६ ॥ हे वरारोहे ! पतिके साथ दग्ध भई फिर तहांसे पुण्य क्षीण होनेसे बडोंसे पूजित महान् कुलमें जन्म होता भया ॥ ७ ॥ और धनधान्यसे युक्त बाल्यावस्थाहीमें शरीरमें रोग है पवित्र पुण्यके योगसे जिस पुण्य स्त्री करके सहित रहा था ॥ ८ ॥ हे देवि ! हे वरानने ! वह स्त्री पुनः विवाही है ऐसे वह पुत्रहीन रहा इस पापकी शांतिके लिये शांतिको कहता हूं तू श्रवण कर ॥ ९ ॥ अपने घरके द्रव्यका छठा भाग पुण्य करे और गायत्रीके मूलमंत्रका तीन लक्ष जप करवावे ॥ १० ॥ और दशांश हवन तथा तर्पण तथा मार्जन करावे और दश वर्णवाली गौओंका दान देवे विशेषतासे भूमिका दान देवे ॥ ११ ॥

गोविन्देति ततो नाम जपेन्नित्यं वरानने ॥
प्रातःस्नानं सदा कुर्यान्माघवैशाखकार्तिके ॥ १२ ॥
कृष्णस्य शतकं देवि भूर्जपत्रेण संयुतम् ॥
लेखयित्वा विधानेन स्थापयेत्स्वगृहं प्रति ॥ १३ ॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्यादेकादश्यां व्रतं चरेत् ॥
एवं कृत्वा वरारोहे सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥ १४ ॥
पुत्रश्च जायते देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ १५ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीशिव० चित्रानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तक० नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

अथ अष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यापुरतो देवि योजनत्रयदक्षिणे ॥
सुधर्मपुरविख्याते न्यवसन् बहवो जनाः ॥ १ ॥

हे वरानने ! फिर गोविन्द ऐसे नामका स्मरण करे और माघ, वैशाख, कार्तिक इन्होंमें प्रातःकाल स्नान करे ॥ १२ ॥ हे देवि ! कृष्णमहाराजके सौ नाम चारों तरफसे भोजपत्रपै लिखवाके अपने घरमें स्थापन करे॥१३॥ और हे वरारोहे ! हरिवंशका श्रवण एकादशी तिथिका व्रत करनेसे सब रोग नष्ट होते हैं ॥ १४ ॥ और हे देवि ! पुत्रकी संतान होती है इसमें कुछ विचार नहीं करना॥१५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां चित्रानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! अयोध्यापुरीसे तीन योजन दक्षिण

रतिदासेति विख्यातो बभूव वस्तुविक्रयी ॥
दलाक्षीति समाख्याता तस्य पत्नी च स्वैरिणी ॥२ ॥
पतिं न पूजयेद्देवि रूपगर्ववशा तथा ॥
महिष्यो बहुला आसन् गावो विक्रयकारणात् ॥ ३ ॥
महिषीपुत्रघातं च प्रत्यहं खलु जायते ॥
छागस्य विक्रयो नित्यं छागानां वध एव च ॥ ४ ॥
गोप एको महाप्राज्ञो धनार्थी स्वर्णसंयुतः ॥
तत्र जातो महादेवि वैश्यमित्रं हि बाल्यतः ॥ ५ ॥
तस्य गेहे स्थितो देवि धनधान्यसमन्वितः ॥
वैश्यपत्नी तदा देवि गोपं प्रति तदाभजत् ॥ ६ ॥
एवं बहुगते काले तस्य गोपस्य वै मृतिः ॥
वैश्यगेहे महादेवि धनं गोपस्य वै खलु ॥ ७ ॥

दिशामें सुधर्म नामवाला पुर (एक नगर) विख्यात है तहां बहुतसे जन वास करते भये॥१॥ और तहां एक रतिदास नाम वस्तुके बेचनेवाला (वैश्य) रहता भया और दलाक्षी नामवाली इच्छापूर्वक विचरनेवाली तिसकी स्त्री थी॥२॥ हे देवि ! वह रूपके गर्वमें आके पतिका पूजन नहीं करे थी और तिसके लेने देनेके व्यापारसे महिषी और गौ बहुत होती भई ॥ ३ ॥ वह महिषीके पुत्रका घात नित्य प्रति किया करता और नित्यही छाग अर्थात् बकरियोंको बेचा करता इससे छागोंकाभी वध किया करता ॥ ४ ॥ और तहां हे देवि ! एक गोप महाबुद्धिमान् धनकी इच्छावाला स्वर्णसे युक्त प्राप्त हुआ बाल्यावस्थामेंही वह वैश्यका मित्र था ॥ ५ ॥ और वह हे देवि ! तिसके घरमें स्थित हुआ धनधान्यसे युक्त था तब वैश्यकी पत्नी उस गोपको भजती भई ॥ ६ ॥ हे देवि ! ऐसे

वैश्येनैव तु तत्सर्वं धनं तस्य व्ययं कृतम् ॥
ततः सर्वं वयो यातं वैश्यमृत्युरभूत्तदा ॥ ८ ॥
गङ्गायां च विशालाक्षि पत्नी तस्य तथा मृता ॥
वैश्यस्याभूत्तथा स्वर्गो वर्षषष्टिसहस्रकम् ॥ ९ ॥
वैश्यपत्नी ततो देवि कर्दमे नरके गता ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ १० ॥
नरकान्निःसृता सा तु सर्पयोनिं तथा गता ॥
सर्पयोनिं ततो भुक्त्वा गङ्गायां मरणात् खलु ॥ ११ ॥
शूद्रं प्रति पुरा स्नेहस्ततः शूद्रः स चाभवत् ॥
वैश्यः स्वर्गफलं भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽगमत् ॥ १२ ॥
धनधान्यसमायुक्तो रूपवानतिथीर्हितः ॥
गुणी बहुधनी ज्ञानी पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ १३ ॥

बहुत काल जानेपर तिस गोपका मृत्यु हो गया और तिसका द्रव्य निश्चय वैश्यके घरमें रहा ॥ ७ ॥ और वह सारा द्रव्य वैश्यनेही भोगा फिर काल पाके वैश्यभी मृत्युको प्राप्त हुआ ॥ ८ ॥ और हे विशाल नेत्रोंवाली ! तिसकी वह स्त्रीभी मृत्युको प्राप्त भई तब वैश्यको साठ हजार वर्षका स्वर्गवास होता भया ॥ ९ ॥ हे देवि ! वैश्यकी स्त्री जो थी तिसको साठ हजार वर्षपर्यंत कर्दम नामवाले नरकका वास हुआ और नरकका भोग पूरा होनेपर॥ १० ॥ नरकसे निकस वह स्त्री सर्पकी योनिको प्राप्त भई फिर सर्पयोनिको भोगके गङ्गाजीपर मृत्युको प्राप्त भई ॥ ११ ॥ और शूद्रसे पहिले वह स्नेह रक्खा करता था और तिसके घरमें आया तबभी स्नेहही रक्खा इसवास्ते वह वैश्य स्वर्गके फलको भोगके मनुष्ययोनिमें शूद्रजातिको प्राप्त हुआ ॥ १२ ॥ और धनधान्यसे युक्त

वैश्यस्य शूद्रजातित्वं पूर्वस्नेहफलं यतः ॥
पत्नी सा च समायाता पूर्वसंबन्धकारणात् ॥ १४ ॥
यतो द्रव्यं समाभुक्तं सर्वं शूद्रस्य पापिना ॥
ततश्चैव समुत्पन्नाः कन्या बह्व्यः सुरेश्वरि ॥ १५ ॥
महिषीपुत्रघातित्वाद्वायुरोगादयस्तथा ॥
स्वपतेर्वञ्चनं कृत्वा परपुंसि रता यतः ॥ १६ ॥
तस्मात्पुत्रस्य मरणं गर्भपातः पुनः पुनः ॥
अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि वरेऽनघे ॥ १७ ॥
गृहवित्तषडंशेषु पुण्यं कार्य्यं च यत्नतः ॥
वापीकूपतडागादि पथि मध्ये च कारयेत् ॥ १८ ॥
शिवस्य पूजनं चैव शिवभक्तिमहर्निशम् ॥
नमः शिवाय मन्त्रं च पञ्चलक्षं च जापयेत् ॥ १९ ॥

रूपवाला अभ्यागतका पूजन करनेवाला बहुत धनी गुणवान् ज्ञानसे युक्त व पुत्र कन्यासे रहित होता भया ॥ १३ ॥ क्योंकि पहिले शूद्रसे स्नेह करनेसे तथा शूद्रतामें लीन होनेसे और पहिलेही संबंधके कारणसे तिसकी पत्नीभी अपने कर्मोंसे तहां प्राप्त भई॥१४॥ और हे सुरेश्वरि ! तिसने शूद्रका द्रव्य पहिले शूद्रही होके भोगा तिस पापसे तिसके बहुतसी कन्याही हुईं ॥ १५॥ और महिषीके पुत्र मारनेसे वायुका रोग शरीरमें हुआ और तिसकी स्त्री पतिको छोड परपुरुषको सेवती भई ॥ १६ ॥ हे देवि ! हे वरे ! हे अनघे ! इससे वारंवार गर्भपात हुआ अब इसकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर ॥ १७ ॥ अपने घरके धनसे छठा भाग द्रव्यको यत्नसे पुण्य कर देवे और रास्ताके मध्यमें बावडी कूप तालाब इत्यादि करवा देवे ॥ १८ ॥ शिवजीका पूजन और शिवमें रात

पार्थिवाँल्लक्षसंख्याकान् पूजयेच्च यथाविधि ॥
ॐ नमः शिवाय मन्त्रस्तु सर्वपापप्रणाशनः ॥ २० ॥
देहान्ते मुक्तिदश्चैव मर्त्यलोके च कामदः ॥
हवनं कारयेद्देवि कुण्डे चैव तु शोभने ॥ २१ ॥
चतुरस्रे विशालाक्षि तिलधान्यादितण्डुलैः ॥
ताम्रवर्णां ततो देवि गां दद्याद्विदुषे प्रिये ॥ २२ ॥
निष्कमात्रं ततः स्वर्णं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥
एवं कृते न संदेहो व्याधिनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥ २३ ॥
पुत्रश्च जायते देवि पुनर्गर्भो न नश्यति ॥
काकवन्ध्या पुनः पुत्रं प्रसूयेत न संशयः ॥ २४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० चित्रानक्षत्रस्य तृतीयचरण-प्रायश्चित्तकथनं नामाष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥

दिन भक्ति करे। 'ॐ नमः शिवाय' इस मंत्रका पांच लक्ष जप करावे ॥ १९ ॥ और यथाविधिसे लक्ष संख्यावाले पार्थिवोंका पूजन करावे। 'ॐ नमः शिवाय' यह मंत्र सब पापोंको नाश करनेवाला है ॥ २० ॥ और हे देवि! देहके अंतमें मुक्तिको देनेवाला है और मृत्युलोकमें मनोरथ सिद्ध करता है। हवन सुन्दर कुंडमें करना योग्य है ॥ २१ ॥ और हे विशालाक्षि! हे प्रिये! चौकूंटे कुंडमें तिल जव तंडुल आदिसे होम करे और तांबेके समान वर्णवाली गौ ब्राह्मणको दान करके देवे ॥ २२ ॥ और निष्क (एक तोला) प्रमाण सुवर्ण ब्राह्मणको देवे ऐसे करनेसे निश्चय व्याधिका नाश होता है ॥ २३ ॥ और हे देवि! पुत्रकी प्राप्ति होती

अथैकोनषष्टितमोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

देशे पुण्यतमे देवि प्रतिष्ठानपुरे तथा ॥
ब्राह्मणो वेदविभ्रष्टस्तत्र वासमकारयत् ॥ १ ॥
सुरामांसस्य वै भोक्ता नित्यं मत्स्यामिषस्य च ॥
पापकार्ये विशालाक्षि व्ययकर्ता दिने दिने ॥ २ ॥
तस्य स्त्री परमानाम्नी भ्रष्टा चातीव सुन्दरी ॥
पुरंपुंसि रता नित्यं निर्भया पतिवञ्चिका ॥ ३ ॥
एवं सर्वं वयो यातं तयोर्मृत्युरभूत्किल ॥
पुण्यक्षेत्रे च गङ्गायां देवगन्धर्वपूजिते ॥ ४ ॥

है फिर गर्भ नष्ट नहीं होता और काकवन्ध्या स्त्रीभी फिर पुत्रको उत्पन्न करे इसमें संशय नहीं ॥ २४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० चित्रानक्षत्रस्य तृतीय-चरण० अष्टपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! पुण्यसे युक्त देशमें प्रतिष्ठान नामवाले पुरमें एक वेदसे भ्रष्ट ब्राह्मण वास करता भया ॥ १ ॥ और हे विशालाक्षि ! प्रतिदिन वह मदिरापान तथा मांसादि भक्षण मत्स्यादि भक्षण और इन्होंका विक्रय किया करे था ॥ २ ॥ और तिसकी स्त्री अतिसुन्दरी परमा नामसे प्रसिद्ध वहभी भ्रष्टा निर्भय होके पतिका वंचन (ठगना) कर परपुरुषोंसे भोग किया करती थी ॥३॥ ऐसे सब अवस्था व्यतीत होनेपर तिन्होंका मृत्यु हुआ जहां पवित्र क्षेत्र देवगंधर्वोंसे पूजित गंगाजी थी तहां मृत्युको

तस्य विप्रस्य वै स्वर्गः कल्पमेकं वरानने ॥
भुक्त्वा च विविधं सौख्यं देवकन्याभिरावृतः ॥ ५ ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि ॥ ६ ॥
जन्माऽभवत्तस्य नरस्य शुद्धे महत्कुले पुण्ययुते धनाढ्ये ॥ कान्ता तु सैव प्रबभूव या पुरा स्थिता तदीया व्यभिचारचित्ता ॥ ७ ॥
मद्यपानादिकं पापं पूर्वजन्मनि यत्कृतम् ॥
तत्फलेन महादेवि व्याधिग्रस्तस्ततोऽभवत् ॥ ८ ॥
अथ शांतिं प्रवक्ष्यामि यतः पापक्षयो भवेत् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ ९ ॥
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥
देवस्याराधनं नित्यं सूर्य्यस्य व्रतमाचरेत् ॥ १० ॥
प्रयागे नियतः स्नानं माघे मासि यथाविधि ॥
पत्न्या सह विशालाक्षि ततः पापं प्रणश्यति ॥ ११ ॥

प्राप्त भई ॥ ४ ॥ हे वरानने ! तिस विप्रको एक कल्पतक स्वर्गका वास हुआ तहां अनेक भोगोंको भोगता देवकन्याओंसे युक्त रहा तब हे सुरेश्वरि ! तहांसे पुण्य नष्ट होनेपर ॥५॥६॥ उत्तमकुलमें धनसे युक्त ऐसा मनुष्यजन्म हुआ और जौनसी पहिले व्यभिचारिणी तिसकी स्त्री थी वही कांता होती भई ॥ ७ ॥ हे देवि ! पूर्वजन्ममें मदिरापानादिके फलसे व्याधिसे ग्रस्तशरीर हुआ ॥८॥ अब हे वरानने ! शांतिको कहते हैं जैसे पापोंका क्षय होवे, गायत्रीके मूलमंत्रका लक्ष संख्या जप करावे ॥ ९॥ और दशांश हवन तथा दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन तथा नित्य देवताका आराधन और सूर्यका व्रत करे ॥ १० ॥ हे विशालाक्षि ! प्रयागमें

षडंशं च ततो देवि विप्रेभ्यो दानमाचरेत् ॥
ततो वर्षेण महतीं गां च दद्यात्पयस्विनीम् ॥ १२ ॥
भूमिं वृत्तिकरीं दद्यात् पुत्रपौत्रानुजीविनीम् ॥
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ॥ १३ ॥
रोगार्तो मुच्यते रोगात्काकवन्ध्या सुतं लभेत् ॥
गर्भभ्रष्टा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १४ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० चित्रानक्षत्रस्य चतुर्थच०
नामैकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥

अथ षष्टितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥
कान्यकुब्जे महादेवि राजाप्येकोऽवसत्पुरा ॥
राजधर्मरतः शान्तः प्रजापालनतत्परः ॥ १ ॥

नियमसे स्नान यथाविधि माघमें स्त्रीसहित करनेसे पाप नष्ट होता है ॥ ११ ॥ और हे देवि ! धनमेंसे द्रव्यका छठा भाग ब्राह्मणको देवे और दूधवाली उत्तम गौका दान देवे ॥ १२ ॥ और जोतनेवाली भूमिका दान देवे कैसी कि जिसमें पुत्रपौत्रादिका आजीवन होवे ऐसे करनेसे वंशवृद्धि होवे इसमें संदेह नहीं यह अन्यथा नहीं है ॥ १३ ॥ रोगी रोगसे छूटे काकवन्ध्या पुत्रको प्राप्त होवे गर्भसे भ्रष्टाभी बहुतकालतक जीवनेवाले पुत्रको प्राप्त होवे ॥ १४ ॥
इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां पार्व० प्रायश्चित्तकथनं
नाम एकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! कान्यकुब्ज देशमें एक राजा बसता

रुद्रधर्मेति विख्यातो भार्या तस्य प्रभावती ॥
एकस्मिन् दिवसे देवि ब्राह्मणो भयपीडितः ॥ २ ॥
शरणं श्रावयामास शरणार्थी द्विजोत्तमः ॥
तस्य भार्या महादेवि सुरूपाप्यतिसुन्दरी ॥ ३ ॥
राजपुत्रेण तस्यां तु गमनं मुग्धतः कृतम् ॥
शरणं दत्तवान् राजा पुत्रस्नेहेन यन्त्रितः ॥ ४ ॥
एवं बहुगते काले नृपस्य मरणं यदा ॥
तदा यमाज्ञया दूतैः क्षिप्तो नरककर्दमे ॥ ५ ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि नरके परिपच्यते ॥
नरकान्निःसृतो देवि शूकरत्वं ततोऽलभत् ॥ ६ ॥
पुनः शृगालयोनिं च मानुषत्वं ततोऽगमत् ॥
धनधान्यसमायुक्तो बहुशो गुणवानपि ॥ ७ ॥

भया धर्ममें रत शांतरूप प्रजापालनमें तत्पर ॥ १ ॥ हे देवि ! रुद्रधर्मनामसे विख्यात और तिसकी भार्या प्रभावती नामवाली थी एक दिनविषैं भयसे पीडित एक ब्राह्मण ॥ २ ॥ हे देवि ! शरण अर्थात् मुझको आश्रय दो ऐसा सुनाता भया वह द्विजोत्तम शरणार्थी था और तिसकी भार्या रूपसे अति सुंदरी थी ॥ ३ ॥ तिसके सङ्ग राजपुत्रने मूढतामें प्राप्त हो गमन किया और वह राजा पुत्रस्नेहसे यन्त्रित हो शरण देता भया ॥ ४ ॥ ऐसे बहुत काल व्यतीत होनेपर राजाका मरण हुआ तब यमराजके दूतोंने उसको कर्दमसंज्ञक नरकमें डाला ॥ ५ ॥ साठ हजार वर्षपर्यंत नरकमें दुःखोंको भोग फिर नरकसे निकस शूकरयोनिको प्राप्त होता भया ॥ ६ ॥ फिर गीदडयोनिको प्राप्त होके मनुष्ययोनिको प्राप्त हो धनधान्यसे युक्त बहुत जाननेवाला गुणोंसे युक्त ऐसा होता भया ॥ ७ ॥

पुनर्विवाहिता जाता पत्नी तस्य प्रभावती ॥
पूर्वकर्मफलाद्देवि तस्य पुत्रो न जायते ॥ ८ ॥
शरीरं सततं देवि ज्वरेणैव प्रपीडितम् ॥
वातपित्तकफानां च संभवः स्याद्वयोगते ॥ ९ ॥
अस्य दानं शृणु त्वं हि यथा पापक्षयस्तथा ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १० ॥
वापीकूपतडागानां जीर्णोद्धारं यदा भवेत् ॥
तदा पापं क्षयं याति पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥ ११ ॥
विष्णोरराटमन्त्रेण जपं कुर्याद्विचक्षणः ॥
दद्याद्गां वेदविदुषे सवत्सां चैव शोभने ॥ १२ ॥
वस्त्ररत्नसमायुक्तां घण्टाचामरभूषिताम् ॥
ग्रहणेर्कहिमांश्वोश्च काश्यां स्नानं समाचरेत् ॥ १३ ॥

हे देवि ! पूर्वजन्मके प्रसङ्गसे पुनः विवाही हुई प्रभावती तिसकी पत्नी है और पुत्रकी प्राप्ति तिसके नहीं हुई ॥ ८ ॥ हे देवि ! तिसका शरीर निरंतर ज्वरसे पीडित रहे है और अवस्था व्यतीत होनेपर वात पित्त कफादि रोगोंसे पीडित होता भया ॥ ९ ॥ जैसे पाप नष्ट होवे तैसे इसके दानको कहता हूं तू श्रवण कर । अपने घरके द्रव्यमेंसे आठवां भाग पुण्य कर देवे ॥ १० ॥ और बावडी कूप तालाव इत्यादि प्राचीनोंको फूटे टूटोंको समरुवा देवे तब पहिले जन्मके किये पाप नाशको प्राप्त होते हैं ॥ ११ ॥ हे शोभने ! बुद्धिमान् पुरुष ' विष्णोरराट० ' इस मन्त्रका जप करवावे तथा वेदके पढे हुए ब्राह्मणको बछडायुक्त गौका दान देवे ॥ १२ ॥ और तिस गौको वस्त्रसे तथा घंटा चमर आदि भूषणोंकरके युक्त कर चन्द्रमा सूर्यके ग्रहणमें देवे और काशीजीमें स्नान करे ॥ १३ ॥

निष्कत्रयसुवर्णस्य कमलं कारयेत्ततः ॥
ब्राह्मणाय वरारोहे प्रदद्यात्कमलं शुभम् ॥ १४ ॥
एवं कृते वरारोहे सर्वपापक्षयो भवेत् ॥
अपि वन्ध्या लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १५ ॥
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१६॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० स्वातिनक्षत्रस्य प्रथमचरण-
प्रायश्चित्तकथनं नाम षष्टितमोऽध्यायः ॥६० ॥

अथ एकषष्टितमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥
गङ्गाया दक्षिणे कूले विन्ध्ये च नगरोत्तमे ॥
द्विजोऽप्येकोऽवसद्देवि ब्रह्मकर्मविवर्जितः ॥ १ ॥

हे वरारोहे! तीन निष्कप्रमाण (३ तोला) सुवर्णका एक कमल बनवाके संकल्प कर ब्राह्मणको देवे ॥ १४ ॥ हे वरारोहे! ऐसे करनेसे सर्व पाप नाशको प्राप्त होते हैं और वन्ध्याभी बहुत कालतक जीवनेवाले पुत्रको प्राप्त होती है ॥ १५ ॥ और सब रोग दूर होते हैं इसमें कछु विचार नहीं करना ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० स्वातिनक्षत्रस्य
प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि! गङ्गाजीके दक्षिण किनारेपर विन्ध्य नामवाला उत्तम एक नगर था तहां ब्रह्मकर्मसे रहित एक ब्राह्मण

अनाचाररतो नित्यं परस्त्रीलम्पटः शठः ॥
व्यापारं कुरुते नित्यं गोहिरण्यगजादिकम् ॥ २ ॥
बहुद्रव्यमभूत्तस्य त्रिंशत्कोटिप्रमाणकम् ॥
द्रव्यस्य संग्रहं नित्यं न च किंचिद्ददाति सः ॥ ३ ॥
स्वभार्यां च परित्यज्य परभार्यारतो द्विजः ॥
धनेश्वर इति ख्यातं तस्य नाम पुराभवत् ॥ ४ ॥
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥
यमदूतेन वै बद्धा निक्षिप्तो नरकार्णवे ॥ ५ ॥
महाघोरे सुरश्रेष्ठ कल्पमेकं तदावसत् ॥
पुनर्व्याघ्रस्य योनिं च वृषयोनिं ततोऽलभत् ॥ ६ ॥
पुनर्मानुषयोनिं च मृतवत्सत्वमाप्नुयात् ॥
महारोगसमायुक्तो न सुखं लभते क्वचित् ॥ ७ ॥

वास करता भया ॥ १ ॥ नित्य आचारसे रहित परस्त्रीलंपट तथा महाशठ ऐसा वह गौ, हिरण्य, गजादिकका व्यापार किया करता था ॥ २ ॥ और तीन कोटी प्रमाणसे युक्त बहुतसे द्रव्यका संग्रह तिसने किया और दान तिसने मोहसे कुछभी न किया ॥ ३ ॥ तथा अपनी भार्याको त्याग परभार्यासे रत रहता भया और धनेश्वर तिसका नाम होता भया ॥ ४ ॥ ऐसे बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिसका मृत्यु हुआ तब उसको यमराजके दूतोंने बांधकर नरकरूपी समुद्रमें डाला ॥ ५ ॥ हे सुरश्रेष्ठ ! वह महाघोर नरकमें एक कल्पपर्यंत वास करता भया फिर भेडियाकी योनिमें प्राप्त हुआ तहांसे फिर बैलकी योनिको प्राप्त होता भया ॥ ६ ॥ फिर मनुष्ययोनिको प्राप्त हो मरनेवाले पुत्रोंको प्राप्त होता भया और महारोगोंसे युक्त होके कहींभी सुखको नहीं प्राप्त होता भया ॥ ७ ॥

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण दशलक्षजपं यदा ॥ ८ ॥
दशांशहवनं चैव तदा पापक्षयो भवेत् ॥
गोविन्दस्य सदा ध्यानं सदा गोविन्दकीर्तनम् ॥ ९ ॥
नित्यं प्रपूजयेद्देवं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥
पीताम्बरधरं श्यामं श्रीवत्सेन विराजितम् ॥ १० ॥
प्रत्यब्दं कार्तिके मासि तुलसीं विष्णुरूपिणीम् ॥
पूजयेद्दीपदानं च दद्याद्भार्यासमन्वितः ॥ ११ ॥
गोदानं शास्त्ररीत्या च गोदानाच्च वसुंधराम् ॥
यथाशक्ति च भो देवि ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥१२ ॥
एवं कृते न संदेहः पूर्वजन्मकृतं च यत् ॥
तत्पापं नाशमायाति सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥ १३ ॥

हे देवि ! हे वरानने ! इसकी शांतिको कहता हूं तू श्रवण कर गायत्रीके मूलमंत्रका दश लक्ष जप करावे ॥ ८ ॥ और दशांश हवनादि करावे तब पापक्षय होते हैं और सर्वकालमें गोविंदका ध्यान तथा गोविंदका कीर्तन करे ॥ ९ ॥ और शंख, चक्र, गदा, पद्म इनको धारण करनेवाले पीत वस्त्रोंको धारण करनेवाले श्याम-रूप छातीमें लक्ष्मीके चिह्नसे युक्त ऐसे विष्णुदेवका पूजन करे ॥ १० ॥ और वर्षवर्षके प्रति कार्तिकके महीनेमें विष्णुरूपवाली तुलसीजीका पूजन करे और भार्यासे युक्त होके दीपकका दान देवे ॥ ११ ॥ हे देवि ! शास्त्रकी रीतिसे गौका दान तथा भूमिका दान शिवजीके भक्त ब्राह्मणको यथाशक्ति देवे ॥ १२ ॥ ऐसे करनेसे पूर्वजन्मका पाप दूर होता है इसमें संशय नहीं और सब पाप नष्ट होवे तथा सर्व रोगोंका क्षय हो जाता है ॥ १३ ॥

वन्ध्या च प्रशमं याति पुत्रलाभो भवेद् ध्रुवम् ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं नात्र कार्या विचारणा ॥ १४ ॥
इति श्रीकर्मविपाक० पार्वतीहर० स्वातिनक्षत्रस्य द्वितीयचरण-
प्रायश्चित्तकथनं नामैकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

अथ द्विषष्टितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

कुरुक्षेत्रे महातीर्थे बल्लवो न्यवसत्प्रिये ॥
कृषिकर्मरतो नित्यं क्रयविक्रयतत्परः ॥ १ ॥
महिषीगोवृषाणां च संग्रहं चाकरोद्बहु ॥
तस्य भार्या वरारोहे परपुंसि रता सदा ॥ २ ॥
स्वपतिं तर्जयेन्नित्यं सदा निष्ठुरभाषणात् ॥
संग्रहो बहुद्रव्याणां न दानं दत्तवान् क्वचित् ॥ ३ ॥

और वन्ध्याभी शांतिको प्राप्त होके निश्चय पुत्रको प्राप्त होती है इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे प्राय-
श्चित्तकथन नामैकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! कुरुक्षेत्र महातीर्थपर बल्लव (गोप) वास करता भया और वह कृषिकर्ममें रत तथा नित्य प्रति पशुओंको बेचने लेनेमें तत्पर रहे था ॥ १ ॥ हे देवि ! हे वरारोहे ! वह महिषी गौ बैल इनको बहुत संग्रह किया करे था तिसकी भार्या परपुरुषमें रमण किया करे थी ॥ २ ॥ और नित्य अपने पतिको ताडना देती थी सदा कठोर वचन कहती थी और तिसके

एकस्मिन् दिवसे देवि चन्द्रपर्वणि शोभने ॥
दशसंख्यं च गोदानं कृतं क्षेत्रे तदा किल ॥ ४ ॥
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥
यमदूतेन भो देवि निक्षिप्तो नरके किल ॥ ५ ॥
त्रिंशद्वर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥
पुनर्माहिषयोन्यां च जातः खलु वरानने ॥ ६ ॥
नरयोनिं पुनर्लेभे धनधान्यसमन्वितः ॥
जातः खलु वरारोहे पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ७ ॥
रोगवान्नात्र संदेहो जङ्घापीडा ततोऽधिका ॥
अस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं च यथातथम् ॥८॥
षडंशं च ततो दानं विप्राय विदुषे तथा ॥
गायत्रीलक्षजाप्यं च ततो होमं प्रकल्पयेत् ॥ ९ ॥

द्रव्य बहुतही था परंतु किसी कालमेंभी तिसने दान करके नहीं दिया ॥ ३ ॥ हे देवि ! हे शोभने ! एक दिनके विषें चंद्रमाके ग्रहणमें तिसने महाक्षेत्रविषैं दश गौओंका दान किया ॥ ४ ॥ हे देवि ! बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिसका मृत्यु हुआ तब यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय निश्चय करि नरकमें डाला ॥ ५ ॥ हे वरानने ! तब तीस हजार वर्षोंतक नरकके दुःखोंको भोगकर फिर महिषीकी योनिको प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥ हे वरारोहे ! फिर तहांसे मनुष्ययोनिको प्राप्त धनधान्यसे युक्त होके पुत्र और कन्या करके रहित होता भया ॥ ७ ॥ रोगवाला है इसमें संदेह नहीं विशेष करके जंघाओंके विषैं पीडा रहती है अब इसकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर जैसे है तैसे ॥ ८ ॥ अपने घरके द्रव्यसे छठे भागको विद्वान् ब्राह्मणको देवे और एक लक्ष गायत्रीका जप करावे तथा दशांश हवन करावे ॥ ९ ॥

दशांशं तर्पणं कुर्यात्तद्दशांशं च मार्जनम् ॥
गामेकां कपिलां दद्यात् स्वर्णशृङ्गीं सहाम्बराम्॥१०॥
ब्राह्मणान्पञ्चपञ्चाशत् पक्वान्नेन च भोजयेत् ॥
पञ्च पात्राणि दद्याद्वै शय्यादानं यथाविधि ॥ ११ ॥
दशवर्णाः प्रदातव्या ब्राह्मणेभ्यो यथाविधि ॥
एवं कृते न संदेहः शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ १२ ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीशिवसंवादे स्वातिनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्राय० नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥

अथ त्रयष्षष्टितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

हस्तिनानगरं ख्यातमासीज्जन्तुमनोहरम् ॥
अवसन् तत्र भो देवि नराः सर्वे विचक्षणाः ॥ १ ॥

दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे और एक कपिला गौका दान देवे सुवर्णके शृंग और वस्त्रादिसे युक्त करके ॥ १० ॥ और पिचपन (५५) संख्यावाले ब्राह्मणोंको पक्वान्नसे तृप्त करे और यथाविधि शय्याका दान तथा पांच पात्रोंका दान देवे ॥ ११ ॥ और यथाविधि दश वर्णोंवाली गौओंका दान ब्राह्मणोंको देवे ऐसे करनेसे जल्दी पुत्रकी प्राप्ति होती है इसमें संदेह नहीं ॥ १२ ॥ और सर्व रोग नाशको प्राप्त होवें इसमें संशय नहीं ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० स्वातिनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! हास्तिनापुर नगर विख्यात है तहां

तन्मध्ये शूद्र एको हि धर्मात्मा ज्ञानवानपि ॥
स्वधर्मकर्मणी कृत्वा व्ययकर्ता दिने दिने ॥ २ ॥
तस्य पुत्रद्वयं जातं शठं पापयुतं सदा ॥
प्रत्यहं जीवघातेन मद्यवेश्यारतौ च तौ ॥ ३ ॥
द्यूतेनैव महादेवि रात्रावह्नि च जक्षतः ॥
न च वारयितुं शक्यौ शूद्रेणैतौ तदा शिवे ॥ ४ ॥
ततस्तु दैवयोगेन प्रयागे शूद्र आगतः ॥
मासमेकं ततः स्थित्वा तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ५ ॥
विष्णुदासात्तदा लब्ध्वा मृत्युलोके वरानने ॥
विमानवरमारूढो गतः स्वर्गे वरानने ॥ ६ ॥
तस्य भार्या विशालाक्षि मर्त्यलोके सुरेश्वरी ॥
सा जाता विधवा नारी किंचित्काले गते सति ॥७॥

मनोहर जंतु अर्थात् जीव वास करते हैं इसलिये मनोहर है और तहां सब मनुष्य विद्वान्ही हैं ॥ १ ॥ और तिनके मध्यमें धर्मात्मा ज्ञानवान् एक शूद्र वास कर रहा था और अपना धर्म कर्म करके दिन दिनके प्रति धनका खर्च किया करता था ॥ २ ॥ और तिसके शठ, पापमे युक्त दो पुत्र हुए वे प्रतिदिन जीवहिंसा तथा मदिरापान तथा वेश्यासंगमें रत थे ॥ ३ ॥ हे देवि ! द्यूत (जुवा) व्यवहारसेही रात्रि और दिनमे क्रीडा करते थे । हे शिवे ! तिन्हों-को निवारण करनेमे वह शूद्रभी नहीं समर्थ होता भया ॥ ४ ॥ तब दैवयोगसे वह शूद्र प्रयागमे आके प्राप्त हुआ तहां एक मास रहनेपर तिसका मृत्यु हुआ ॥ ५ ॥ वह मृत्युलोकमे विष्णुभक्तिको प्राप्त होके तहांसे श्रेष्ठ विमानोंमें बैठ स्वर्गमें प्राप्त होता भया॥६॥ हे विशालाक्षि ! हे सुरेश्वरि ! तिसकी भार्या सुंदर नेत्रोंवाली

परपुंसि रता जारे प्रत्यहं व्यभिचारिणी ॥
ततो बहुगते काले तस्या मृत्युरभूत्किल ॥ ८ ॥
यमदूतैर्महाघोरैर्निक्षिप्ता नरके तदा ॥
विंशत्यब्दसहस्राणि नरके संप्रपीडिता ॥ ९ ॥
शूद्रः पुण्यक्षये जाते मृत्युलोके सुरेश्वरि ॥
जन्म संप्राप्तवान्देवि मध्यदेशे सुरेश्वरि ॥ १० ॥
तदा सा तु भवेन्नारी या पुरा व्यभिचारिणी ॥
पूर्वजन्मप्रसङ्गाच्च वंशच्छेदो हि जायते ॥ ११ ॥
रोगश्च जायते देवि कष्टं चैव दिने दिने ॥
अस्य पापस्य वै शान्तिं तत्समासेन मे शृणु ॥१२॥
स्वर्णवृक्षवरं कृत्वा स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम् ॥
फलपुष्पसमायुक्तं पलपञ्चदशस्य तु ॥ १३ ॥

विधवापनको प्राप्त होती भई सो कितेक दिन व्यतीत होनेके बाद ॥ ७ ॥ फिर वह स्त्री जारकर्ममें रत परपुरुषोंसे व्यभिचार करती भई ऐसे बहुतसा काल पाके तिसकीभी मृत्यु हुई ॥ ८ ॥ तब यमराजके दूतोंने वहभी घोर नरकमें डाली २० हजार वर्षपर्यंत नरकमें पीडाको प्राप्त हुई ॥ ९ ॥ हे देवि ! हे सुरेश्वरि ! पुण्य क्षीण होनेसे मृत्युलोकमें शूद्र जन्मा ॥ १० ॥ और जो पहिले व्यभिचारिणी थी वही तिसकी पूर्वजन्मके प्रसंगसे पत्नी भई और संतानसे हीन होते भये ॥ ११ ॥ हे देवि ! दिन दिनके प्रति शरीरमें कष्ट तथा रोगकी प्राप्ति हो अब इस पापकी शांतिको संक्षेपसे कहते हैं तू श्रवण कर ॥ १२ ॥ पांच पल प्रमाणवाला सुवर्णका उत्तम वृक्ष बनवावे अंगूठेके प्रमाण और फल तथा पुष्पोंसे युक्त

तस्य वृक्षस्य वै मूले शालिग्रामशिलां शुभाम् ॥
पूजयित्वा विधानेन विष्णुरूपं वरानने ॥ १४ ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्गां च दद्यात्पयस्विनीम् ॥
गायत्रीमन्त्रजाप्यं तु लक्षमेकं तु कारयेत् ॥ १५ ॥
ततः पापविशुद्धिः स्यात् पुत्रो भवति नान्यथा ॥
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मवि० पार्वतीहर० स्वातीनक्षत्रस्य चतुर्थचरण-प्रायश्चित्तकथनं नाम त्रयष्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

अथ चतुःषष्टितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

कपिले नगरे देवि क्षत्री वै न्यवसत्पुरा ॥
क्षत्रधर्मविहीनश्च वैश्यकर्मरतः सदा ॥ १ ॥

करे ॥ १३ ॥ हे वरानने ! तिस वृक्षके मूलमें शुभ विष्णुरूप शालिग्रामकी मूर्तिका विधानसे पूजन करके ॥ १४ ॥ ब्राह्मणको देवे तथा दूधवाली गौका दान देवे और गायत्रीमंत्रका एक लक्ष जप करावे ॥ १५ ॥ तब पापसे शुद्ध होके पुत्रकी संतानको प्राप्त होवे अन्यथा नहीं होवे और सर्व रोग दूर होवें काकवन्ध्यास्त्री पुत्रको प्राप्त होवे ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां स्वातीनक्ष०चतुर्थचरण० नाम त्रयष्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! पहिले कपिल नामवाले नगरमें एक क्षत्री वास करता भया वह क्षत्रीके धर्मोंसे रहित और सब कालमें

प्रत्यहं वैश्यवृत्त्या तु व्ययं कुर्यादिने दिने ॥
बहुद्रव्यं तदा तेन संचितं त्यक्तधर्मणा ॥२॥
महालोभेन संयुक्तो धर्मचर्चा न कुत्रचित् ॥
पत्नी पुत्राय भोगार्थं नादात्कृपणकेसरी ॥ ३ ॥
एवं बहुतिथे काले मरणं सर्पतस्तदा ॥ ४ ॥
आसीत्तदीयप्रमदा तादृक् यतो जनो योग्यमु-
पैति सर्वम् ॥ यथार्थतः क्षिप्तमतीव दुःखे
यमस्य दूतैः कृतपादशृङ्खलः ॥ ५ ॥
युगमेकं वरारोहे कष्टं भुक्त्वा सुदारुणम् ॥
ततोऽभूत्स ततो देवि महिषी वृषभो हयः ॥ ६ ॥
पुनश्च मानुषो भूत्वा तस्य भार्या च या पुरा ॥
विवाहिता च सा देवि तस्यां पुत्रो न जायते ॥ ७ ॥

वैश्यके धर्मोंमें रत रहता भया ॥ १ ॥ वैश्यकर्मसे दिन दिन प्रति व्यापार करके तथा अपना धर्म त्यागके तिसने बहुतसा द्रव्य इकट्ठा किया ॥ २ ॥ और महालोभसे युक्त होके कभीभी धर्मकी चर्चा न करी और अपनी स्त्री वा पुत्रकोभी भोगनेके वास्ते कुछ न देता भया ऐसा कृपणसिंह था ॥३॥ ऐसे बहुतसा काल व्यतीत होनेपर सर्पसे तिसका मृत्यु हुआ ॥४॥ और तिसकी स्त्रीभी वैसीही होती भई क्योंकि जो जिस धर्ममें युक्त हो तिसको सब वैसाही होता है वह यमराजके दूतोंने पैरोंमें शृंखला अर्थात् शांकल डालके महाघोर नरकमें डाला ॥ ५ ॥ हे वरारोहे ! हे देवि ! एक युग संख्यावाले वर्षोंतक नरकके दुःखोंको भोग फिर महिषीकी योनिको प्राप्त हुआ फिर बैलकी योनिको प्राप्त होके तहांसे घोडेकी योनिको प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥ हे देवि ! फिर मनुष्ययोनिको प्राप्त

पुरा ह्येका ऽभवत्कन्या पुनः सूतिविवर्जिता ॥
रोगो भवति देहे च मध्ये मध्ये ज्वरो भवेत् ॥ ८ ॥
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ॥
कल्पवृक्षवरं कुर्यात् स्वाङ्गुष्ठपरिमाणकम् ॥ ९ ॥
सुवर्णस्य महादेवि पलपञ्चदशस्य तु ॥
वेदीं रौप्यमयीं कुर्यात् पलपञ्चदशस्य तु ॥ १० ॥
तत्र वृक्षं समारोप्य फलपुष्पेण संयुतम् ॥
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां च सुरेश्वरि ॥ ११ ॥
तस्य वृक्षस्य वै मूले वृक्षकेतुं सुरेश्वरि ॥
सगणं देवमीशानमर्चयित्वा यथाविधि ॥ १२ ॥
यथाशक्ति वरारोहे गन्धधूपादिभिस्तथा ॥
साष्टाङ्गं दण्डवत्तत्र देवदेवं समापयेत् ॥ १३ ॥

होके जो पहिले भार्या थी वही फिर विवाहको प्राप्त होनेमें पुत्रकी संतान न भई ॥ ७ ॥ पहिले कन्याकी संतान होने पश्चात् गर्भ न रहा और देहमें रोग तथा मध्य मध्यमें ज्वरकी पीडा होती है ॥ ८ ॥ हे देवि ! हे वरानने ! इसकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर । एक अंगुष्ठके परिमाणवाला कल्पवृक्ष बनवावे ॥९॥ हे महादेवि ! पंद्रह पल संख्यापरिमाणवाले सुवर्णका कल्पवृक्ष बनवाना और पंद्रह पल संख्यापरिमाणवाली चांदीकी वेदी बनवावे ॥१०॥ और हे सुरेश्वरि ! तहां फलपुष्पसे युक्त उस वृक्षको स्थापन कर अष्टमी तथा चतुर्दशी तथा नवमीके दिन ॥ ११ ॥ हे सुरेश्वरि ! तिस वृक्षके मूलमें यथाविधि गणोंकरके सहित महादेवकी पूजा करके ॥ १२ ॥ हे वरारोहे ! यथाशक्ति गंध धूपादिकसे पूजन करे

मन्त्रेणानेन भो देवि विसर्जनमथाचरेत् ॥
ॐ नमः शिवाय देवाय शिवायै सततं नमः ॥१४॥
मम पूर्वकृतं पापं जन्मजन्मसमुद्भवम् ॥
तत्सर्वं क्षम्यतां देव देव्या सह महेश्वर ॥ १५ ॥
ततो वै पूजयेद्विप्रं वेदब्रह्मस्वरूपिणम् ॥
पट्टवस्त्राद्यलंकारैर्विविधैर्मोदकैरपि ॥ १६ ॥
ततो वृक्षं च वेदीं च कपिलां गां सवत्सकाम् ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्यात् पूर्वपापविशुद्धये ॥ १७ ॥
भक्त्या मम महादेवि शिवरात्र्यां विशेषतः ॥
आजन्ममरणाद्देवि व्रतं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ १८ ॥
एवं कृते महादेवि शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति वन्ध्या च लभते सुतम् ॥१९॥

और देवदेवको साष्टांग दंडवत् कर समाप्त करे॥१३॥ और हे देवि ! " ॐ नमः शिवाय देवाय शिवायै सततं नमः " इस मंत्र करके पार्वती और महादेवका विसर्जन करे ॥ १४ ॥ हे देव ! हे महेश्वर ! देवीकरके सहित तू मेरे जन्म जन्मोंके किये हुए पापोंको शांत कर ॥ १५ ॥ फिर देवब्रह्मरूप विप्रका पट्ट वस्त्रादि अलंकारकरके तथा नाना प्रकारके मोदकोंकरके पूजन करे ॥ १६ ॥ फिर पूर्वपापकी शुद्धिके लिये वेदीकरके सहित वृक्ष और बछडेसे युक्त कपिला गौको ब्राह्मणको देवे ॥ १७ ॥ हे महादेवि ! भक्तिकरके शिवरात्रिके दिन विशेषतासे जन्मसे मरणपर्यंत यत्नसे व्रत करे ॥ १८ ॥ हे देवि ! ऐसे करनेसे जलदी पुत्रकी प्राप्ति होती है और सब रोग नाशको प्राप्त होते हैं और वन्ध्याभी पुत्रको प्राप्त

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ २० ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे विशाखानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्राय० नाम चतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

अथ पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

विष्णुकाञ्च्यां महादेवि ब्राह्मणो वेदपारगः ॥
अत्याचाररतः शान्तो विष्णुभक्तिपरायणः ॥ १ ॥
लाञ्छितो विष्णुचक्रेण विप्रो विद्याविवर्जितः ॥
न वेदः पाठ्यते तेन न विप्रः स्पृश्यते क्वचित् ॥ २ ॥
द्विजानां स्मार्तवृत्तीनां विद्वेषं च करोति सः ॥
शिवशक्तिरतानां च नाभिवादनमाचरेत् ॥ ३ ॥

होती है ॥ १९ ॥ मृतवत्साभी बहुत कालतक जीनेवाले पुत्रको प्राप्त होती है ॥ २० ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे विशाखानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

शिवजी कहते हैं-हे महादेवि ! विष्णुकांचीपुरीमें एक ब्राह्मण वेदके पार करनेवाला अति आचारमें रत शांतस्वभाव विष्णुकी भक्तिमें परायण होता भया ॥ १ ॥ और विष्णुचक्रसे चिह्नवाला अर्थात् चक्रांकित था सो वह ब्राह्मण विद्यासे रहित वेदको नहीं पढनेवाला न ब्राह्मणपनेकोभी स्पर्श करनेवाला ॥ २ ॥ ऐसा था स्मार्तवृत्तिवाले ब्राह्मणोंका वैरभाव करता भया और शिवकी भक्तिमें

एवं वयो गते देवि वृद्धे जाते वरानने ॥
मरणं तस्य वै जातं ब्राह्मणस्य वरानने ॥४॥
यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितस्तदा ॥
रौरवे च तदा देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ५ ॥
भुक्त्वा नरककष्टं च पुनर्जातः सरीसृपः ॥
मानुषत्वं पुनर्जातः कष्टानि विविधानि च ॥ ६ ॥
पुत्रस्य मरणं कान्ते प्रतिवर्षं महाव्यथा ॥
पुनः स्त्री काकवन्ध्या स्यात्पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ॥ ७ ॥
धनधान्यसमायुक्तोऽप्येवं दुःखं महद्भवेत् ॥
अथ वक्ष्ये महादेवि पूर्वपापस्य निष्कृतिम् ॥ ८ ॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये ॥
निष्कत्रयसुवर्णस्य कमलं निर्मितं शुभम् ॥ ९ ॥

जो रत थे तिन्होंको नमस्कारभी नहीं करता भया ॥ ३ ॥ हे देवि ! हे वरानने ! ऐसे अवस्था व्यतीत होनेपर तिसका मृत्यु हुआ ॥४॥ और वह यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय साठ हजार वर्षोंकी संख्या-वाले महाघोर नरकमें तथा रौरवसंज्ञक नरकमें डाला ॥ ५ ॥ तब वह नरकके दुःखोंको भोग विच्छूकी योनिको प्राप्त हुआ फिर अनेक कष्टोंसहित मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥ हे कांते ! प्रतिवर्ष पुत्रका मरण और महादुःखको प्राप्त होता भया और तिसकी स्त्री पूर्वजन्मके प्रसंगसे काकवन्ध्या होती भई ॥ ७ ॥ और धनधा-न्यसे युक्त होकेभी दुःखोंको प्राप्त होता भया । अब हे देवि ! पूर्व-पापकी शुद्धिको कहते हैं तू श्रवण कर ॥ ८ ॥ हे देवि ! पूर्व पापकी शुद्धिके अर्थ तीन निष्कप्रमाणवाले सुवर्णका कमल बनाके

दद्याद्वेदविदे देवि ब्राह्मणाय शुभार्थिने ॥
अष्टांशं विभवं देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १० ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां दशायुतजपं तथा ॥
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥ ११ ॥
एवं कृते भवेद्देवि पूर्वपापविशुद्धता ॥
पुत्रं चैव लभेद्देवि चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १२ ॥
व्याधयः प्रशमं यान्ति ज्वराः सर्वे तथाविधाः ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १३ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० विशाखानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥

दान कर ब्राह्मणको देवे ॥ ९ ॥ और हे देवि ! शुभार्थी ब्राह्मणके वास्ते अपने घरके द्रव्यसे आठवां भाग दान करके देवे ॥ १० ॥ और गायत्री तथा जातवेदमंत्रका दश हजार जप करावे और पेठे वा नारियलको पंचरत्नसे युक्त कर गंगाके मध्यमें दान करे ॥ ११ ॥ हे देवि ! ऐसे करनेसे पूर्वपापकी शुद्धि होती है और बहुत कालतक जीनेवाले पुत्रकी संतानको प्राप्त होवे ॥ १२ ॥ और सब व्याधियोंका नाश तथा सब ज्वरोंका क्षय और काकवन्ध्याको बहुत कालतक जीवनेवाले पुत्रकी प्राप्ति होती है ॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां विशाखानक्ष० द्वितीयच० नाम पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥

अथ षट्षष्टितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

विदर्भनगरे देवि क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा ॥
तेजशर्मेति विख्यातो द्विजानां वृत्तिहारकः ॥ १ ॥
प्रजानां दुःखदो नित्यं वेदानां चैव निन्दकः ॥
तस्य त्रासवशात्सर्वा प्रजा ग्रामात्पलायिता ॥ २ ॥
एवं बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥
यमदूतैर्महाघोरैर्निक्षिप्तो नरके ततः ॥ ३ ॥
द्विसप्ततिसहस्राणि घोरे नरककर्दमे ॥
भुक्तं नरककष्टं च सूचीमुखसमुद्भवम् ॥ ४ ॥
नरकान्निर्गतो देवि गर्दभत्वं ततोऽगमत् ॥
रासभत्वात्ततो देवि मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! पहिले विदर्भनाम पुरमें एक क्षत्री वास करता भया सो तेजशर्मा नामसे प्रसिद्ध ब्राह्मणोंकी जीविकाको हरनेवाला था ॥ १ ॥ और प्रजाको नित्य दुःख देनेवाला तथा वेदोंकी निन्दा करनेवाला होता भया तिसके त्राससे सब प्रजा दुःखी होके ग्राममे भाग गई ॥ २ ॥ ऐसे बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिसका मृत्यु हुआ पीछे वह यमराजके दूतोंने घोर नरकमें डाला ॥ ३ ॥ हे देवि ! वह बहत्तर हजार वर्षोंतक घोर नरकमें रहा तहां सूचीमुख नरकमे उत्पन्न हुए कष्टको भोगके ॥ ४ ॥ नरकसे निकस गर्दभकी योनिको प्राप्त हुआ और तहांसे फिर मनुष्ययोनिको प्राप्त

तस्य भार्याभवद्वन्ध्या पूर्वजन्मफलाच्छिवे ॥
तस्माद्गात्रे भवेद्रोगो दद्रुरर्शादयस्तथा ॥ ६ ॥
न सुखं लभते देवि चिन्तया व्याकुलेन्द्रियः ॥
शृणु सर्वं वरारोहे पूर्वपापस्य निग्रहे ॥ ७ ॥
दशांशं विभवं देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥
वापीकूपतडागादि पथि मध्ये च कारयेत् ॥ ८ ॥
गृहदानं ततो देवि सर्ववस्तुसमन्वितम् ॥
प्रदद्याद्वेदविदुषे ब्राह्मणाय वराय च ॥ ९ ॥
आकृष्णेति जपं देवि लक्षमेकं च कारयेत् ॥
होमं कुर्याददिसुते तिलाज्यमधुतण्डुलैः ॥ १० ॥
ततो गां कपिलां देवि ब्राह्मणाय प्रपूजिताम् ॥
प्रदद्याद्विधिवच्चैव सर्वालंकारभूषिताम् ॥ ११ ॥

हुआ॥५॥ और तिसकी भार्या पहिले जन्मके प्रसंगसे वंध्या होती भई तथा तिसके गात्रमें रोग दद्रु, अर्श (बवासीर) इत्यादि पीडा होती भई ॥६॥ हे देवि ! हे वरारोहे ! वह चितासे व्याकुल होके कुछभी सुखको नहीं प्राप्त होता भया अब तिस पापकी शांति कहता हूं तू श्रवण कर ॥७॥ हे देवि ! अपने घरके द्रव्यसे दशांश ब्राह्मणको देवे और रास्ताके मध्यमें बावडी, कूप,तालाव इत्यादि करवावे ॥८॥ हे देवि ! सब वस्तुसे युक्त घरका दान वेदके पढे हुए ब्राह्मणको देवे ॥९॥ हे देवि ! हे अद्रिसुते ! आकृष्णे० इस मंत्रका एक लक्ष जप करवावे । तिल, घृत, तंदुल इन्होंकरके होम करवावे ॥१०॥ हे देवि ! फिर ब्राह्मणके अर्थ पूजन करके तथा विधिपूर्वक वस्त्रादि अलंकारसे युक्त करके कपिला गौका दान देवे ॥ ११ ॥

सुवर्णनिष्कमात्रं तु ब्राह्मणाय ततो ददेत् ॥
एवं कृते वरारोहे रोगनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥ १२ ॥
पुत्रश्च जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं नात्र कार्या विचारणा ॥ १३ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे विशाखानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्राय० नाम षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥६६॥

अथ सप्तषष्टितमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

मायापुर्यां महादेवि क्षत्री ह्येकोऽवसत्पुरा ॥
स शूरश्च धनी मानी देवतातिथिपूजकः ॥ १ ॥
तस्य भार्या विशालाक्षी शतानाम्नी वराङ्गना ॥
ब्राह्मणातिथिदेवानां पूजने चातितत्परा ॥ २ ॥

और हे वरारोहे ! निष्कमात्र प्रमाणवाला सुवर्णका दान ब्राह्मणको देवे ऐसे करनेसे निश्चय रोगका नाश होता है ॥ १२ ॥ और हे देवि ! पुत्रकी संतान होती है वंध्यापना दूर होता है काकवन्ध्याभी पुत्रको प्राप्त होती है इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे विशाखा० प्रायश्चित्तकथनं नाम षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! मायापुरीमें पहिले एक क्षत्री बसता भया वह शूर वीर तथा धनसे युक्त बडाईवाला देवता और अभ्यागतका पूजन करनेवाला होता भया ॥ १ ॥ और तिसकी भार्या सुंदर नेत्रोंवाली शतानामसे विख्यात श्रेष्ठ अंगवाली ब्राह्मण,

एकस्मिन् समये देवि हेमकारः समागतः ॥
धनाढ्यः स्वर्णसंयुक्तो गृहे तस्यावसत्स च ॥ ३ ॥
क्षत्रियाय स्वमित्राय शतं स्वर्णस्य वै पलम् ॥
प्रदत्तं हेमकारेण चान्यत्स्वर्णं समर्पितम् ॥ ४ ॥
अत्रान्तरे महादेवि स्वर्णकारस्ततो मृतः ॥
दष्टः सर्पेण तीव्रेण पुत्रहीनः सुवर्णकृत् ॥५॥
स्वर्णं सर्वं गृहीत्वा तु प्रभुक्तं क्षत्रियेण तत् ॥
पुत्रदारयुते जाते न दत्तं तद्द्विजाय च ॥ ६ ॥
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥
क्षत्रियस्य महादेवि सुरलोकस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥
सौख्यं सुराङ्गनासार्द्धं षष्टिवर्षप्रमाणकम् ॥
ततः पुण्यक्षये जाते बभूव मनुजः क्षितौ ॥ ८ ॥

अतिथि, देवता इन्होंके पूजनमें रत ऐसी होती भई ॥२॥ हे देवि ! एक समय तहां सुवर्णकार आके प्राप्त हुआ और वह धन तथा सुवर्णयुक्त होके तिस क्षत्रीके घरमें वास करता भया ॥ ३ ॥ उस स्वर्णकारको क्षत्री अपना मित्र करके तिसको सौ(१००)पल संख्यावाला सुवर्ण तथा अन्यभी सुवर्ण सारा दे दिया ॥ ४ ॥ हे देवि ! इतनेही अंतरमें वह स्वर्णकार तीव्र सर्पके डसनेसे मृत्युको प्राप्त हुआ और वह सुवर्णकार (सुनार) पुत्रादिसे हीन था ॥ ५ ॥ और वह सारा सुवर्ण क्षत्रीने भोगा । पुत्र दारासे युक्त हो सारे द्रव्यको भोगता भया और ब्राह्मणके अर्थ दान करके किंचित् मात्रभी नहीं देता भया ॥ ६ ॥ हे देवि ! तब बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिस क्षत्रीका मृत्यु होता भया और सुरलोकका वास तिसको भया ॥ ७ ॥ और तहां देवांगनाओंके साथ साठ हजार वर्षोंतक भोग-

धनधान्ययुतस्तस्य भूयो भार्याऽभवत् किल ॥
कन्यका चैव पुत्रौ च जातौ तस्यां वरानने ॥ ९ ॥
गर्भं च जायते देवि तद्गर्भपतनं भवेत् ॥
रोगमुग्रं भवेद्देवि न सुखं जायते खलु ॥ १० ॥
शान्तिं शृणु वरारोहे यतः पापक्षयो भवेत् ॥
षडंशं च ततो देवि ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ ११ ॥
दशवर्णा ततो दद्याद्विप्राय ज्ञानिने प्रिये ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ १२ ॥
पक्वान्नेनैव भो देवि ब्राह्मणान् भोजयेच्छतम् ॥
वृक्षं स्वर्णस्य वै देवि फलपुष्पसमन्वितम् ॥ १३ ॥
दद्याद्विप्राय विदुषे पलं दशप्रमाणकम् ॥
सूर्यस्य पूजनं चैव रविवारे विशेषतः ॥ १४ ॥

को भोग तहांसे पुण्य क्षीण होनेपर पृथ्वीपर मनुष्यशरीर जन्मा ॥ ८ ॥ और हे वरानने ! धनधान्यसे युक्त हुए तिसके फिर वही भार्या होती भई और तिन्होंके एक कन्या तथा दो पुत्र होते भये ॥ ९ ॥ हे देवि ! अन्य गर्भोंका पात होता है और बडा उग्र रोग तिसके हुआ सुखकी प्राप्ति किंचित्‌भी नहीं हुई ॥ १० ॥ हे वरारोहे ! तिसकी शांतिको तू श्रवण कर मैं कहता हूं जैसे पाप शांत होवे अपने घरके द्रव्यसे छठा भाग पुण्य कर ब्राह्मणको देवे ॥ ११ ॥ हे प्रिये ! दश वर्णोंवाली गौओंका दान ज्ञानवान् ब्राह्मणको देवे और गायत्रीके मूल मंत्रका एक लक्ष जप करवावे ॥१२॥ और हे देवि ! पक्वान्नसे सौ (१००) संख्या प्रमाण ब्राह्मणोंको भोजन करवावे और सुवर्णका वृक्ष फल पुष्पोंसे युक्त कर ॥ १३ ॥ दश पल प्रमाणवाले सुवर्णसे युक्त कराके वेदके पढे हुए ब्राह्मणको

एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रश्च जायते ॥
ज्वरस्य वै भवेन्मुक्तिः काकवन्ध्या सुतं लभेत्॥१५॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १६ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० विशाखानक्षत्रस्य चतुर्थच-
रणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥६७॥

अथाष्टषष्टितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

कल्याणनगरे गौरि मायापुर्याः समीपतः ॥
वणिग्जनोऽवसत्तत्र धनाढ्यो धनगर्वितः ॥ १ ॥
क्रयकृत्सर्ववस्तूनां विक्रयं च सदाकरोत् ॥
महालोभवशाद्देवि न दत्तं पापिना क्वचित् ॥ २ ॥

दान करके देवे और विशेषकरके रविवारके दिन सूर्यकी पूजा करे ॥ १४ ॥ हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे शीघ्र पुत्र पैदा होता है और ज्वरसे छूट जाता है काकवन्ध्या स्त्रीभी पुत्रको प्राप्त होती है ॥ १५ ॥ और मृतवत्सामी बहुतकालकी आयुवाले पुत्रको पैदा करती है ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे विशाखा० नक्षत्रस्य चतुर्थ० प्रायश्चित्त० सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

शिवजी कहते हैं-हे गौरि ! कल्याण नामवाले नगरमें मायापुरीके समीप एक बनिया धनसे युक्त तथा धनसे गर्वित तहां वास करता भया ॥ १ ॥ हे देवि ! वस्तुओंका लेने देनेका व्यापार सदा करता भया महालोभके वशमें होके तिस पापीने कुछभी दान न

तस्य भार्या विशालाक्षी पुंश्चली कुलटाधमा ॥
यमौ पुत्रौ वरारोहे पुंश्चल्यां जज्ञिरे तदा ॥ ३ ॥
एको द्यूतरतः पुत्रो द्वितीयो ब्राह्मणीरतः ॥
वैश्येनैव विशालाक्षि धनं च बहु सञ्चितम् ॥ ४ ॥
प्रत्यहं भुज्यते छागविक्रयं कुरुते सदा ॥
वृद्धे सति महादेवि वैश्यस्य मरणं ह्यभूत् ॥ ५ ॥
यमदूतैस्तदा बद्धा निक्षिप्तो नरकार्णवे ॥
स्वरूपं दर्शयामास तस्मै वैश्याय सूर्यजः ॥ ६ ॥
नवत्यब्दसहस्राणि घोरे नरकदारुणे ॥
महाकष्टं तदा दत्तं कृमिभिर्घोररूपिभिः ॥ ७ ॥
ततो व्याघ्रस्य वै योनिं काककुक्कुटयोः पुनः ॥
मानुषत्वं ततो यातः पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ८ ॥

किया ॥ २ ॥ और तिसकी हे वरारोहे ! भार्या सुंदर नेत्रोंवाली तथा पुंश्चली (जारिणी) तथा कुलटा तथा अधमवृत्तिवाली थी सो दो (२) पुत्रोंको पैदा करती भई ॥ ३ ॥ हे विशालाक्षि ! तिस वैश्यने बहुतसा धन संचित किया था और तिसके दोनों पुत्रोंमेसे एक तो द्यूतकर्म अर्थात् जुवा खेलना और दूसरा ब्राह्मणीसे रत ऐसे होते भये ॥ ४ ॥ हे महादेवि ! दिन दिनके प्रति उस धनका भोग किया करते थे और बकरोंका क्रयविक्रयभी अर्थात् बेचाभी करते थे ऐसे वैश्यका वृद्ध होनेसे मृत्यु हुआ ॥ ५ ॥ तब सूर्यके पुत्र यमराजाने अपना रूप दिखाय दूतोंकरके शृंखलोंमे बांध नरकरूपी समुद्रमें डाला तहां घोर रूपवाले कृमि-योंके महादुःखोंको प्राप्त होना भया ॥ ६ ॥ ७ ॥ फिर तहांसे निकस भेडियाकी योनिको प्राप्त हुआ फिर काकयोनिको प्राप्त होके

पुनर्विवाहिता सा तु या पत्नी पूर्वजन्मनि ॥
रोगवान् सापि रोगार्ता मृतवत्सा पुनः पुनः ॥ ९ ॥
एकापत्या भवेद्दुष्टा न स्यादन्यसुतः प्रिये ॥
यदा सर्वस्वदानं वै सूर्यस्याऽऽराधनं तदा ॥ १० ॥
हरिवंशश्रुतेश्चैव दुर्गास्तोत्रजपस्तथा ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं यदा भवेत् ॥ ११ ॥
तदा पुत्रो भवेद्देवि व्याधिनाशो भवेत् ध्रुवम् ॥१२॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० अनुराधानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम अष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥६८॥

अथैकोनसप्ततितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

मगधे वै शुभे देशे काष्ठकारोऽवसत् प्रिये ॥
पुत्रपौत्रसमायुक्तो धनाढ्यो गुणवानपि ॥ १ ॥

मुरगेकी योनिको प्राप्त भया फिर मनुष्ययोनिको पाके पुत्र तथा कन्यासे रहित होता भया ॥८॥ जौनसी पूर्व जन्ममें स्त्री थी वही फिर विवाही। वहभी रोगयुक्त तथा स्त्रीभी रोगसे पीडित होके वारंवार मृतवत्सापनेको प्राप्त होती भई ॥९॥ हे प्रिये! तिसके एक दुष्ट कन्या पैदा होके फिर पुत्रादि नहीं हुए अब तिसकी शांति कहते हैं कि सूर्यका आराधन तथा सर्वस्वदान ॥१०॥ हरिवंशका श्रवण दुर्गास्तोत्रका जप तथा गायत्रीका लक्ष जप ॥११॥ इतने कर्म करनेसे पुत्रकी प्राप्ति होवे और निश्चय व्याधिका नाश होवे ॥१२॥

इति श्रीकर्मवि० पार्व० अनुरा० प्रथम० प्रायश्चि० नामाष्टषष्टितमोऽध्यायः ६८॥

शिवजी कहते हैं-हे प्रिये ! मगधदेशमें एक काष्ठकार पुत्रपौ-

यदा चार्द्धं वयो यातं दरिद्रत्वं तदाऽगमत् ॥
गृहीतं यतिनो द्रव्यं शतपञ्चपलं तथा ॥ २ ॥
व्ययं कृत्वा तदा तेन न दत्तं यतिने शिवे ॥
ततस्तस्य ह्यभून्मृत्युः काष्ठकारस्य मागधे ॥ ३ ॥
द्वे दत्त्वा कपिले गावौ स्वर्णरौप्यविभूषिते ॥
पुत्रेणापि कृतं श्राद्धं शास्त्ररीत्या गयादिकम् ॥ ४ ॥
यक्षलोकं तदा यातो वर्षं शतसहस्रकम् ॥
पुनः पुण्यक्षये जाते कपियोनिं ततोऽलभत् ॥ ५ ॥
ऋक्षस्यैव पुनर्योनिं मानुषत्वं ततोऽगमत् ॥
धनधान्यसमायुक्तो गुणज्ञोऽप्यतिसुन्दरः ॥ ६ ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि काष्ठच्छेदः कृतः सदा ॥
तेन पापेन भो देवि शरीरे महती व्यथा ॥ ७ ॥

आदिसे युक्त धनाढ्य बहु गुणवान् वास करता भया ॥ १ ॥ और वह जब आधी आयु व्यतीत हुई तब दरिद्रपनेको प्राप्त होता भया और तिसने सौ (१००) पल संख्या द्रव्य यतिका ग्रहण किया ॥ २ ॥ और हे शिवे ! सब द्रव्य खर्च करके यतिका द्रव्य न दिया फिर उस मगधदेशमेंही तिस काष्ठकारका मृत्यु होता भया ॥ ३ ॥ तब उसके पुत्रने शास्त्ररीतिसे श्राद्ध करके सुवर्ण तथा रूपेसे युक्त दो (२) कपिला गौओंका दान दिया और गयादिकर्म करवाया ॥ ४ ॥ तब वह काष्ठकार यक्षके लोकमें प्राप्त हुआ सो हजार वर्षपर्यंत वहां वासकर फिर पुण्य क्षीण होनेपर वानरकी योनिको प्राप्त होता भया ॥ ५ ॥ फिर ऋच्छकी योनिको प्राप्त होके मनुष्य-शरीरको प्राप्त हो धनधान्यसे युक्त गुणोंको जाननेवाला अति सुंदर-रूप ऐसा हुआ ॥ ६ ॥ हे देवि ! पहिले जन्ममें तिसने काष्ठच्छेदन

यतिद्रव्यं गृहीतं च न दत्तं यतिने यतः ॥
तेन जातः सुतो देवि ऋणसम्बन्धकारणात् ॥ ८ ॥
द्यूतवेश्यारतो नित्यं पितृमात्रोर्विरोधकृत् ॥
युवरूपो यदा जातस्तदा मृत्युर्भवेद् ध्रुवम् ॥ ९ ॥
पुनः पुत्रस्य संदेहः काकवन्ध्यत्वमाप्नुयात् ॥
पत्नी तस्य वरारोहे मृतवत्सा पुनः पुनः ॥ १० ॥
अस्य शांतिमहं वक्ष्ये शृणु देवि प्रयत्नतः ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ११ ॥
सूर्यमन्त्रस्य वै जाप्यं वैदिकस्य वरानने ॥
आकृष्णेति महामन्त्रः सर्वव्याधिविनाशनः ॥ १२ ॥
सर्वकामप्रदो देवि मोक्षदो मुक्तिकारणम् ॥
सूर्यदेवस्य यो भक्तिं कुरुते नियतो नरः ॥ १३ ॥

किया तिस पापसे हे देवि ! तिसके शरीरमें बडी व्यथा हुई ॥७॥ और हे देवि ! यतिका द्रव्य ग्रहण करके फिर यतिको नहीं देनेसे तथा ऋणसंबंधके कारणसे वह यति पुत्र भया है ॥ ८ ॥ जूवा तथा वेश्यासंगमें रत माता पितासे विरोध करनेवाला होके जिस समय युवा हुआ तिसी समय मृत्युको प्राप्त भया ॥ ९ ॥ फिर हे वरारोहे ! पुत्रके संदेहसे युक्त होके काकवन्ध्यापनेको प्राप्त भई फिर वारंवार मृतवत्सापनेको प्राप्त होती भई ॥ १०॥ हे देवि ! अब इस पापकी शांतिको कहते हैं तू यत्नसे श्रवण कर अपने घरके द्रव्यसे आठवां भाग पुण्य करके ब्राह्मणको देवे ॥ ११ ॥ और हे वरानने ! सूर्यके मंत्रका जप तथा वैदिकमंत्रका जप तथा सर्वव्याधिको नाश करनेवाला आकृष्णेति मंत्रका जप इत्यादि करे ॥ १२ ॥ हे देवि ! मोक्षके देनेवाला सर्व कामनाको देनेवाला मुक्तिका कारणरूप ऐसे मंत्रका जप करनेसे और नित्य प्रति सूर्य-

न किञ्चिद्दुर्लभं तस्य पुत्रश्चैव धनं बहु ॥
ममातीव प्रियो नित्यं सूर्य्यदेवे ह्युपासिते ॥ १४ ॥
मद्गणास्तं हि रक्षन्ति यतश्च मत्कला रविः ॥
कमलं सूज्ज्वलं देवि वंशपात्रं सुशोभनम् ॥ १५ ॥
तस्योपरि सुवर्णस्य सूर्य्यं रत्नविभूषितम् ॥
पलपञ्चमितं देवि मन्त्रेणानेन पूजयेत् ॥ १६ ॥
ॐ नमः सूर्याय देवाय भद्राय भद्ररूपिणे ॥
पूर्वजन्मकृतं सर्वं मम पापं व्यपोहतु ॥ १७ ॥
प्रतिमां पात्रसंयुक्तां ब्राह्मणाय च दापयेत् ॥
ततो गां कपिलां शुभ्रां सवत्सां स्वर्णभूषिताम् ॥ १८ ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्यात् पट्टवस्त्रेण संयुताम् ॥
सप्तमी रविसंयुक्तोपोष्टव्याङ्गनया सह ॥ १९ ॥

धान होके सूर्यदेवताकी भक्ति करनेसे ॥ १३ ॥ संसारमें ऐसी क्या वस्तु है जो नहीं मिल सके पुत्र द्रव्यादिकी तो क्या बात है और महादेव कहते हैं कि जो सूर्यदेवकी उपासना करते हैं वे मेरेको बडे प्रिय हैं ॥ १४ ॥ और हे देवि ! जो सूर्यकी उपासना करते हैं तिनकी मेरे गण रक्षा करते हैं क्योंकि सूर्यमें मेरी कला है । हे देवि ! उज्ज्वल कमल बनवाके तिसे बांसके सुंदर पात्रपर धरे ॥ १५ ॥ फिर हे देवि ! तिसके ऊपर पांच पल प्रमाणवाले सुवर्णकी सूर्यकी मूर्ति बनाय रत्नोंसे भूषित कर इस मंत्रकरके पूजन करे ॥१६॥ ' ॐ नमः सूर्याय देवाय भद्राय भद्ररूपिणे ' ऐसे उच्चारण करके यह कहे कि पूर्वजन्मकृत मेरे पापको नष्ट करो ॥ १७ ॥ और पत्रपुष्पादियुक्त तिस मूर्तिको ब्राह्मणके अर्थ दे देवे फिर कपिला शुद्धा सवत्सा गौको स्वर्णसे भूषित कर ब्राह्मणको देवे ॥ १८ ॥ और पट्ट वस्त्रादिसे युक्त की हुई गौका संक-

पूर्वजन्मकृतं पापं नश्यत्येवं कृते प्रिये ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति पुत्रलाभो भवेद् ध्रुवम्॥२०॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥ २१ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे अनुराधानक्षत्रस्य
द्वितीयचरणप्राय० नामैकोनसप्ततितमोऽध्यायः॥६९॥

अथ सप्ततितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥
सुकर्मनगरं ख्यातं सौराष्ट्रविषये शुभे ॥
तत्रातिष्ठत्खलो विप्रो ब्रह्मकर्मविवर्जितः ॥ १ ॥
विक्रेता सर्ववस्तूनां गोवाजिकरिणां तथा ॥
राजमृत्युं समालोक्य ग्रामदाहस्तथा कृतः ॥ २ ॥

रूप करके रविवारसे युक्त सप्तमी तिथिके दिन स्त्रीसहित उपवास करके ब्राह्मणको देवे ॥ १९ ॥ हे प्रिये ! ऐसे करनेसे सर्व रोग क्षय होवें और निश्चय पुत्रका लाभ होवे ॥ २० ॥ काकवन्ध्या स्त्री तथा मृतवत्सा स्त्री पुत्रको प्राप्त होती है ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० अनुराधानक्षत्रस्य द्वितीयच० प्रायश्चित्तकथनं नामैकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! सौराष्ट्रनाम शुभदेशविषें सुकर्मनामवाला विख्यात पुर होता भया तहां एक खल अर्थात् दुष्ट ब्रह्मकर्मसे रहित विप्र होता भया ॥ १ ॥ और वह सर्व वस्तुओंको बेंचा करता था तथा गौ अश्व अर्थात् घोडा करी अर्थात् हस्ती इन्होंकोभी बेंचा करता था वह राजाकी मृत्युको देखके ग्रामका दाह

ब्राह्मणा बहवस्तत्र ब्राह्मण्यश्च तथा शिवे ॥
मृता ग्रामस्य वै दाहे बह्वयो गावो मृताः खलु ॥३॥
ततो बहुतिथे काले मृतः सोऽपि द्विजाधमः ॥
ततस्तु यमदूतेन नरके घोरकर्दमे ॥ ४ ॥
यमाज्ञया च निक्षिप्तः कष्टं भुक्तं मुहुर्मुहुः ॥
नरकान्निर्गतो देवि गजयोनिं ततोऽलभत् ॥ ५ ॥
कच्छपत्वं ततो यातः काकयोनिस्ततोऽभवत् ॥
मानुषत्वं ततो यातः कुले महति शोभने ॥ ६ ॥
सर्वसंपत्तिसंयुक्तो वंशस्तस्य न जायते ॥
बहुकन्यासमायुक्तो रोगयुक्तो भवेन्नरः ॥७॥
भार्या तस्य ज्वरग्रस्ता मासे वर्षे भवेज्ज्वरः ॥
अतः शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः खलु सुखी भवेत्॥८॥

करता भया ॥ २ ॥ हे शिवे ! तहां बहुतसे ब्राह्मण और ब्राह्मणी तिस ग्राममें दाह होनेसे मरते भये और बहुतसी गौ मरती भई ॥ ३ ॥ फिर बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिस अधम ब्राह्मणकाभी मृत्यु हुआ फिर वह यमराजके दूतोंने घोर कर्दमनरकमें ॥ ४ ॥ यमकी आज्ञा पाय डाल दिया तहां वारंवार कष्टको भोग नरकसे निकस हस्तीकी योनिको प्राप्त होता भया ॥ ५ ॥ हे शोभने ! फिर कछुएकी योनिको प्राप्त हुआ तहांसे फिर काककी योनिको प्राप्त हुआ फिर उत्तम कुलमें मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया ॥ ६ ॥ और सब संपत्तिसे युक्त हो वंशसे हीन होता भया और बहुतसी कन्या तथा रोगसे युक्त हुआ ॥ ७ ॥ और तिसकी भार्या ज्वरसे पीडित महीनेमें वर्षमें ज्वरकी पीडाको प्राप्त होती है अब इस पापकी शांतिको कहते हैं जैसे निश्चय सुखकी प्राप्ति होवे

चतुर्भागं गृहद्रव्यं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥
प्रयागे मकरे मासि पत्न्या सह वरानने ॥ ९ ॥
स्नानं तु नियतः कुर्यात्सप्ताहं च ततः शिवे ॥
हेमदानं ततः कुर्य्याद्भूमिदानं च पार्वति ॥ १० ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण तदा जपम् ॥
दशायुतप्रमाणेन हवनं मार्जनं तथा ॥ ११ ॥
ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या पक्वान्नैः पायसेन च ॥
विप्रेभ्यो दक्षिणां दद्याद्वस्त्ररत्नविभूषिताम् ॥ १२ ॥
दशवर्णां ततो दद्याद्धरिवंशश्रुतिस्तथा ॥
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥ १३ ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं पुनर्देवि न संशयः ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति मृतवत्सा लभेत् सुतम् ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे अनुराधानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्राय० नाम सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

॥ ८ ॥ हे वरानने ! अपने घरके द्रव्यसे चौथा भाग ब्राह्मणको देवे और माघके महीनेमें प्रयागका स्नान स्त्रीसहित करे ॥ ९ ॥ और हे शिवे ! हे पार्वती ! सात दिनतक नियमसे तहां स्नान कर सुवर्ण तथा भूमिका दान करे ॥ १० ॥ और गायत्री तथा जातवेद और त्र्यंबकं० इन मंत्रोंका लक्ष जप करावे तथा तिससे दशांश हवन तथा दशांश तर्पण और मार्जन करावे ॥ ११ ॥ और भक्तिसे ब्राह्मणोंको खीर पकान्न भोजन कराय रत्न आभूषण वस्त्रादि दक्षिणा दान देवे ॥ १२ ॥ हे वरारोहे ! दशवर्णोंवाली गौओंका दान हरिवंशका श्रवण ये करनेसे जलदी पुत्रकी प्राप्ति होवे ॥ १३ ॥ हे देवि ! काकवन्ध्याभी फिर पुत्रको प्राप्त होवे इसमें

अथ एकसप्ततितमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

बन्दीजनोऽवसच्चैकः सौराष्ट्रविषये शुभे ॥
स कविर्भाग्यवान्देवि स्वधर्मनिरतः सदा ॥ १ ॥
तस्य स्त्री सुन्दरी देवि पतिसेवासु तत्परा ॥
एकस्मिन् दिवसे देवि ब्रह्मचारी समागतः ॥ २ ॥
आतिथ्यकरणे तस्य चासमर्थस्तदा शिवे ॥
उपोषणं कृतं तेन द्वारे बन्दिजनस्य च ॥ ३ ॥
प्रभाते स वरारोहे शापं दत्त्वा गतस्तु वै ॥
ततस्तु दैवयोगेन मार्जारी तत्र सूतिका ॥ ४ ॥

संशय नहीं और सब रोग क्षय होके मृतवत्साभी पुत्रको प्राप्त होवे ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीह० अनुराधान० तृतीयचरण-प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! सौराष्ट्रमें बंदीजन कवि भाग्यवान् था अपने धर्ममें रत वास करता भया ॥ १ ॥ हे देवि ! तिसकी सुन्दर स्त्री पतिसेवामें परायण होती भई । एक दिवसके विषे तहां एक ब्रह्मचारी आयके प्राप्त होता भया ॥२॥ हे शिवे ! तब वे तिस ब्रह्मचारीके आतिथ्य करनेमें असमर्थ होते भये फिर उस ब्रह्मचारीने तिस बन्दीजनके घरपर उपोषण किया ॥ ३॥ हे वरारोहे ! वहांसे प्रातःकाल उठ ब्रह्मचारी तिन्होंको शाप दे गमन करता भया और तहां एक मार्जारी अर्थात् बिलाई व्या रही थी ॥ ४ ॥

पञ्च पुत्रा वरारोहे घातितास्तस्य च स्त्रिया ॥
मार्जारी च तदा देवि क्षुधार्त्ता च तदा मृता ॥ ५ ॥
ततो बहुतिथे काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥
पत्नी पतिव्रता तस्य सती जाता च तत्क्षणात् ॥६॥
सत्यलोके वरारोहे युगमेकमुवास सः ॥
पत्न्या सह वरारोहे सौख्यं हि मानसेप्सितम् ॥ ७ ॥
भुक्तं देवाङ्गनासार्द्धं पुनः पुण्यक्षये सति ॥
मानुषत्वं ततो लेभे सह पत्न्या वरानने ॥ ८ ॥
धनधान्यसमायुक्तो वरा भार्या विवाहिता ॥
पुत्राश्च बहवो जातास्तेषां मृत्युरभूत्किल ॥ ९ ॥
सा ज्वरेण समाविग्ना मध्ये तापयुता पुनः ॥
तस्य पापस्य वै शांतिं शृणु त्वं गिरिजे वरे ॥१०॥

तिसके पांच (५) पुत्र थे। हे वरारोहे ! तिस बन्दीजनकी स्त्रीने वे बिलाईके पांच पुत्र मार दिये और हे देवि ! वह बिलाई भूंखसे पीडित हो मृत्युको प्राप्त होती भई ॥ ५ ॥ फिर बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिस बन्दीजनका मृत्यु हुआ और तिसकी स्त्री पतिव्रता तिसीके साथ सती होती भई ॥ ६ ॥ हे वरारोहे ! तब उन्होंको एक युगपर्यंत सत्यलोकमें वास होता भया और पत्नीके साथ तहां मनोवांछित सुखको भोग ॥ ७ ॥ और हे वरानने ! देवांगनाओंके साथ सुखको भोग फिर पुण्य क्षीण होनेपर स्त्रीकरके सहित मनुष्ययोनिको प्राप्त होते भये ॥ ८ ॥ और धनधान्यसे युक्त होके श्रेष्ठा भार्या विवाही और तिससे बहुतसे पुत्र हुए तिन्होंकी निश्चय मृत्यु होती भई ॥ ९॥ और हे गिरिजे ! हे वरे ! तिसकी स्त्री ज्वरसे संविग्न होती भई और मध्य मध्यमें तापसे

जातवेदस्य मन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥
बिडालीप्रतिमां कृत्वा पञ्चबालेन संयुताम् ॥ ११ ॥
स्वर्णस्याथ च रौप्यस्य पलपञ्चदशस्य तु ॥
सवस्त्रां वै तदा दद्याद्ब्राह्मणाय वरानने ॥ १२ ॥
गामेकां रक्तवर्णां च तां विप्राय प्रदापयेत् ॥
अमायां पिण्डदानं च सोमवारे तथा गुरौ ॥ १३ ॥
व्रतं च रविसप्तम्यां कुर्य्याद्वै भार्यया सह ॥
ततः पुत्रो भवेद्देवि चिरंजीवी तथोत्तमः ॥ १४ ॥
व्याधिनाशो भवेद्देवि वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति॥१५॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसं० अनुराधानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्राय० नामैकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥

युक्त होती भई अब तिस पापकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर ॥ १० ॥ जातवेदसे० इस मन्त्रका लक्ष जप और पांच पुत्रोंसे युक्त बिलाईकी मूर्ति ॥ ११ ॥ हे देवि! सुवर्ण तथा चांदीकी पंद्रह पल प्रमाणसे युक्त वस्त्रादिसे युक्त करवाके ब्राह्मणको देवे ॥ १२ ॥ और एक गौ लाल वर्णवाली ब्राह्मणको देवे तथा सोमवार और गुरुवारसे युक्त अमावास्याके दिन पिंडदान देवे ॥ १३॥ और हे देवि! आदित्यवारके दिन सप्तमीका व्रत करे ऐसे करनेसे बहुत काल जीनेवाला उत्तम पुत्र पैदा होता है ॥ १४॥ हे देवि! ऐसे व्याधिका नाश और बन्ध्यापनेकी शांति होती है ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० अनुराधा० चतुर्थच० प्रायश्चित्तकथनं नामैकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥

अथ द्विसप्ततितमोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

ब्राह्मणो न्यवसच्चैको महाराष्ट्रपुरे शुभे ॥
स वेदपाठतत्त्वज्ञो वेदपाठं सदाऽकरोत् ॥ १ ॥
तडागं खानयामास तत्र द्रव्यं च लब्धवान् ॥
द्रव्यस्यार्थे तदा देवि विग्रहो भ्रातरं प्रति ॥ २ ॥
भ्रात्रा तस्य महादेवि द्रव्यार्थं भक्षितं विषम् ॥
बहुकाले तदा देवि व्ययं सर्वं धनं कृतम् ॥ ३ ॥
ततश्च पञ्चतां यातो ब्राह्मणश्च सुरेश्वरि ॥
यमदूतैर्महाघोरैर्नरके देवि कर्दमे ॥ ४ ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि निक्षिप्तश्च यमाज्ञया ॥
भुक्त्वा नरकजं दुःखं काकयोनिरभूत्पुनः ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे शुभे ! महाराष्ट्रपुरके विषैं एक ब्राह्मण वेदपाठमें रत हुआ सदा वेदका पाठ करनेवाला वास करता भया ॥ १ ॥ हे देवि ! वह ब्राह्मण एक तालावको खुदवाता भया तहां खोदनेसे तिसको द्रव्यकी प्राप्ति होती भई और द्रव्यके वास्ते तिसके भाइयोंमें विग्रह अर्थात् लडाई होती भई ॥ २ ॥ हे देवि ! तिसका भ्राता द्रव्यके वास्ते विषको खाता भया फिर इसने बहुतसे कालमें वह सब द्रव्य व्यतीत कर दिया ॥ ३ ॥ हे सुरेश्वरि ! तब वह ब्राह्मण मर गया । हे देवि ! यमराजके दूतोंने वह घोर नरकमें डाला ॥ ४ ॥ और साठ हजार वर्षोंतक नरकमें यमकी आज्ञा पाय दुःखोंको भोग फिर काकयोनिको प्राप्त होता भया ॥ ५ ॥

पुनर्मानुषयोनिं च पुत्रकन्याविवर्जितः ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि भ्रात्रंशं नैव दत्तवान् ॥ ६ ॥
तेन पापेन भो देवि महारोगसमुद्भवः ॥
अस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं गिरिजे वरे ॥ ७ ॥
गृहवित्ताष्टमैर्भागैः पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
वापीकूपतडागादिजीर्णोद्धारं प्रयत्नतः ॥ ८ ॥
प्रतिमां कारयेद्देवि स्वर्णे पलदशस्य तु ॥
भ्रातुश्चित्रं तदा देवि पूजयित्वा यथाविधि ॥ ९ ॥
गन्धधूपादिभिर्देवि भूषणैर्विविधैरपि ॥
गायत्रीलक्षजाप्येन दशांशहवनेन तु ॥ १० ॥
प्रयागे मकरे स्नानं सर्वपापक्षयो भवेत् ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्गां च दद्यात्पयस्विनीम् ॥ ११ ॥

फिर हे देवि! मनुष्ययोनिको प्राप्त हो पुत्र और कन्यासे हीन होता भया क्योंकि पहिले जन्ममें भाईके अंशको नहीं देता भया ॥६॥ हे देवि! हे गिरिजे! जिस पापकरके महारोगसे युक्त रहा अब तिस पापकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर॥७॥अपने घरके द्रव्यसे आठवां भाग पुण्य करे और बावडी, कूप, तालाव इन फूटे टूटोंकी समरुवा देवे ॥ ८ ॥ हे देवि! दश पल प्रमाण सुवर्ण-की मूर्ति भाईकी बनवाय तिसका यथाविधि पूजन करे ॥ ९ ॥ हे देवि! गंधधूपादि भूषणोंसे तथा अनेक प्रकारसे पूजन कर ब्राह्मणको देवे और गायत्रीका एक लक्ष जप तथा दशांश हवनादि करावे ॥ १० ॥ और मकरमें प्रयागका स्नान इत्यादि करनेसे सब पाप दूर होते हैं और ब्राह्मणको दूधवाली गौका तथा तिस मूर्तिका

भूमिं वृत्तिकरीं दद्यात् पुत्रपौत्रानुयायिनीम् ॥
अश्वदानं ततो दद्यात् ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः॥१२॥
एवं कृते वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा ॥
व्याधिस्तस्य निवर्तेत काकवन्ध्या लभेत्सुतम्॥१३॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्राय० नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः ॥७२॥

अथ त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

पट्टने वै पुरे शुभ्रे लोहकारोऽवसत्पुरा ॥
गोवर्धनाभिधः पत्नीयुक्तोऽभूत्परमेश्वरि ॥ १ ॥

दान देवे ॥ ११ ॥ तथा जीविका करनेवाली पुत्रपौत्रादिककी जिवानेवाली पृथ्वीका दान देवे और घोडेका दान देवे ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ १२ ॥ हे वरारोहे! ऐसे करनेसे पुत्रकी संतान होती है यह अन्यथा नहीं है और व्याधि दूर होवे काकवंध्याभी पुत्रको प्राप्त होती है ॥ १३ ॥ और मृतवत्साभी बहुत आयुवाले उत्तम पुत्रको प्राप्त होती है ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्राय० नाम द्विसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७२ ॥

शिवजी कहते हैं-हे परमेश्वरि ! पट्टना नामवाला शुभ्रपुरमें एक लोहकार वास करता भया और गोवर्धन नामवाला तथा स्त्री-

धनधान्यसमायुक्तो धर्मकर्मरतस्तथा ॥
तस्य पुत्रद्वयं जातं लोहकारस्य पार्वति ॥ २ ॥
ज्येष्ठपुत्रश्च भो देवि भार्यया सह तेन वै ॥
निःसारितो गृहाद्देवि दत्तं तस्मै न किंचन ॥ ३ ॥
एको गृहे स्थितः पुत्रो द्रव्यं तस्मै प्रदत्तवान् ॥
लोहकारेण भो देवि स्वभार्या पुत्रसंयुता ॥ ४ ॥
त्यक्ता चैव महादेवि गोपालस्य तु कन्यका ॥
भार्या कृता पुनस्तेन पत्न्यास्त्यागश्च वै कृतः ॥५॥
ततो बहुगते काले लोहकारस्य वै शिवे ॥
व्याघ्रेण मरणं जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ६ ॥
निक्षिप्तो नरके घोरे कृमिविष्ठादिसंयुतः ॥
त्रिंशद्वर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ७ ॥

युक्त होता भया ॥ १ ॥ हे पार्वति ! धनधान्यसे युक्त अपने धर्मकर्ममें रत तथा तिसके दो (२) पुत्र उत्पन्न होते भये ॥ २ ॥ और हे देवि ! जेठे पुत्रको स्त्रीसहित वह लोहकार घरसे निकासता भया और तिसके कुछभी न दिया ॥ ३ ॥ हे देवि ! एक पुत्र घरमें स्थित जो था तिसको सब द्रव्य देता भया फिर तिस पीछे हे देवि ! लोहकारने एक पुत्रसहित अपनी भार्याकाभी त्याग कर दिया ॥ ४ ॥ हे महादेवि ! अपनी भार्याका त्याग करके एक गोपालकी कन्याको वह लोहकार अपनी भार्या करता भया ॥५॥ फिर हे देवि ! बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिस लोहकारका मृत्यु हुआ और वह यमराजके दूतोंने ॥ ६ ॥ आज्ञा पायके कृमिविष्ठादिसे युक्त घोर नरकमें डाला वहां तीस हजार वर्षपर्यंत नरककी

नरकान्निर्गतो देवि मानुषत्वं ततोऽलभत् ॥
पुनः सर्पस्य योनिं च ततो नकुलतां गतः ॥ ८ ॥
मानुषत्वं ततो देवि धनधान्यसमाकुलः ॥
शूरोऽभूत्किल विज्ञश्च ज्ञानवान् राजवल्लभः ॥ ९ ॥
पुरैव यत्कृतं सर्वं तत्प्राप्नोति न संशयः ॥
पुरैव कार्तिके मासि पौर्णमास्यां सदाशिवे ॥ १० ॥
धेनुः प्रदत्ता युवती विधिवन्मम वल्लभे ॥
तेन दानफलेनेह धनाढ्यत्वं प्रलब्धवान् ॥ ११ ॥
स्वभार्यां च परित्यज्य परकीयारतः स वै ॥
अतः पुत्रस्य वै मृत्युः पुनः पुत्रो न जायते ॥ १२॥
कन्यकाजनयित्री च तस्य भार्याभवत्खलु ॥
पुत्रस्त्रियोश्च कृतवान् त्यागं परकलत्रवान् ॥ १३ ॥

भोगके ॥ ७ ॥ फिर हे देवि ! नरकसे निकस मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया फिर सर्पकी योनिको प्राप्त होके नकुलयोनिको प्राप्त हुआ ॥ ८ ॥ फिर हे देवि ! धनधान्यसे युक्त मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया शूरवीर और सब वस्तुको जाननेवाला ज्ञानवान् राजाका प्यारा ऐसा हुआ ॥९॥ हे शिवे ! पहिले जो किया सब प्राप्त भया है कार्तिकके महीनेमें पूर्णिमाको जो किया था तिसके सर्व फलको प्राप्त होता भया ॥ १० ॥ हे मम वल्लभे ! पहिले युवा गौका दान इसने दिया तिसके फलसे धनाढ्यपनेको प्राप्त होता भया ॥ ११ ॥ और अपनी भार्याको त्याग परभार्यासे गमन किया था इससे पुत्र-की संतान नष्ट होके फिर पुत्र न भया ॥ १२ ॥ और तिसकी स्त्री कन्याको जन्म करनेवाली होती भई और पुत्रसहित भार्याका त्याग करके अन्यस्त्रीका ग्रहण किया था इससे ॥ १३ ॥

तत्पापेन महादेवि रोगग्रस्तकलेवरः ॥
व्याधयश्च समुत्पन्ना दद्रुपामादयस्तदा ॥ १४ ॥
ख्यातवंशे समुत्पन्नो भूमिभागो न लभ्यते ॥
अथ शांतिं प्रवक्ष्यामि पूर्वपापविशुद्धये ॥ १५ ॥
एकादशीव्रतं नित्यं षडंशं दानमाचरेत् ॥
षडङ्गं पाठयेन्नित्यं रुद्रपूजनपूर्वकम् ॥ १६ ॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्याच्चण्डीपाठं निरन्तरम् ॥
तिलधेनुप्रदानं वै ह्यमाश्राद्धं विशेषतः ॥ १७ ॥
एवं कृते महादेवि पुत्रस्तस्य भविष्यति ॥
वन्ध्यात्वं प्रशमं याति सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्राय० नाम त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥७३॥

हे महादेवि! रोगग्रस्त शरीर होता भया और व्याधिसे युक्त दद्रु पामादि रोगयुक्तही रहता भया ॥ १४ ॥ और ख्यातिवाले वंशमें पैदा होके भूमिके भागको नहीं प्राप्त हुआ अब तिसकी शांतिको पूर्वपापकी शुद्धिके लिये कहता हूं तू श्रवण कर ॥१५॥ नित्य एकादशीका व्रत करे अपने घरके द्रव्यसे छठा भाग दान करे षडंगका पाठ करावे रुद्रका पूजन करे ये सब करे ॥ १६ ॥ तथा हरिवंशका श्रवण, चंडीपाठ, निरंतर तिलधेनुका दान, अमावास्याको श्राद्ध येभी विशेषतासे करने योग्य हैं ॥ १७॥ हे महादेवि! ऐसे करनेसे तिसके पुत्र होगा और वंध्यापन तथा सर्व रोग दूर होवें ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० ज्येष्ठानक्ष० द्विती० यचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७३ ॥

अथ चतुःसततितमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

वीजापुरमिति ख्यातं पुरं देवि मनोहरम् ॥
न्यवसन् बहवो वर्णा ब्राह्मणाश्च वणिग्जनाः ॥ १ ॥
तन्मध्ये शूद्र एको हि ताम्बूलं च करोति सः ॥
सुरापी च स वै नित्यं ताम्बूलविक्रयी शिवे ॥ २ ॥
तस्य पुत्रद्वयं जातं धनं च बहु संचितम् ॥
ततस्तु दैवयोगेन महाधनमदेन च ॥ ३ ॥
ज्येष्ठपुत्रस्य हननं कृतं तेन वरानने ॥
स्वभार्यार्थं तदानीता पत्नी तस्य तु तेन हि ॥ ४ ॥
पुत्राभ्यां चाभवद्वैरं पत्न्या सह विशेषतः ॥
प्रत्यहं भजते सोऽपि पुत्रपत्नीं तथाऽधमः ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! वीजापुर नामवाले एक सुंदर पुरमें बहुतसे जन वास करते थे तहां ब्राह्मण और बनियेभी थे ॥ १ ॥ और हे शिवे ! तिन्होंके मध्यमें एक शूद्र दारूका पान करनेवाला तांबूलार्थ पानोंको बेचा करता था ॥२॥ और हे वरानने ! तिसके दो (२) पुत्र होते भये तिसने धनका बहुत संचय किया और महाधनसे मत्त होके ॥ ३ ॥ तिसने बडे पुत्रका हनन किया तिस पुत्रकी स्त्रीको अपनी भार्या करनेके लिये अपने घरमें लाता भया ॥४॥ और तिस शूद्रके पुत्रोंके साथ तथा तिसकी स्त्रीके साथ विशेषतासे वैर होता भया सो वह प्रथम पुत्रकी पत्नीको भोगता

एवं बहुदिने जाते तस्य मृत्युरभूच्छिवे ॥
ततो वै नरके घोरे यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ६ ॥
निक्षिप्तो वै ततो देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥
कृमिभिर्घोरवक्त्रैश्च भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ७ ॥
नरकान्निर्गतो देवि शुनो योनिं ततोऽलभत् ॥
ततो वृषभयोनिं च मानुषत्वं ततो गतः ॥ ८ ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि दशवर्णा ददौ बहु ॥
तत्फलेनेह भो देवि धनधान्ययुतस्तदा ॥ ९ ॥
पुत्रपत्न्यां च भोगार्थे पुत्रस्यैव वधः कृतः ॥
तत्पापफलतो देवि ह्यपुत्रश्च ज्वरी तथा ॥ १० ॥
व्याधिश्च बहुधा तस्य चांगे च महती तथा ॥
महाचिन्तां समापन्नो ह्यतः शान्तिं शृणु प्रिये ॥ ११ ॥

भया ॥ ५ ॥ हे शिवे ! ऐसे बहुतसे दिन व्यतीत होनेपर तिसका मृत्यु हुआ फिर वह यमराजके दूतोंने यमकी आज्ञा पाय घोर नरकमें डाला ॥ ६ ॥ फिर हे देवि ! साठ हजार वर्षोंतक नरकमें वह भयंकर मुखोंवाले कृमियोंसे काटा गया वह नरकके दुःखोंको भोग ॥ ७ ॥ तहांसे निकस श्वानयोनिको प्राप्त हुआ फिर बैलकी योनिको प्राप्त हो मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया ॥८॥ हे देवि! पहिले दशवर्णोंवाली गौओंका दान दिया तिस फलसे धनधान्यसे युक्त है ॥ ९ ॥ पुत्रपत्नीसे मैथुनके अर्थ पुत्रका वध करनेसे तिस पापके फलसे इसके पुत्र नहीं है और शरीरमें ज्वरकी प्राप्ति हुई ॥ १० ॥ हे शिवे ! तिसके बहुतसी व्याधि तथा अंगमें पीडा होके महाचिन्तासे युक्त होता भया अब तिसकी शांतिको कहते

स्ववित्तस्य तृतीयांशं प्रगृह्य हरवल्लभे ॥
कूपं च खनयेत्कान्ते तडागं जीर्णमुद्धरेत् ॥ १२ ॥
पौर्णमासीव्रतं देवि सकलत्रः समाचरेत् ॥
शिवस्य पूजनं लक्षं ब्राह्मणेभ्यश्च कारयेत् ॥ १३ ॥
कृष्णां च गां च वृषभं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण तथा लक्षप्रमाणतः ॥ १४ ॥
जपं वै कारयेत्तत्र हवनं तद्दशांशतः ॥
मार्जनं तर्पणं देवि दशांशं स च कारयेत् ॥ १५ ॥
पुत्रस्य प्रतिमां तद्वत्स्वर्णवस्त्रसमन्विताम् ॥
पलपञ्चदशस्यैव निर्मितां रत्नभूषिताम् ॥ १६ ॥
पूजां कृत्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥
एवं कृते न संदेहः शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥ १७ ॥

हैं तू श्रवण कर ॥११॥ और हे कांते ! हे हरवल्लभे ! अपने घरके द्रव्यसे तीसरा भाग लेके कूप बनवावे और पुराने तालावको समरुवा देवे ॥१२॥ हे देवि ! पौर्णिमाका व्रत स्त्रीकरके सहित करे और एक लक्ष वार शिवजीका पूजन ब्राह्मणोंसे करावे ॥ १३ ॥ और कृष्णा गौ तथा बैलका दान देवे और एक लक्ष गायत्रीमूलमंत्रका जप करावे ॥ १४ ॥ और हे देवि ! तिसका दशांश हवन तथा मार्जन तथा दशांश तर्पण करवावे ॥ १५ ॥ और पंद्रह पलप्रमाण सुवर्णकी एक पुत्रकी मूर्ति बनवाके वस्त्र तथा पंचरत्नसे युक्त कर ब्राह्मणको दान करके देवे ॥ १६ ॥ ऐसे विधानसे पूजा कर ब्राह्मणको देनेसे जलदी पुत्रकी प्राप्ति होवे इसमें संशय नहीं ॥ १७ ॥

व्याधिश्च प्रशमं यायात् काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १८ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे ज्येष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्राय० नाम चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥

अथ पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

चतुर्भुजाभिधे क्षेत्रे वेणीपश्चिमतः शिवे ॥
पट्टकारोऽवसद्देवि लक्ष्मणेति च संज्ञकः ॥ १ ॥
तस्य पत्नी विशालाक्षि परपुंसि रता सदा ॥
पुत्राश्च बहवो जाता धनं च बहु संचितम् ॥ २ ॥
क्रयविक्रयधर्मेण व्ययकारी दिने दिने ॥
तस्य गेहेऽकरोद्वासं चटका नाम पक्षिणी ॥ ३ ॥

और व्याधि सब दूर हो काकवन्ध्याभी पुत्रको प्राप्त होवे और मृतवत्साभी उत्तम बहुत काल जीनेवाले पुत्रको प्राप्त होवे ॥१८॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां ज्येष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥

शिवजी कहते हैं-हे शिवे ! वेणीनदीसे पश्चिमकी तरफ चतुर्भुज नामवाले क्षेत्रपर एक पट्टवस्त्र बनानेवाला लक्ष्मणनामसे विख्यात बास करता था ॥ १ ॥ हे विशालाक्षि ! तिसकी स्त्री सब कालमें परपुरुषोंसे रमण किया करती थी और तिसके बहुतसे पुत्र होते भये धनभी तिसने बहुत सञ्चित किया ॥ २ ॥ ऐसे लेने देनेके व्यापारसे दिन दिनके प्रति खर्च किया करता और तिसके घरमें

एकदा समये देवि चाण्डान्साऽसूत तत्र वै ॥
बहून्वै पोषितांश्चाण्डान्सपक्षान्कृतवांस्तथा ॥ ४ ॥
फलं गृह्य सदा पक्षी मध्याह्ने बालकान्प्रति ॥
भोजनं प्रददौ नित्यं स्वकुलाय तदा शिवे ॥ ५ ॥
ततस्तु दैवयोगेन पट्टकारस्तु तद्गृहे ॥
भोजनार्थं गतो देवि पत्नी चाऽन्नं तदाप्यदात् ॥६॥
भुक्तं च विविधं चान्नं तत्क्षणे पक्षिबालकाः ॥
विष्ठां चक्रुस्तथा दृष्ट्वा पट्टकारो रुषा खलु ॥ ७ ॥
कुलं तस्याकरोन्नष्टं बालानां हननेन सः ॥
एवं बहुगते काले पट्टकारस्य सुव्रते ॥ ८ ॥
गङ्गायां मरणं जातं भार्यया सहितस्य वै ॥
स्वर्गवासोऽभवद्देवि पट्टकारस्य सुव्रते ॥ ९ ॥

एक चिडिया वास करती थी ॥ ३ ॥ एक समयमें वह चिडिया पक्षिणी तहां बहुतसे अंडोंको पैदा करती भई तिनमें बहुतसे अंडोंको पालती भई वे पंखोंवाले होते भये ॥ ४ ॥ हे शिवे ! वह चिडिया पक्षी जहां तहांसे फलको ग्रहण कर तिन पक्षिबालकों- को मध्याह्न समयमें अपने कुल बढनेके वास्ते नित्य भोजन देती थी ॥ ५ ॥ हे देवि ! तहां दैवयोगसे पट्टवस्त्र बनानेवाला अपने घरमें भोजनके वास्ते आया और तिसकी भार्या अन्नको लाती भई ॥ ६ ॥ तब पट्टकारने अनेक प्रकारके भोजन किये उसी समय वे पक्षी उसपर बीट (विष्ठा) करते भये तब वह पट्टकार (पट बनानेवाला) तहां तिस विष्ठाकर्मको देख क्रोधसे ॥ ७ ॥ हे सुव्रते ! तिन्ह पक्षियोंके सब बालकोंको नष्ट करता भया ऐसा फिर बहुतसा काल व्यतीत होनेपर पट्टकार (पट बनानेवाले) का ॥ ८ ॥ गङ्गाजीपर मरण हुआ । भार्यासहित तब हे देवि ! हे

सप्ततिर्वै सहस्राणि स्वयं भुक्त्वा फलं बहु ॥
पुनः पुण्यक्षये जाते स्वर्गभ्रष्टो यदाभवत् ॥ १० ॥
मनुष्यश्चाऽभवद्देवि गङ्गागण्डकिमध्ययोः ॥
धनधान्यसमायुक्तो विवाहमकरोद्यदा ॥ ११ ॥
पूर्वजन्मस्थिता भार्या सा तस्य गृहमेधिनी ॥
प्रेष्ययुक्ताऽभवत्सा तु गर्भस्य पतनं मुहुः ॥ १२ ॥
कन्यका नैव जायंते पुत्रस्यैव तु का कथा ॥
ज्वरयुक्ता सदा नारी स्वशरीरेऽभवत्खलु ॥ १३ ॥
सुखं न लभते क्वापि दुःखं याति दिने दिने ॥
अस्य शान्ति प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वं वरानने ॥ १४ ॥
चन्द्रार्कयोर्मन्त्रजपं गायत्रीजपमाचरेत् ॥
लक्षमेकं वरारोहे पूर्वपापविशुद्धये ॥ १५ ॥

सुव्रते ! तिसको स्वर्गका वास हुआ और ॥ ९ ॥ सत्तर हजार वर्षोंतक स्वर्गको भोग पुण्य क्षीण होनेपर स्वर्गसे भ्रष्ट होता भया ॥ १० ॥ हे देवि ! पीछे गङ्गा और गण्डकीके मध्य धनधान्यसे युक्त मनुष्यजन्म हुआ फिर जब यह विवाह करता भया ॥ ११ ॥ तब पहिले जन्ममें जो स्त्री थी वह तिसकी भार्या होती भई तब वह गर्भसे युक्त होके तिसके गर्भका पतन होता भया ॥ १२ ॥ और तिसके कन्याभी नहीं पैदा हुई पुत्रकी तो क्या बात है और निश्चय तिसका शरीर ज्वरसे युक्त रहता भया ॥ १३ ॥ और हे वरानने ! कहींभी तिन्होंको सुखकी प्राप्ति न भई और दिन दिनके प्रति दुःखी होते भये अब तिसकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर ॥ १४ ॥ और चन्द्रमा सूर्यका जप तथा एक लक्ष गायत्रीका जप पूर्व

गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
कपिलां गां सवत्सां च ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ १६ ॥
दशवर्णास्ततो दद्याद्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥
चटकस्याकृतिं कृत्वा सार्भकस्य वरानने ॥ १७ ॥
रौप्यस्य ताम्रस्वर्णस्य पञ्चविंशपलस्य तु ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्याद्भूमिदानं विशेषतः ॥ १८ ॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्भार्यया सहितस्तु वै ॥
हवनं तर्पणं कुर्यान्मार्जनं तु ततः परम् ॥ १९ ॥
जातवेदेति मन्त्रेण दशायुतजपं तथा ॥
गोपालमन्त्रजपनात्पुत्रलाभो भवेद्ध्रुवु ॥ २० ॥
रोगनाशो भवेद्देवि काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥ २१ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० ज्येष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥

पापकी शुद्धिके लिये करे ॥ १५ ॥ और अपने घरके द्रव्यसे आठवां भाग पुण्य करे और बछडेसे युक्त कपिला गौ ब्राह्मणको देवे ॥ १६ ॥ हे वरानने ! दश वर्णोंवाली गौ दान देके ब्राह्मणोंको भोजन करावे और बालकोंकरके सहित चिडिया ॥ १७ ॥ रूपा, तांबा, स्वर्ण इनकी पच्चीस पल प्रमाण मूर्ति बनाके (संकल्प कर) ब्राह्मणको देवे और विशेषतासे भूमिका दान देवे ॥ १८ ॥ तथा हरिवंशका श्रवण भार्यासहित करे और हवन, तर्पण, मार्जन इत्यादि करावे ॥ १९ ॥ और जातवेद० मन्त्रका दश हजार जप वा गोपालमंत्रका जप करानेसे पुत्रकी प्राप्ति निश्चय होवे ॥ २० ॥ हे देवि ! रोगका नाश होवे काकवन्ध्याभी पुत्रको प्राप्त होवे॥२१॥
इति श्रीकर्मवि०पार्वती० ज्येष्ठान० चतुर्थ०नाम पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः॥७५॥

अथ षट्सप्ततितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यानगरे देवि कायस्थोऽवसदद्विजे ॥
रामदास इति ख्यातस्तस्य भार्या तु देविका ॥ १॥
विष्णुभक्तिरतो नित्यं ब्राह्मणस्य च सेवकः ॥
भार्या पतिव्रता तस्य पतिसेवासु तत्परा ॥ २ ॥
भाग्यवान् सर्ववस्तूनां विक्रेता गजवाजिनाम् ॥
तस्य सखाऽभवद्विप्रो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ ३ ॥
आगतो वै गृहे तस्य प्रेम्णा मित्रस्य भामिनि ॥
चातुर्मास्ये स्थितस्तत्र स्वर्णं शतपलं तदा ॥ ४ ॥
कायस्थस्य गृहे तत्तु स्थापितं ब्राह्मणेन वै ॥
वाराणस्यां गतो देवि स्नानार्थं स द्विजोत्तमः ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! हे पार्वति ! अयोध्यानगरीमें एक कायस्थ वास करता भया और रामदास नामसे विख्यात था देविका नामवाली तिसकी पत्नी होती भई ॥ १ ॥ वह नित्य विष्णुकी भक्तिमें रत, ब्राह्मणकी सेवामें रत था और तिसकी भार्या पतिव्रता पतिकी सेवामें तत्पर होती भई ॥ २ ॥ भाग्यवान् और सब वस्तुओंको तथा हस्ती घोडोंको बेचनेवाला था तिसके एक विप्र वेदको पार करनेवाला मित्र होता भया ॥ ३ ॥ हे भामिनि ! वह विप्र चातुर्मास्यमें प्रेमयुक्त होके तिस कायस्थके घरमें आके स्थित होता भया और सौ (१००) पल सुवर्ण अर्थात् चार सौ (४००) तोले सुवर्ण उसके पास था ॥ ४ ॥ तिस विप्रने वह धन कायस्थके घरमें स्थापित किया और हे देवि ! वह काशीजीमें स्नान कर-

शरीरं त्यक्तवाँस्तत्र ब्रह्मचारी द्विजस्तदा ॥
ततो बहुगते काले कायस्थस्य दरिद्रता ॥ ६ ॥
तद्धनं ब्राह्मणस्यैव भुक्तं तेन वरानने ॥
कालव्यालस्य कवलः कायस्थः कामिनीयुतः ॥७॥
अयोध्यायामभूद्देवि तयोः स्वर्गो ह्यजायत ॥
नवत्यब्दसहस्राणि ब्रह्मलोके वरानने ॥ ८ ॥
भुक्तं सौख्यमनेकं तु देवानामपि दुर्लभम् ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके सुरेश्वरि ॥ ९ ॥
तत्पापेनाऽभवद्देवि कन्यापुत्रप्ररोधनम् ॥
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु त्वं परमेश्वरि ॥ १०॥
प्रायश्चित्तं सुरश्रेष्ठे पूर्वजन्मसमुद्भवम् ॥
गृहवित्तषडंशेन ततो दानं प्रकल्पयेत् ॥ ११ ॥

नेके वास्ते गया ॥ ५ ॥ तहां वह ब्रह्मचारी शरीरको त्यागता भया तब बहुतसा काल व्यतीत होनेपर कायस्थ दरिद्री होता भया॥६॥ हे वरानने ! वह विप्रका धन कालरूपी सर्पका ग्रास तिस कायस्थने भोगा फिर वह कायस्थ कामिनीसे युक्त ॥ ७ ॥ हे वरानने ! अयोध्यामें मर गया तब उन दोनोंको स्वर्गवास हुआ फिर तहां नब्बे हजार वर्ष ब्रह्मलोकका वास तिन्होंको हुआ ॥ ८ ॥ तहां हे सुरेश्वरि ! देवतोंको दुर्लभ ऐसे भोगोंको भोग पुण्य क्षीण होनेपर मर्त्यलोकमें जन्मा ॥ ९ ॥ हे देवि ! तिस पापके प्रभावसे तिसके कन्या और पुत्रका अवरोध होता भया । हे परमेश्वरि ! अब तिस पापकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर ॥ १० ॥ हे सुरश्रेष्ठे ! पूर्वजन्ममें प्राप्त हुए पापके प्रायश्चित्तके लिये अपने घरके द्रव्यका

गायत्रीत्र्यम्बकाभ्यां च जातवेदेन चानघे ॥
जपं वै कारयेत्कान्ते प्रतिमन्त्रं दशायुतम् ॥ १२ ॥
ततो होमं दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥
पलैर्दशमितैर्हैमैर्ब्राह्मणस्य तदाकृतिम् ॥ १३ ॥
पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय ततो ददेत् ॥
ततो गां कपिलां दद्यात् स्वर्णवस्त्रविभूषिताम्॥१४॥
प्रतिवर्षं ततो देवि दशवर्णां ददेत्पुनः ॥
एवं कृते न संदेहो वंशे ह्यस्य भवेत्खलु ॥ १५ ॥
रोगः शरीरजन्यो यस्तस्य नाशः प्रजायते ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा ततः प्रिये ॥ १६ ॥
लभेत सुसुतं चैव नात्र कार्या विचारणा ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसं० मूलनक्षत्रस्य प्रथमचरण-
प्रायश्चित्तकथनं नाम षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥

छठा भाग दान करे ॥ ११ ॥ और हे अनघे ! गायत्री तथा त्र्यंबक० तथा जातवेद० इन मन्त्रोंका जप करावे प्रतिमन्त्रका एक एक लाख जप करावे ॥ १२ ॥ फिर दशांश हवन तथा दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे और दश पलकी सुवर्णकी मूर्ति तिस ब्राह्मणकी बनवावे ॥ १३ ॥ यथाविधि तिसका पूजन कर ब्राह्मणको देवे और तैसेही वस्त्रस्वर्णादिसे युक्त कर कपिला गौका दान देवे ॥१४॥ और हे देवि ! प्रतिवर्ष दशवर्णोंवाली गौका दान देवे ऐसे करनेसे वंशवृद्धि निश्चय होवे ॥१५॥ और शरीरजन्य रोगका नाश होवे काकवन्ध्या तथा मृतवत्सा येभी पुत्रको निश्चय प्राप्त होवे ॥१६॥ और शुद्ध पुत्रको प्राप्त होवे इसमें सन्देह नहीं ॥ १७॥

इति श्रीकर्मवि० पार्वती० मूलन० प्रथमच० नाम षट्सप्ततितमोऽध्यायः॥७६॥

अथ सप्तसप्ततितमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

पश्चिमस्यामयोध्यायां योजनानां त्रयोपरि ॥
राघवस्य पुरे देवि न्यवसन्बहवो जनाः ॥ १ ॥
तन्मध्ये ब्राह्मणो ह्येको योगशर्माद्रिनन्दिनि ॥
तस्य पत्नी समाख्याता गुणज्ञा परमा शुभा ॥ २ ॥
तत्र वासोऽभवद्देवि ज्ञानिनस्तस्य कामिनि ॥
स पुरोधा महादेवि धनाढ्यः कृपणस्तथा ॥ ३ ॥
प्रतिग्रहेण भो देवि व्ययकारी दिने दिने ॥
तस्य भ्राता कनिष्ठश्च व्यापारकरणे रतः ॥ ४ ॥
उभौ द्वौ ब्राह्मणौ देवि शान्तिमन्तौ परस्परम् ॥
ततो बहुगते काले वैरं जातं तदा शिवे ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि! अयोध्यापुरीसे पश्चिमकी तरफ तीन योजनपर राघवपुरीमें बहुतसे जन वास करते भये ॥ १ ॥ और हे अद्रिसुते! तिसके मध्यमें एक योगशर्मा ब्राह्मण वसता भया और परमा नामवाली गुणोंसे युक्त तिसकी स्त्री होती भई ॥ २ ॥ हे देवि! हे महादेवि! तहां वह ज्ञानवान् पुरोहितवृत्तिवाला धनाढ्य होता भया तथा कृपणताको प्राप्त होता भया ॥ ३ ॥ और हे देवि! दिन दिनके प्रति वह प्रतिग्रहमें युक्त हुआ अपना खर्च किया करता और तिसका छोटा भाई व्यापारमेंही युक्त रहता भया ॥ ४ ॥ हे देवि! हे शिवे! वे दोनों ब्राह्मण परस्पर शांतिमें रहते भये तब बहुतसा काल व्यतीत होनेपर दोनोंका आपसमें वैरभाव

स्वधनस्य विभागार्थं युद्धं जातं सुदारुणम् ॥
तदुद्देशेन भो देवि मृतो भ्राता कनिष्ठकः ॥ ६ ॥
तद्धनं गृह्य वै स्वर्णं सर्वं पुत्राय दत्तवान् ॥
दानं नैव कृतं तेन ततो वै मरणं खलु ॥ ७ ॥
यमदूतैर्महाघोरे निक्षिप्तो रक्तकर्दमे ॥
बहून्यब्दसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ८ ॥
नरकान्निर्गतो देवि गर्दभत्वमजायत ॥
वृकयोनिस्ततो भूत्वा मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ९ ॥
वेदविद्यारतो देवि कन्यावान् पुत्रवर्जितः ॥
रोगयुक्तो महादेवि सदा भिक्षारतो नरः ॥ १० ॥
पूर्वपापविशुद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तं शृणुष्व मे ॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्याच्छिवपूजनमेव च ॥ ११ ॥

होता भया ॥ ५ ॥ हे देवि ! अपने धनके विभागके अर्थ दोनोंका परस्पर दारुण युद्ध होता भया और तिसके उद्देशसे छोटा भाई मर गया ॥ ६ ॥ फिर वह द्रव्य तिसने अपने पुत्रको दिया और कुछभी दान न किया फिर उसकाभी मृत्यु हो गया ॥ ७ ॥ तब वह यमराजके दूतोंने महाघोर रक्तकर्दमसंज्ञक नरकमें डाला तहां बहुतसे वर्षोंतक दुःखोंको भोग ॥ ८ ॥ हे देवि ! नरकसे निकल गर्दभयोनिको प्राप्त हुआ फिर तहांसे भेडियाकी योनिको प्राप्त होके मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ ९ ॥ हे देवि ! हे महादेवि ! वेदविद्यासे युक्त कन्याकी प्राप्तिसहित और पुत्रकी प्राप्तिसे हीन है सब कालमें भिक्षाईमें रत और रोगी रहता है ॥ १० ॥ हे शुभे ! पहिले पापकी शुद्धिके लिये प्रायश्चित्तको तू श्रवण कर हरिवंशका

अमायां पिण्डदानं च गोदानं च विशेषतः॥
षडक्षरं तथा मन्त्रं शुद्धं मम सुरेश्वरि ॥ १२ ॥
जपं वै कारयेत्सत्यं दशलक्षं वरानने ॥
होमं वै कारयेत्कान्ते कुण्डे चित्रे वरानने ॥ १३ ॥
चतुरस्रे वरारोहे तिलधान्यादितण्डुलैः ॥
प्रतिमां कारयेत्कान्ते भ्रातुः स्वर्णस्य वै शिवे ॥१४॥
पलैर्द्विपञ्चसंख्याकैर्मन्त्रेणानेन पूजयेत् ॥
ॐ नमः सवित्रे देवाय वेदवेदाङ्गधारिणे ॥ १५ ॥
पूर्वजन्मकृतं सर्वं मम पापं व्यपोहतु ॥
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा भ्रातुरंशापहारतः ॥ १६ ॥
त्वदर्थं गौर्मया दत्ता सूर्यदेवाय ते नमः ॥
प्रतिमां पूजयित्वा तु ब्राह्मणाय ददेत सः ॥ १७ ॥

श्रवण, शिवपूजन ॥ ११ ॥ हे सुरेश्वरि ! अमावास्याको पिंडदान और गौका दान विशेषतासे तथा षडक्षर मंत्र शुद्ध शिवजीका ॥ १२ ॥ हे वरानने ! दशलक्ष जप करवावे और नाना प्रकारके विचित्रकुंडोंमें होम करवावे ॥ १३ ॥ और हे वरानने ! तिल धान्य तंदुल इत्यादिसे हवन करावे और हे कान्ते ! भाईकी प्रतिमा सुवर्णकी ॥ १४ ॥ बावन (५२) पलकी बनाके इस मंत्रसे पूजन करे। अब मंत्रको कहते हैं। ॐ नमः सवित्रे देवाय वेदवेदाङ्गधारिणे ॥ १५ ॥ ऐसे उच्चारण कर यह कहे कि पहिले जन्मका किया पाप सब मेरा दूर होवे अज्ञानसे अथवा ज्ञानसे मैंने भाईका अंश भक्षण किया इस पापसे मुझे छुटावो ॥ १६ ॥ तुम्हारे वास्ते मैंने श्रेष्ठ गौका दान किया सूर्यदेव ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ऐसे सूर्यकी प्रार्थना कर गौ दान करे फिर प्रतिमाका पूजन कर ब्राह्मणको देवे

एवं कृते विधाने च शीघ्रं पुत्रमवाप्नुयात् ॥
काकवन्ध्या पुनः पुत्रजनयित्री भवेद् ध्रुवम् ॥१८॥
व्याधयो नाशमायान्ति तूलराशिर्यथाऽनले ॥१९॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य द्वितीय-
चरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तसप्ततितमोऽध्यायः॥७७॥

अथाष्टसप्ततितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥
शरय्वाश्चोत्तरे कूले मङ्गलं नाम वै पुरम् ॥
तत्र क्षत्रियसंज्ञको मद्यमांसस्य भोगकृत् ॥ १ ॥
भावसेनश्च नाम्ना स तस्य पत्नी मनोहरा ॥
वेश्याद्यूतरतश्चासौ लुब्धश्चोरेषु सम्मतः ॥ २ ॥

॥ १७ ॥ ऐसे विधिपूर्वक करनेसे जलदी पुत्रकी प्राप्ति होवे और काकवन्ध्याभी श्रेष्ठ पुत्रको पैदा करनेवाली होवे ॥ १८ ॥ और व्याधि नाशको प्राप्त होवे कि जैसे हे अबले ! अग्निमें रुईका समूह शीघ्रही नष्ट हो जाता है ऐसेही सब पाप नष्ट हो ॥ १९ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य द्वि० प्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

शिवजी कहते हैं-सरयूनदीके उत्तर किनारेपर मंगल नामवाला पुर होता भया तहां एक क्षत्री मदिरामांसका भोगनेवाला वास करता भया ॥ १ ॥ और भावसेन तिसका नाम और तिसकी पत्नी मनोहरा होती भई और वह वेश्यासंग, जूआमें रत, लोभसे युक्त, चोरीमें

प्रत्यहं चौरकर्मेण धनसंचयसंमुखः ॥
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ३ ॥
सर्पेणापि महादेवि यमदूतैर्यमाज्ञया ॥
रौरवे नरके क्षिप्तः षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ४ ॥
नरकान्निर्गतो देवि व्याघ्रयोनिं ततोऽलभत् ॥
मानुषत्वं ततो लेभे कुले महति पूजिते ॥ ५ ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि दीपदानं कृतं यतः ॥
तत्फलेन महादेवि धनाढ्यत्वमजायत ॥ ६ ॥
मद्यपानफलाद्देवि नानाज्वरसमुद्भवः ॥
वेश्यासुरतसंयुक्तो यतोऽभूत्पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥
तेन पापेन भो देवि पुत्राणां मरणं खलु ॥
मनस्युद्वेगता नित्यं जातो द्यूतरतः पुरा ॥ ८ ॥

युक्त होता भया ॥ २ ॥ और हमेशा चौरकर्मसे द्रव्यसंचय करता था ऐसे बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिसका सर्पसे मृत्यु होता भया ॥३॥ और हे महादेवि ! यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय नरकमें डाला और वह साठ हजार वर्षोंतक नरकवास कर ॥ ४ ॥ फिर हे देवि ! नरकसे निकस भेडियाकी योनिको प्राप्त होता भया फिर तहांसे बडोंकरके पूजित उत्तम कुल मनुष्यलोकमें जन्मता हुआ ॥ ५ ॥ हे महादेवि ! पहिले जन्ममें तिसने दीपकका दान किया था तिस फलके प्रभावसे धनाढ्य होता भया ॥ ६ ॥ हे देवि ! दारूपानके फलसे नाना प्रकारके ज्वरोंकी उत्पत्ति तिसके शरीरमें हुई और पहिले जन्ममें वेश्यामें रत होनेसे ॥ ७ ॥ पुत्रोंका निश्चय मरण हुआ और द्यूत (जुआकर्म) में रत होनेसे मनमें

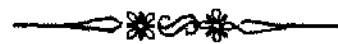
अस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि सर्वपापविशुद्धये ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ९ ॥
वापीकूपतडागांश्च पथि मध्ये च कारयेत् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ १० ॥
दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ॥
दशवर्णां ततो दद्याद्वृषभेण समन्विताम् ॥ ११ ॥
एवं पापविशुद्धिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥
पुत्रश्च जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रणश्यति ॥१२॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥
रोगा विनाशमायान्ति व्याधयश्च तथा शिवे ॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

उद्वेगता रहे ॥ ८ ॥ अब पहिले पापकी शुद्धिके लिये तिसकी शांतिको कहते हैं अपने द्रव्यमेंसे छठा भाग दान करे ॥ ९ ॥ और हे वरानने ! रास्ताके मध्यमें बावडी, कूप, तालाव करवावे और गायत्रीके मूलमंत्रका एक लक्ष जप करावे ॥ १० ॥ और दशांश हवन तथा दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे और बैलसे युक्त दशवर्णोंवाली गौका दान देवे ॥ ११ ॥ ऐसे करनेसे पापकी शुद्धि होती है इसमें कुछ विचार नहीं करना । हे देवि ! पुत्रकी प्राप्ति होवे वंध्यापनेकी शांति होवे ॥१२॥ और मृतवत्साभी पुत्रको प्राप्त होती है सब रोग तथा व्याधि नाशको प्राप्त होवे ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

अथैकोनाशीतितमोऽध्यायः।



॥ शिव उवाच ॥

मध्यदेशे विशालाक्षि हिडम्बं नाम वै पुरम् ॥
लवणकारोऽवसत्तत्र भीमो गुणविचक्षणः ॥ १ ॥
प्रत्यहं लवणं कृत्वा विक्रयं चाकरोत्सदा ॥
तस्य भार्या पुण्यवती पुत्रत्रयमजीजनत् ॥ २ ॥
धनधान्यवृषच्छागगोमहिष्यादिकं तथा ॥
बहूनि सञ्चितानि स्युर्लवणान्निलये प्रिये ॥ ३ ॥
तस्य ज्येष्ठः सुतो देवि वेश्यासुरततत्परः ॥
एकस्मिन्समये देवि लवणाब्धौ निशामुखे ॥ ४ ॥
स्त्रिया सहाद्रितनये वृषभौ पतितौ तदा ॥
श्रुत्वा तत्र तदा देवि निशायां न गतोऽपि सः ॥ ५ ॥
त्रयाणां वै भवेन्मृत्युः स्वकाले ज्ञातिना सह ॥
भार्या निःसारिता तेन वृषभौ मृत्युसंयुतौ ॥ ६ ॥

शिवजी कहते हैं–हे विशालाक्षि ! मध्यदेशविषैं एक हिडंब नामवाला पुर था तहां भीमनामसे विख्यात विलक्षण लवणकार वास करता भया ॥१॥ वह नित्य लवणको बनाके बेचा करता था और तिसकी भार्या पुण्यवती तीन पुत्रोंको पैदा करती भई ॥ २॥ हे प्रिये ! तिसके धन, धान्य, बैल, बकरी, गौ, महिषी इत्यादि बहुत थे तथा लवणका खजाना था ॥३॥ और हे देवि ! तिसका ज्येष्ठ पुत्र वेश्यासंग रहता भया एक समय रात्रिविषैं लवणरूपी समुद्रमें॥४॥ हे अद्रितनये ! हे देवि ! ! दो वृषभ अर्थात् बैल गिर गये और तहां स्त्रीभी गिरी तब वह लवणकार नहीं गया॥५॥ तहां तीनोंका

ततः सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ॥
मरणं तस्य वै जातं लवणकारस्य पार्वति ॥ ७ ॥
यमदूतैर्महाघोरैर्नरके घोरसंज्ञके ॥
पातितस्तत्र देवेशि द्वाविंशतिसहस्रकम् ॥ ८ ॥
वर्षं सुभुज्यते देवि कृमिसूचिमुखैर्युतम् ॥
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनावजायत ॥ ९ ॥
पुनश्छागस्य वै योनिं बिडालस्य ततोऽगमत् ॥
मानुषत्वं ततो लेभे देशे पुण्यतमे शुभे ॥ १० ॥
स्वकर्मवशगो नित्यं धनधान्यसमन्वितः ॥
गुणज्ञः सर्वविद्यानां कन्यापुत्रैश्च वर्जितः ॥ ११ ॥
लवणकारस्य मरणं गङ्गायां पूर्वजन्मतः ॥
तत्फलेन महादेवि धनाढ्यत्वं प्रजायते ॥ १२ ॥

मृत्यु हुआ पीछे लवणकारने अपनी स्त्रीभी मरी हुई अपने बंधुजनोंसे युक्त होके निकाल दी और बैलभी मृत्युको प्राप्त हुए ॥ ६ ॥ हे वरानने ! हे पार्वति ! वृद्ध होनेविषैं तिस लवणकारका मृत्यु हुआ ॥ ७ ॥ और हे देवि ! वह यमके दूतोंने यमाज्ञा पाय घोर नरकमें डाला तब बाईस हजार वर्षपर्यंत घोर नरक भोगा ॥ ८ ॥ हे देवि ! सुईकेसे मुखवाले जीवोंसे युक्त ऐसे नरकोंके दुःखोंको भोग फिर नरकसे निकस भेडियाकी योनिको प्राप्त होता भया ॥ ९ ॥ फिर हे शुभे ! छागकी योनिको प्राप्त होके तहांसे बिडालकी योनिको प्राप्त हुआ फिर शुभयुक्त देशमें मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ १० ॥ और अपने कर्मोंके प्रभावसे धनधान्यसे युक्त गुणज्ञ सब विद्याओंमें चतुर तथा कन्या और पुत्र जिसके नहीं हुए ॥ ११ ॥ और हे

स्वभार्या पतिता देवि लवणकूपे निशामुखे ॥
नैव निःसारिता देवि ततः कन्या प्रजायते ॥ १३ ॥
वृषभौ पतितौ कूपे पातितौ मृत्युमागतौ ॥
तेन दोषेण देवेशि पुत्रो नैव प्रजायते ॥ १४ ॥
परस्त्रीरतिसंयोगं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसंभवः ॥ १५ ॥
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १६ ॥
गायत्रीलक्षजाप्यं च विप्रद्वारा च कारयेत् ॥
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥ १७ ॥
सुवर्णप्रतिमां कृत्वा लक्ष्म्याः पञ्चपलेन वै ॥
रौप्यस्यैव वरारोहे वृषभौ द्वौ सुनिर्मलौ ॥ १८ ॥

महादेवि ! पूर्वजन्मके प्रसंगसे तिस लवणकारका मरण गङ्गा-पर हुआ था इससे धनाढ्य होता भया ॥ १२ ॥ हे देवि ! तिसने रात्रिमें अपनी भार्या लवणकूपमें गिरी निकासी नहीं तिसके कन्या हुई ॥ १३ ॥ और हे देवेशि ! वृषभ कूपमें पडे वे मृत्युको प्राप्त हुए इस दोषसे पुत्र नहीं भये ॥१४॥ और हे देवि ! पूर्वजन्ममें परस्त्रीसे भोग किया तिससे शरीरमें रोगकी प्राप्ति भई ॥ १५॥ अब हे देवि ! हे सुशोभने ! इसकी शांतिको कहता हूं तू श्रवण कर। अपने घरके द्रव्यमेंसे आठवां भाग दान कर ब्राह्मणको देवे ॥१६॥ और एक लक्ष गायत्रीका जप ब्राह्मणके पाससे करावे और तिस-का दशांश हवन तथा दशांश तर्पण तिसका दशांश मार्जन कर-वावे ॥ १७ ॥ पांच पल (२० तोले) प्रमाण सुवर्णकी लक्ष्मी-जीकी मूर्ति बनवावे और हे वरारोहे ! चांदीकी पांच पांच पल

पलैर्दशमितैः कुर्यात्पूजयित्वा यथाविधि ॥
मन्त्रेणाननेन देवेशि स्वोपचारैः पृथक् पृथक् ॥१९॥
ॐ लक्ष्मि देवि महालक्ष्मि कमले सर्वसिद्धिदे ॥
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥ २० ॥
ॐ लक्ष्म्यै नमः पाद्यं सम० । ॐ लक्ष्म्यै नमः
अर्घ्यं० । ॐ देव्यै नम स्नानं० । ॐ कमलायै
नमः गन्धं० । ॐ सर्वायै नमः धूपं० । ॐ सिद्धि-
दायै नमः दीपं० । ॐ पाद्यादिसर्वाणि दापयेत् ॥
ॐ नन्दिकेश्वर भूतेश गणानामधिपो भवान् ॥
मम पूर्वकृतं पापं क्षम्यतां परमेश्वर ॥ २१ ॥
इति मन्त्रेण वृषभौ पूजितौ शुभ्ररूपिणौ ॥
पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय ददेत्ततः ॥ २२ ॥

प्रमाणवाली अर्थात् दश पलकी दो बलोंकी निर्मल मूर्ति बनवावे ॥ १८ ॥ तथा दश पलयुत मूर्ति बनवावे और हे देवेशि ! यथाविधि इस मंत्र करके अपने उपचारसे पृथक् पृथक् पूजन करावे ॥ १९ ॥ ॐ हे लक्ष्मि ! हे देवि ! हे महालक्ष्मि ! हे कमले ! हे सर्वसिद्धिदे ! ऐसे मंत्र उच्चारण कर यह कहे कि मेरा पहिला किया हुआ पाप हे दयानिधे ! दूर करो ॥ २० ॥ मंत्र ॐ लक्ष्म्यै नमः पाद्यं सम० ॐ लक्ष्म्यै नमः अर्घ्यं० ॐ देव्यै नमः स्नानं० ॐ कमलायै नमः गन्धं० ॐ सर्वायै नमः धूपं० ॐ सिद्धिदायै नमः दीपं० ॐ पाद्यादिसर्वाणि दापयेत् । ऐसे पाद्यादि सब देके हे नन्दिकेश्वर ! हे भूतेश ! हे परमेश्वर ! तू गणोंका अधिष्ठाता है मेरा पहिला किया पाप दूर कर ॥ २१ ॥ इस मंत्रसे शुद्धरूप बैलोंका पूजन कर यथान्याय संकल्प कर ब्राह्मणको देवे ॥ २२ ॥

ततो गां कपिलां दद्यात् स्वर्णशृंगीं सुभूषिताम् ॥
एवं कृते वरारोहे यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ २३ ॥
तत्सर्वं नाशमायाति शीघ्रमेव न संशयः ॥
पुत्रोऽपि जायते देवि वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ॥२४॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ २५ ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं पुनर्देवि न संशयः ॥ २६ ॥
इति श्रीकर्मविपाक० पार्वतीहर० मूलनक्षत्रस्य चतुर्थचरण-
प्रायश्चित्तकथनं नामैकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥

अथाशीतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यायां महादेवि वसिष्ठस्यैव चाश्रमे ॥
श्रीधनेश्वरशर्मेति ब्राह्मणो न्यवसत्प्रिये ॥ १ ॥

फिर पीछे कपिला गौ स्वर्णशृंगयुक्त विभूषित करके देवे ऐसे कर-
नेसे हे वरारोहे ! पहिले जन्मका किया पाप ॥ २३ ॥ जल्दीही
सब नाशको प्राप्त होता है इसमें संदेह नहीं और हे देवि ! पुत्रकी
प्राप्ति होवे तथा वंध्यापना दूर होता है ॥ २४ ॥ और सब रोगों-
का नाश होवे इसमें कुछ विचार नहीं करना । मृतवत्साभी बहुत
कालतक जीनेवाले पुत्रको पैदा करती है ॥ २५ ॥ और हे देवि !
काकवन्ध्याभी पुत्रको प्राप्त होती है इसमें संशय नहीं ॥ २६ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे मूलनक्षत्रस्य चतु-
र्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥

शिवजी कहते हैं-हे महादेवि ! हे प्रिये ! अयोध्यापुरीमें वसि-

स पण्डितो गुणज्ञश्च धनी मानी विचक्षणः॥
स्त्री च पतिव्रता तस्य पतिसेवासु तत्परा ॥ २ ॥
पुत्रद्वयं तथा जातं विद्यावृत्तिर्बभूव सः ॥
भागिनेयस्ततो देवि तद्धनेश्वरशर्मणः ॥ ३ ॥
तत्र वासार्थमायातः सपत्नीको वरानने ॥
तीर्थयात्राप्रसङ्गेन गृहे तस्यावसद्द्विजः ॥ ४ ॥
मासमेकं स्थितस्तत्र भागिनेयस्ततो मृतः ॥
दष्टः सर्पेण देवेशि कालपाशावृतो द्विजः ॥ ५ ॥
वर्षमात्रे ततो जाते भागिनेयस्य या वधूः ॥
धनेश्वरे महाप्रीतिमकरोत्सा मम प्रिये ॥ ६ ॥
पुत्राणां मरणं देवि जातं तस्याघरूपिणः ॥
गृहे स्वर्णं च रौप्यं च सर्वं तस्यै न्यवेदयत् ॥ ७ ॥

भृगुजीके आश्रममें श्रीधनेश्वरशर्मा नामवाला एक ब्राह्मण होता भया ॥ १ ॥ और वह पंडित गुणज्ञ तथा धनवान् मानसे युक्त विचक्षण अर्थात् विद्वान् था और तिसकी स्त्री पतिव्रता पतिकी सेवामें रहनेवाली होती भई ॥ २ ॥ और हे देवि ! तिसके दो पुत्र होते भये तथा धनेश्वरशर्माके स्थानमें तिसका भागिनेय अर्थात् बहनका पुत्र आयके प्राप्त हुआ ॥ ३ ॥ हे वरानने ! वह भागिनेय स्त्रीसहित तहां वास करनेको प्राप्त हुआ और तीर्थयात्राके प्रसंगसे तिसके घरमें वास करता भया ॥ ४ ॥ हे देवि ! एक महीना तहां वास करके वह भागिनेय कालपाशमें आके सर्पके डसनेसे मृत्युको प्राप्त हो गया ॥ ५ ॥ हे प्रिये ! जब भागिनेयको एक वर्ष व्यतीत हो चुका तब भागिनेयकी स्त्री धनेश्वरशर्मासे महाप्रीतियुक्त होके प्रीतिको करती भई ॥ ६ ॥ और भागिनेयकी स्त्रीसे रमण

तत्तो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्किल ॥
यमदूतैर्महाघोरे नरके पातितः शिवे ॥ ८ ॥
यमाज्ञया वरारोहे षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥
अन्यत्रापि कृतं पापं प्रयागे च विनश्यति ॥ ९॥
प्रयागे यत्कृतं पापं रामपुर्यां विनश्यति ॥
अयोध्यायां कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति ॥ १० ॥
नरकान्निःसृतो देवि बकयोनावजायत ॥
पुनर्दर्दुरयोनिं वै काकयोनिं ततोऽगमत् ॥ ११ ॥
पुनर्मानुषयोन्यां वै धनधान्यसमन्वितः ॥
जातः पुण्यतमे देशे देवगन्धर्वसेविते ॥ १२ ॥
सर्वविद्यासु विख्यातो गुणज्ञो रूपवांस्तथा ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि भागिनेयवधूं प्रति ॥ १३ ॥

करनेवाले तिस पापीके पुत्रादिकोंका मरना हो गया तब सब द्रव्य धनेश्वरशर्मा तिस भागिनेयकी स्त्रीको देता भया ॥ ७ ॥ हे शिवे ! तब काल पाके धनेश्वरशर्माभी मृत्युको प्राप्त हो गया तब यमके दूतोंने नरकमें डाला ॥ ८ ॥ हे वरारोहे ! साठ हजार वर्षोंकी संख्यावाले नरकमें प्राप्त हुआ और जगहका किया पाप प्रयागमें नष्ट हो जाता है ॥ ९ ॥ और प्रयागमें किया पाप रामपुरीमें (अयोध्यापुरी) में नष्ट होता है अयोध्यामें किया पाप वज्रलेप अर्थात् नष्टही नहीं होता है ॥ १० ॥ फिर हे देवि ! नरकसे निकल बगुला पक्षीकी योनिको प्राप्त हुआ फिर मेंडककी योनिको प्राप्त होके काककी योनिको प्राप्त हुआ ॥ ११ ॥ फिर गन्धर्वोंसे सेवित पुण्यतम देशमें धनधान्यसे युक्त मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ १२ ॥ हे देवेशि ! सब विद्याओंमें गुणज्ञ रूपवान् विख्यात है

संभोगं कृतवान् विप्रः कुक्षिपीडा ततः परम् ॥
वंशच्छेदो विशालाक्षि कन्या वै बहवस्तथा ॥ १४ ॥
भागिनेयस्य वै द्रव्यं भुक्तं पूर्वमनेन वै ॥
शरीरे बहुधा पीडा परस्त्रीगमनादनु ॥ १५ ॥
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं मम वल्लभे ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १६ ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां जपं वै कारयेत्ततः ॥
दशांशं हवनं कृत्वा तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १७ ॥
जीर्णोद्धारं वरारोहे कूपं चैव तडागकम् ॥
तद्वदेव च वै कुर्यात्षष्टिवृक्षप्ररोपणम् ॥ १८ ॥
प्रयागे माघमासे तु तुलादानं प्रयत्नतः ॥
धूम्रवर्णां तथा गां वै दद्याद्विप्राय सत्कृताम् ॥ १९ ॥

तिसने पहिले जन्ममें भागिनेयकी भार्यासे ॥ १३ ॥ हे विशालाक्षि ! भोग किया तिससे कुक्षिमें पीडा हुई और वंश नष्ट हुआ बहुतसी कन्या पैदा हुई ॥ १४ ॥ और भागिनेय (भानजे) का द्रव्य पूर्वजन्ममें इसने भोगा तिससे शरीरमें अनेक प्रकारकी पीडा परस्त्रीगमनादि कर्मसे भई ॥ १५ ॥ हे मम वल्लभे ! अब इसकी शांतिको कहता हूं तू श्रवण कर। अपने घरके द्रव्यमेंसे छठा भाग पुण्य करे ॥ १६ ॥ और गायत्री तथा जातवेदमंत्रका जप करावे और तिसका दशांश हवन तिसका दशांश तर्पण तिसका दशांश मार्जन करावे ॥ १७ ॥ और हे वरारोहे ! फूटा टूटा कूप तालाब बनवावे तथा साठ संख्या वृक्षोंको लगावे ॥ १८ ॥ और यत्नसे माघके महीनेमें प्रयागका स्नान करे और धूम्र वर्णवाली श्रेष्ठ गौका

एवं कृते वरारोहे पूर्वपापं विशुद्ध्यति ॥
पुत्रोऽपि जायते देवि वन्ध्यत्वं च प्रशाम्यति ॥२०॥
काकवन्ध्यत्वशान्त्यर्थं रवियुक्तां तु सप्तमीम् ॥
कृत्वा व्रतं वरारोहे सुवर्णं दानमाचरेत् ॥ २१ ॥
शय्यादानं ततो दद्यान्मृतवत्सा सुपुत्रिणी ॥
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥२२॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे पूर्वाषाढानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाऽशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥

अथ एकाशीतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

कर्णाटे वै ततो देवि पुरं च शिवसंज्ञकम् ॥
वसन्ति तत्र बहवो वैश्याः पण्योपजीविनः ॥ १ ॥

दान ब्राह्मणको देवे ॥ १९ ॥ हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे पहिला पाप शुद्ध होता है और पुत्रकी प्राप्ति बंध्यापनेकी शांति होती है ॥ २० ॥ और काकवन्ध्यापनेकी शांतिके लिये आदित्ययुक्त सप्तमीके दिन करके पीछे सुवर्णका दान करे ॥ २१ ॥ फिर शय्याका दान देवे ऐसे करनेसे मृतवत्साभी पुत्रको पैदा करती है और सब रोगोंका नाश होता है इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ २२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाषाढान० प्रथमच० प्रायश्चित्तकथनं नामाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! कर्नाटदेशमें शिव नामवाला पुर होता भया जहां पण्य अर्थात् दुकानसे आजीवनयुक्त वैश्यजन

तन्मध्ये वैश्य एको हि धरणीकरविश्रुतः ॥
तस्य रूपवती भार्या सुन्दरी बहुसंयुता ॥ २ ॥
व्यापारेण महादेवि धनं बहु च संचितम् ॥
ततो बहुदिने काले तस्य मित्रं द्विजोऽप्यभूत् ॥ ३॥
ब्राह्मणः सोऽपि वै भ्रष्टः कष्टं भुक्त्वा दिने दिने ॥
स्वर्णं शतपलं देवि हीरकं मौक्तिकं तथा ॥ ४ ॥
स्थापितं ब्राह्मणद्रव्यं स्वगृहे मित्रकारणात् ॥
ततो वृद्धे तु संजाते वैश्यमृत्युरभूत्पुरा ॥ ५ ॥
पश्चात्पत्नी मृता तस्य व्रतिनी गर्ववर्जिता ॥
वैश्यस्य चाभवत्स्वर्गं दिव्यवर्षसहस्रकम् ॥ ६ ॥
पत्न्या सह वरारोहे भुक्त्वा स्वर्गफलं ततः ॥
बकयोनिं ततो लेभे चक्रवाकस्ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

बहुतसे वास करते थे ॥ १ ॥ और तिन्होंके मध्यमें धरणीकर नामवाला वैश्य विख्यात होता भया और तिसकी रूपवती स्त्री बहुतसे रूपसे युक्त होती भई ॥ २ ॥ हे महादेवि ! तिसने व्यापारसे बहुत धन इकट्ठा किया तब बहुतसे दिन होनेसे तिसका एक ब्राह्मण मित्र होता भया ॥ ३ ॥ ऐश्वर्यसे भ्रष्ट हुआ दिन दिनके प्रति कष्ट भोगके सौ (१००) पल सुवर्ण और हीरा तथा मोती ॥ ४ ॥ इत्यादि उस वैश्यने तिस ब्राह्मणके स्थापन कर दिया मित्रताके कारणसे फिर वृद्ध होनेसे तिस वैश्यका मृत्यु हो गया ॥ ५ ॥ पीछे गर्वसे वर्जित व्रतमें युक्त तिसकी पत्नीभी मृत्युको प्राप्त भई और तिसको दिव्य हजार वर्षवाला स्वर्गवास हुआ ॥ ६ ॥ हे वरारोहे ! पत्नीसहित वह वैश्य स्वर्गके फलको भोग फिर बगुलापक्षीकी योनिको प्राप्त भया फिर तहांसे चकवा-

हंसयोन्यां ततो जातो मानुषत्वं ततोऽगमत् ॥
पूर्वसंबन्धतः पूर्वपुण्यात्पातिव्रतादपि ॥ ८॥
पुनर्विवाहिता देवि ब्राह्मणस्वापहारतः ॥
वन्ध्या जाता तु सा नारी दुःखिता साप्यहर्निशम्॥९॥
तस्य देहेऽभवद्व्याधिः कफवातसमन्वितः ॥
धनाढ्यो बहुधा कन्या जायन्ते च पुनः पुनः ॥१०॥
अस्य निग्रहहेत्वर्थं शृणु सर्वं वरानने ॥
यद्गृहे वित्तमर्द्धं तद्ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ ११ ॥
ॐ लक्ष्म्यै नमोऽथ मन्त्रेण दशायुतजपं ततः ॥
दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १२ ॥
गामेकां कृष्णवर्णां वै स्वर्णयुक्तां सवत्सकाम् ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्यान्मुक्तालांगूलसंयुताम् ॥ १३ ॥

ककी योनिको प्राप्त हो ॥ ७ ॥ हंसकी योनिको प्राप्त हुआ फिर पूर्व किये पुण्यके प्रभावसे तथा पातिव्रत्यधर्मवाली स्त्रीके प्रभावसे मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ ८ ॥ और वही स्त्री फिर विवाही पूर्व जन्ममें ब्राह्मणका धन नहीं देनेसे वह स्त्रीभी वंध्या रात दिन अतिदुःखित होती भई ॥ ९ ॥ और तिसके देहमें व्याधि रहती भई कफवातादि रोगयुक्त और धनसे युक्त है तिसके वारंवार कन्या जन्मती भई ॥ १० ॥ हे वरानने ! इस पापकी शांतिको तू श्रवण कर अपने घरका आधा द्रव्य ब्राह्मणको संकल्प करके देवे ॥ ११ ॥ " ॐ लक्ष्म्यै नमः " इस मंत्रका दश हजार जप करावे और तिसका दशांश हवन तिसका दशांश तर्पण तिसका दशांश मार्जन करावे ॥ १२ ॥ और एक गौ कृष्णा सुवर्ण तथा वस्त्रादिसे युक्त मोतियोंकी पुच्छादिसे युक्त ब्राह्मणको देवे ॥ १३ ॥

भोजनं कारयेत्पूज्यान् ब्राह्मणान् वेदपारगान् ॥
शतं वा द्विशतं देवि त्रिशतं वा विशेषतः ॥ १४ ॥
पलैः शतैः सुवर्णस्य वेदीं कृत्वा विचक्षणः ॥
तन्मध्ये च द्विजस्यैव रौप्यस्यैव च चाकृतिम् ॥१५॥
पूजयेच्छ्रद्धया देवि मन्त्रेणैव पुनः पुनः ॥
ब्रह्मंस्त्वं कपिलो विष्णुः सर्वसाक्षी जगन्मयः ॥१६॥
ममापराधं देवेश क्षम्यतां पूर्वजन्मनः ॥
द्रव्यं मित्रस्य भो देव स्थापितं स्वगृहे मया ॥१७॥
न दत्तं वै मयाज्ञानात् क्षम्यतां परमेश्वर ॥
मन्त्रेणानेन देवेशि पूजनं विधिपूर्वकम् ॥ १८ ॥
पूजयित्वा ततो देवि ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥
एवं कृत्वा वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ १९ ॥
काकवन्ध्या पुनर्देवि कन्यकाजननी तथा ॥
पुत्रं प्रसूयते देवि न च कन्यां प्रसूयते ॥ २० ॥

और हे देवि ! पवित्र वेदके पढे हुए ब्राह्मणोंको सौ (१००) अथवा दो सौ अथवा तीन सौको विशेषतासे भोजन करावे ॥१४॥ और सौ पल संख्या सुवर्णकी वेदी बना तिसके मध्यमें चांदीकी ब्राह्मणकी मूर्ति स्थापन कर॥१५॥ हे देवि ! श्रद्धासे इस मंत्रकरके तिसका पूजन कर हे ब्रह्मन् ! तू कपिल है विष्णुका रूप है सर्वसाक्षी है जगन्मय है ॥१६॥ हे देवेश ! मेरा अपराध क्षमा कर कि पहिले जन्ममें मित्रका द्रव्य स्थापित किया हुआ ॥१७॥ हे देवेशि ! अज्ञानसे मैंने नहीं दिया । हे परमेश्वर ! तू क्षमा कर इस मंत्रसे विधिपूर्वक पूजन करे ॥१८॥ हे देवि ! हे वरारोहे ! पूजन कर ब्राह्मणको देवे ऐसे करनेसे जल्दी पुत्रकी प्राप्ति होती है ॥ १९ ॥ हे देवि !

मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥
व्याधयः संक्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥२१॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे पूर्वाषाढान० द्वितीयचरणप्राय० नामैकाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८१ ॥

अथ द्व्यशीतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अन्तर्वेदे विशालाक्षि लोध्रोऽवात्सीत्स पुण्यकृत् ॥
गन्धर्वाख्ये पुरे देवि विख्याते यमुनातटे ॥ १ ॥
सुभाग्यवान् गुणज्ञो हि बहुभृत्यैः सुपूजितः ॥
भूपतिस्तस्य देशस्य दाता भोक्ता विचक्षणः ॥ २ ॥

काकवन्ध्या वा कन्याको पैदा करनेवाली स्त्रीभी ऐसे करनेसे पुत्रको पैदा करे कन्याका जन्म नहीं होवे ॥ २० ॥ और मृतवत्साभी बहुत कालतक जीनेवाले पुत्रको पैदा करे तथा सर्व व्याधि नष्ट होवे इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पूर्वषाढा० द्विती० प्रायश्चित्तकथनं नामैकाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८१ ॥

शिवजी कहते हैं–हे विशालाक्षि ! गंगायमुनाके मध्यमें गंधर्व नामवाला पुर यमुनातटपर विख्यात है तहां पुण्यवान् एक लोधा वास करता भया ॥१॥ और वह सुभाग्यवान् तथा गुणज्ञ बहुतसे नौकरोंसे युक्त पूजित हुआ तिस देशका भूपति अर्थात् राजा दानके देनेवाला और भोगनेवाला विद्वान् अर्थात् पंडित ऐसा होता

ब्राह्मणस्य हृता भूमिरज्ञानाद्वै सुरेश्वरि ॥
ब्राह्मणोऽपि विषं भुक्त्वा मृतस्तस्योपरि प्रिये ॥ ३ ॥
ततो बहुगते काले तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥
यमदूतैर्महाघोरे कुम्भीपाके निपातितः ॥ ४ ॥
यमाज्ञया वरारोहे युगमेकं च पातितः ॥
महादुःखेन संतप्तो बहुकष्टं प्रलब्धवान् ॥ ५ ॥
नरकान्निःसृतो देवि सूकरत्वं ह्यजायत ॥
ऋक्षयोनिं ततो भूत्वा शुकयोनिं ततोऽगमत् ॥ ६ ॥
पुनर्मानुषयोनिर्वै मध्यदेशे वरानने ॥
धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो वरानने ॥ ७ ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि हृता भूमिर्वरानने ॥
ब्राह्मणो वै मृतः पूर्वं तदुद्देशेन वै शिवे ॥ ८ ॥

भया ॥ २ ॥ हे सुरेश्वरि ! जिसने अज्ञानसे ब्राह्मणकी भूमि छीन ली फिर हे प्रिये ! ब्राह्मणभी विषपान करके मृत्युको प्राप्त हुआ ॥ ३ ॥ फिर बहुतसा काल होनेपर तिस लोधाकाभी मृत्यु हुआ और वह यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय कुंभीपाक नरकमें डाला ॥ ४ ॥ हे वरारोहे ! यमराजने एक युगपर्यंत संख्यावाले नरककी आज्ञा दी तहां महादुःखसे तपायमान होके बहुतसे कष्टको प्राप्त होता भया ॥ ५ ॥ हे देवि ! फिर नरकसे निकल शूकरकी योनिको प्राप्त हुआ फिर तहांसे ऋच्छकी योनिको प्राप्त होके फिर तोतेकी योनिको प्राप्त भया ॥ ६ ॥ हे वरानने ! फिर मध्यदेशमें धनधान्यसे युक्त वंशसे रहित मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥ हे देवेशि ! हे वरानने ! पहिले जन्ममें ब्राह्मणकी भूमि छीनी और हे शिवे ! जिसके उद्देशसे विप्रका मृत्यु हुआ ॥ ८ ॥

अतः पुत्रविहीनोऽयं कन्यका बहु जायते ॥
महारोगेण संतप्तो मृतपुत्रः पुनः पुनः ॥ ९ ॥
अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये पूर्वपापस्य शान्तये ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण वरानने ॥ १० ॥
दशायुतं जपः कार्यः प्रतिमन्त्रैः सुरेश्वरि ॥
दशांशं हवनं तद्वत् तर्पणं मार्जनं तथा ॥ ११ ॥
दशवर्णा ततो दद्याच्छतं ब्राह्मणभोजनम् ॥
भूमिदानं ततः कुर्याच्छतविग्रहमानकम् ॥ १२ ॥
पलपञ्चसुवर्णस्य ब्राह्मणस्य तथाऽकृतिम् ॥
पूजयित्वा यथान्यायं ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ १३ ॥
प्रयागे मकरे मासि पत्न्या सह वरानने ॥
स्नानं कुर्याच्च देवेशि पूर्वपापस्य शुद्धये ॥ १४ ॥

इससे पुत्ररहित हुआ है कन्या बहुतसी जन्मी महारोगयुक्त है वारंवार पुत्रादि तिसके नष्ट होते भये ॥ ९ ॥ अब हे वरानने ! तिसकी शांतिको कहता हूं तू श्रवण कर । पहिले पापकी शांतिके लिये गायत्री जातवेद त्र्यंबक इत्यादि मंत्र जपावे ॥ १० ॥ हे सुरेश्वरि ! प्रतिमंत्र लक्षसंख्या और दशांश हवन तिससे दशांश तर्पण तिससे दशांश मार्जन करावे ॥ ११ ॥ और दश वर्णवाली गौ देवे सौ (१००) संख्यावाले ब्राह्मणोंको भोजन करावे और सौ बीघे प्रमाणवाली भूमिका दान देवे ॥ १२ ॥ और पंच पल सुवर्णकी मूर्ति ब्राह्मणकी बनवाके यथाविधि पूजन कर ब्राह्मणको देवे ॥ १३ ॥ और हे वरानने ! हे देवेशि ! मकरके महीनेमें स्त्रीसहित प्रयागमें स्नान करनेसे पूर्व पाप नष्ट होते हैं ॥ १४ ॥

एवं कृत्वा वरारोहे पुत्रोत्पत्तिर्भवेच्छिवे ॥
वन्ध्यत्वं नाशमायाति काकवन्ध्या च गर्भिणी॥१५॥
मृतवत्सा लभेत्पुत्रं चिरंजीविनमुत्तमम् ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१६॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० पूर्वाषाढानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्व्यशीतितमोऽध्यायः ॥८२॥

अथ त्र्यशीतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यायां विशालाक्षि मालाकारोऽवसत्पुरा ॥
साधुवृत्तिरतः श्रीमान् ब्राह्मणानां च सेवकः ॥ १ ॥
तस्य पत्नी महादुष्टा कुलटा व्यभिचारिणी ॥
माल्यं कृत्वा विशालाक्षि जीवयामास बान्धवान्॥२॥

हे वरारोहे ! हे शिवे ! ! ऐसे करने करके पुत्रकी उत्पत्ति शीघ्रही होती है वंध्यापना शांत होके काकवंध्या गर्भिणी होती है ॥१५॥ और मृतवत्सा बहुत कालतक जीनेवाले पुत्रको पैदा करती है सब रोग नष्ट होते हैं इसमें संदेह नहीं ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाषा० तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्व्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

शिवजी कहते हैं-हे विशालाक्षि ! अयोध्यापुरीमें साधुवृत्तिमें रत लक्ष्मीवान् ब्राह्मणोंकी सेवा करनेवाला पहिले एक मालाकार (माली) वसता भया ॥ १ ॥ हे विशालाक्षि ! तिसकी स्त्री महादुष्ट कुलटा जारकर्ममें रत ऐसी होती भई और वह माला बनाके

तस्य मित्रं द्विजोऽप्येकः स्वर्णं लक्षद्वयं तथा ॥
स्थापितं स्वगृहे तस्य गताश्च बहुवासराः ॥ ३ ॥
याचितं तेन स्वं द्रव्यमर्धं प्राप्तं तदा प्रिये ॥
तदर्धं च व्ययं जातं मालाकारस्य वै गृहे ॥ ४ ॥
एवं बहुगते काले मालाकारो मृतः पुरा ॥
अयोध्यायां विशालाक्षि स्वर्गस्तस्याभवत्किल ॥५॥
लक्षवर्षं वरारोहे भुक्तं स्वर्गफलं शुभम् ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वेऽभवत्पुनः ॥ ६ ॥
मध्यदेशे च देवेशि पुत्रकन्याविवर्जितः ॥
तस्य पत्नी पुनर्देवि या स्थिता पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥
विवाहिता च सा देवि व्याधियुक्ता ज्वरातुरा ॥
अस्य शान्तिं वरारोहे शृणु मे परमेश्वरि ॥ ८ ॥

बांधवोंका आजीवन करता था ॥ २ ॥ और तिसका मित्र एक द्विज दो लक्ष सुवर्ण तिसको देके विदेश चला गया तब तिसको बहुत दिन चुके ॥ ३ ॥ फिर हे प्रिये ! आके अपना द्रव्य मांगा तब आधा द्रव्य पाया आधा द्रव्य मालाकारने खर्च दिया ॥ ४ ॥ ऐसे हे विशालाक्षि ! काल व्यतीत होनेपर मालाकारका मृत्यु हुआ अयोध्यामें मरनेसे तिसका स्वर्गवास हुआ ॥ ५ ॥ हे वरारोहे ! लक्ष वर्षोंतक स्वर्गके फलको भोग पुण्य क्षीण होनेपर फिर मनुष्यजन्म हुआ ॥ ६ ॥ हे देवेशि ! मध्यदेशमें पुत्र तथा कन्यासे रहित होता भया और हे देवि ! तिसकी स्त्री जो पूर्वजन्ममें थी वही होती भई ॥ ७ ॥ हे देवि ! विवाहतेही तिसकी स्त्री व्याधियुक्त ज्वरसे पीडित होती भई अब हे परमेश्वरि ! हे वरारोहे ! इसकी

षडङ्गं जापयेत् प्राज्ञैः शिवपूजनपूर्वकम् ॥
षडक्षरेण मन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ ९ ॥
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥
श्रवणं मासमेकं तु चण्डिकाचारितत्रयम् ॥ १० ॥
ततः षडंशं देवेशि ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥
ततो गां कपिलां दद्यात्तिलधेनुं सुपूजिताम् ॥११॥
अश्वं दद्याद्विशालाक्षि महिषीं दुग्धसंयुताम् ॥
सुवर्णस्य कृतं वृक्षं फलपुष्पसमन्वितम् ॥ १२ ॥
दद्याद्दशपलं देवि ततः पुत्रः प्रजायते ॥
मृतवत्सा च या नारी काकवन्ध्या च रोगिणी ॥१३॥
सर्वासां वाञ्छितं कार्यं जायते नात्र संशयः ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० पूर्वाषाढानक्षत्रस्य चतुर्थ-
चरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥

शांतिको तू श्रवण कर ॥ ८ ॥ हे वरानने ! पंडितोंसे षडंगका जप करावे शिवपूजनपूर्वक और षडाक्षरमंत्रका एक लक्ष जप करावे ॥ ९ ॥ और तिसका दशांश हवन तिसका दशांश मार्जन तिसका दशांश तर्पण करावे और एक मासपर्यंत चंडिकाके तीनों चरित्रोंका पाठ श्रवण करे ॥ १० ॥ हे देवेशि ! अपने द्रव्यका छठा भाग दान करे फिर गौका दान तथा तिलधेनुका दान पूजन करके दान देवे ॥११॥ हे विशालाक्षि ! घोडेका दान वा दुग्धयुक्त महिषीका दान देवे और फलपुष्पयुक्त सुवर्णका एक वृक्ष बनवावे ॥१२॥ हे देवि ! दश पलका बनवाके दान देवे इससे पुत्रकी प्राप्ति होवे और जो मृतवत्सा काकवंध्या स्त्री है रोगिणी है ॥१३॥ ऐसी

अथ चतुरशीतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

श्वेतपर्वे महातीर्थे रामपुर्यां वरानने ॥
कान्यकुब्जोऽवसद्विप्रो व्यापारकरणे रतः ॥ १ ॥
अश्वादिकं वरारोहे वृषचर्माजिनाम्बरम् ॥
प्रत्यहं गृह्यते देवि विक्रयं क्रियते सदा ॥ २ ॥
द्यूतवेश्यारतो नित्यं परस्त्रीगमनं तथा ॥
प्राकरोच्च सुरापानं गुरुदेवापमानकृत् ॥ ३ ॥
एवं बहुगते काले मरणं प्रबभूव ह ॥
यमदूतैर्महाघोरे लब्ध्वा क्षिप्तः सुदारुणे ॥ ४ ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥
नरकान्निःसृतो देवि वानरस्य गतिं गतः ॥ ५ ॥

मनोरथकी सिद्धिको प्राप्त होती है इसमें संशय नहीं ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पूर्वाषाढानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥

शिवजी कहते हैं–हे वरानने ! श्वेतपर्व नामवाले महातीर्थपर रामपुरीमें कान्यकुब्ज विप्र व्यापारकर्ममें रत वास करता भया ॥ १ ॥ हे वरारोहे ! हे देवि ! वह घोडा आदिको वा वृषादिके चर्मको दिन दिनके प्रति बेचा करता था ॥ २ ॥ और द्यूतकर्म (जूवा), वेश्यासंग, परस्त्रीगमन, दारूका पान इत्यादि कर्म करनेवाला तथा गुरु और देवताका अपमान किया करता था ॥ ३ ॥ ऐसे बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिसका मृत्यु हुआ यमराजके दूतोंने आकर पाप दारुण संज्ञक नरकमें डाला ॥ ४ ॥ हे देवि ! साठ हजार वर्षों-

ततो रासभयोन्यां वै तुरगस्य ततोऽगमत् ॥
मानुषत्वं ततो लेभे पूर्वजन्मफलाच्च सः ॥ ६ ॥
धनधान्यसमायुक्तो रोगयुक्तोऽप्यपुत्रकः ॥
कदाचिद्दैवयोगेन पुत्रो भवति भामिनि ॥ ७ ॥
मरणं तस्य वै शीघ्रं ततः कन्या प्रजायते ॥
अस्य शान्तिं शृणुष्वादौ यथा पापं निवर्तते ॥ ८ ॥
गृहवित्तषडंशं च पुण्यकार्ये च कारयेत् ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि कनिष्ठं भ्रातरं निजम् ॥ ९ ॥
रात्रौ खड्गेन हतवान् तत्पापाच्च सुतक्षयः ॥
गायत्रीमूलमंत्रेण पञ्चलक्षं वरानने ॥ १० ॥
जपं वै कारयेत्प्राज्ञैर्नित्यं गोविन्दकीर्तनम् ॥
होमं वै कारयेत्कान्ते कुण्डे षट्कोणसंयुते ॥ ११ ॥

तक नरकके दुःखको भोग फिर तहांसे निकस वानरकी योनिको प्राप्त हुआ ॥५॥ फिर गधेकी योनिको प्राप्त होके घोडेकी योनिको प्राप्त होता भया फिर पहिले जन्मके भोगसे मनुष्ययोनिको प्राप्त हुआ ॥ ६ ॥ हे भामिनि ! धनधान्यादिसे युक्त तथा रोगसे युक्त होता भया और कभी दैवयोगसे पुत्रकीभी प्राप्ति होती भई ॥ ७ ॥ तो तिसका मरण शीघ्रही हुआ और कन्याकी प्राप्ति होती भई अब तिसकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर ॥ ८ ॥ हे देवेशि ! अपने घरके द्रव्यमेंसे छठा भाग दान करके देवे तिसने पहिले जन्ममें अपने छोटे भाईको॥९॥खड्गसे मारा । हे वरानने ! तिस पापसे पुत्र नष्ट हुए । गायत्रीके मूलमंत्रका पांच लक्ष जप करावे ॥ १०॥ हे कान्ते ! नित्य गोविंदका कीर्तन करे षट्कोणकुंडके विषैं हवन

पायसेन विशालाक्षि तिलसर्पिर्युतेन च ॥
दशवर्णां ततो दद्याद्ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥ १२ ॥
भूमिदानं ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ॥
भ्रातुश्चैवाऽकृतिं कृत्वा रौप्येणैव वरानने ॥ १३ ॥
पलसप्तप्रमाणेन पूजां कृत्वा प्रसन्नधीः ॥
देवदेव महादेव चर्मभस्मविभूषण ॥ १४ ॥
पूर्वजन्मनि देवेश भ्रातृनाशः कृतो मया ॥
तत्पापं क्षम्यतां देव प्रपद्ये शरणं तव ॥ १५ ॥
प्रतिमां पूजितां देवि मन्त्रेणानेन वै शिवे ॥
दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय द्विजात्मने ॥ १६ ॥
ततो वै भोजयेद्भक्त्या ब्राह्मणान्वेदपारगान् ॥
एकाधिकशतं देवि पायसैर्मोदकेन च ॥ १७ ॥

करवावे ॥ ११ ॥ हे विशालाक्षि ! घृत, तिल, पायस अर्थात् खीर इनसे हवन करावा और दश वर्णवाली गौका दान देवे ॥ १२ ॥ हे वरानने ! और भूमिका दान देवे तथा शय्याका दान देवे और चांदीकी भाईकी मूर्ति बनवावे ॥ १३ ॥ सात पल प्रमाणसे युक्त और प्रसन्न बुद्धिवाला होके पूजन कर हाथको जोड ऐसे कहे। हे देवदेव ! हे महादेव ! हे चर्मभस्मविभूषण ! ॥ १४ ॥ हे देवेश ! पहिले जन्ममें मैंने भाईका वध किया। हे देव ! तिस पापकी शांति कर तुम्हारी शरण मैं प्राप्त हुआ हूं ॥ १५ ॥ हे देवि ! हे शिवे ! इस मंत्रसे प्रतिमाका पूजन कर वेदके पढे हुए ब्राह्मणको देवे ॥ १६ ॥ फिर भक्तियुक्त होके वेदके पार करनेवाले एक सौ एक (१०१) ब्राह्मणोंको पायस मोदक अर्थात् खीर लड्डुवा

एवं कृत्वा वरारोहे पूर्वपापस्य संक्षयः ॥
वन्ध्यत्वं प्रशमं याति पुत्रः सत्यं प्रजायते ॥ १८ ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा सुपुत्रिणी ॥
व्याधयः संक्षयं यान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥१९॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० उत्तराषाढानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥८४॥

अथ पञ्चाशीतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

सकेश्वरपुरे देव्यवात्सीच्चैको द्विजो वरः ॥
म्लेच्छवाणीं वदन्नित्यं म्लेच्छसेवारतः सदा ॥ १ ॥
अतिष्ठन् म्लेच्छनिकटे म्लेच्छविद्यासु पण्डितः ॥
मात्स्यं मांसं च मद्यं च भोजनं चाकरोत्सदा ॥ २ ॥

आदि भोजन करावे ॥ १७ ॥ हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे पहिले किये पाप नष्ट होवें वन्ध्यापनेकी शांति और पुत्रकी प्राप्ति होती है ॥ १८ ॥ काकवन्ध्या मृतवत्साभी उत्तम पुत्रको प्राप्त होवे, सर्व व्याधि नष्ट होवें इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तरा० प्र० चरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥

शिवजी कहते हैं—हे देवि ! सकेश्वरपुरमें एक श्रेष्ठ ब्राह्मण होता भया म्लेच्छवाणी सदा कहता और म्लेच्छोंहीकी सेवा करता था ॥ १ ॥ और म्लेच्छोंके समीप रहनेसे म्लेच्छविद्याहीमें रत था मत्स्यमांसका भक्षण मदिराका पान वा भोजन किया करता था

एवं सर्वं वयो जातं धनं बहु सुसंचितम् ॥
तद्धनं भूमिमध्ये हि स्थापितं तु गृहे शुभे ॥ ३ ॥
एकस्मिन्समये देवि भ्रातुः पुत्रः समागतः ॥
रत्नव्यापारकरणे स दक्षश्चतुरस्तथा ॥ ४ ॥
ततो गेहस्थितो नित्यं रत्नं बहु सुसंचितम् ॥
रत्नलोभेन भो देवि रात्रौ क्षुरिकया तदा ॥ ५ ॥
कृत्वा शिरच्छेदनं च सुप्तं निशि ममार तम् ॥
तत्सर्वं भूमिमध्ये तु स्थापितं रत्नसंचयम् ॥ ६ ॥
भ्रातृजस्य धनं गृह्य व्ययं कृत्वा दिने दिने ॥
ततो बहुदिने याते द्विजः पूर्वं मृतः स च ॥ ७ ॥
पश्चात्पत्नी मृता तस्य तौ गतौ नरकार्णवे ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि महाकष्टेन पीडितौ ॥ ८ ॥

॥ २ ॥ ऐसे हे शुभे ! सब अवस्था व्यतीत होनेपर धनके संचयसे युक्त था वह धन तिसने भूमिमध्यमें अपने घरमें स्थापित किया ॥ ३ ॥ हे देवि ! एक समयमें तिसके भाईका पुत्र आके प्राप्त हुआ और वह रत्नोंके व्यापार करनेमें बहुतही चतुर था ॥४॥ हे देवि ! तिस घरमें रत्न बहुतसा संचित था रत्नोंके लोभकरके रात्रीमें तिसका छुरीसे ॥ ५ ॥ शिरश्छेदन कर सोते हुएको मारता भया और जितना उसका धन था उसको भूमिके मध्यमें गाडता भया ॥६॥ भाईके धनको ग्रहण कर दिन दिनके प्रति खर्च किया फिर वह द्विज पहिले मर गया ॥ ७ ॥ पीछे तिसकी पत्नी मर गई तब वे दोनों नरकरूपी अर्णव (समुद्र) में प्राप्त हुए साठ हजार वर्षोंतक महाकष्टको प्राप्त होते भये ॥ ८ ॥

नरकान्निःसृतौ द्वौ तु गजयोनी बभूवतुः ॥
पुनः कच्छपयोनी वै गोधायोनी बभूवतुः ॥ ९ ॥
एवं योनित्रयं भुक्त्वा सरय्वा उत्तरे तटे ॥
मानुषत्वं ततो लेभे भाग्यवान् साधुसंज्ञितः ॥१०॥
सुशीलः सुमतिर्दक्षः स्वल्पविद्यायुतो नरः ॥
अपुत्रो रोगवान् देवि भूपतिर्नरपूजितः ॥ ११ ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि भ्रातृपुत्रवधः कृतः ॥
निशायां च पुरा देवि तेन दोषेण नो सुतः ॥ १२ ॥
म्लेच्छस्य सेवनाद्देवि म्लेच्छस्याशुचिभाषणात् ॥
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसंभवः ॥ १३ ॥
यत्तु दानं कृतं पूर्वं दत्ता शय्या सुरेश्वरि ॥
तत्फलेन महादेवि धनाढ्यत्वमजायत ॥ १४ ॥

और नरकसे निकस दोनों हाथीकी योनिको प्राप्त होते भये फिर कछुएकी योनिको प्राप्त होके गोधकी योनिको प्राप्त भये ॥ ९ ॥ ऐसे तीन योनि भोगके फिर सरयूके उत्तर किनारेपर मनुष्ययोनिको प्राप्त होते भये भाग्यवान् साधु नामवाले ॥ १० ॥ हे देवि ! सुंदर शील स्वभाव, शुद्धमति थोडी विद्यासे युक्त पुत्रसे रहित भूपति अर्थात् राजा नरोंसे पूजित ऐसा होता भया ॥ ११ ॥ हे देवेशि ! हे देवि ! पहिले जन्ममें जिसने रात्रिसमयमें, भाईका वध किया तिस दोषसे इसके पुत्र नहीं भया ॥ १२ ॥ हे देवि ! म्लेच्छके सेवन करनेसे तथा म्लेच्छोंसे संभाषण करनेसे शरीरमें रोगकी प्राप्ति हुई ॥ १३ ॥ और हे सुरेश्वरि ! हे महादेवि ! ! पूर्व जन्ममें शय्या दान करनेसे धनाढ्य होता भया ॥ १४ ॥

अनाचारः कृतः पूर्वं पुत्रदारयुतेन च ॥
तेन पापेन भो देवि नरः कन्याप्रजो भवेत् ॥ १५ ॥
अथ शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षं वरानने ॥ १६ ॥
जपं च कारयेद्देवि षडंशं दानमाचरेत् ॥
होमं च कारयेत्कान्ते कुण्डे चैव सुसंस्कृते ॥ १७ ॥
दशांशं तर्पणं देवि मार्जनं तद्दशांशतः ॥
भ्रातृपुत्रस्य प्रतिमां कारयेदद्रिनन्दिनि ॥ १८ ॥
पलं दश सुवर्णस्य विधिवत्पूजयेत्ततः ॥
मन्त्रेणानेन देवेशि गन्धधूपादिभिस्तथा ॥ १९ ॥
गणाधिप सुराध्यक्ष सर्वसिद्धिप्रदायक ॥
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥ २० ॥

और हे देवि ! पुत्र दारासहित अनाचारमें रत रहनेसे कन्याकी संतान हुई ॥ १५ ॥ अब हे देवि ! हे वरानने ! ! हे सुशोभने ! ! ! तिसकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर गायत्रीके मूलमंत्रका पांच लक्ष जप ॥ १६ ॥ हे देवि ! करवावे अपने घरके द्रव्यसे छठा भाग दान करके देवे और हवन करवावे शुद्ध कुंड बनाके ॥ १७ ॥ हे देवि ! और तिसका दशांश तर्पण तिसका दशांश मार्जन करावे । हे अद्रिनंदिनि ! हे पार्वति ! एक भाईके पुत्रकी मूर्ति बनवावे ॥ १८ ॥ हे देवेशि ! दश पल सुवर्णकी प्रतिमा बनाके विधिवत् पूजन करे गंधधूपादिसे इस मंत्रकरके पूजे ॥ १९ ॥ हाथ जोड ऐसे कहे कि, हे गणाधिप ! हे सुराध्यक्ष ! हे सर्वसिद्धिप्रदायक ! हे दयानिधे ! मेरे पहिले किये पापकी शांति करो ॥ २० ॥

रौप्यपात्रे स्थितां तां तु प्रतिमां प्रार्थयेत्ततः ॥
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा पापं मम पुरा कृतम् ॥ २१ ॥
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रपद्ये शरणं तव ॥
ॐ गणपतये नमः ॐ लक्ष्म्यै० ॐ सूर्याय०
ॐ शिवाय० ॐ विश्वयोनये नमः ॐ गरुडाय०
ॐ नन्दिकेश्वराय नमः ॥
एभिर्मन्त्रैस्तु सर्वाणि वस्तूनि दापयेत्ततः ॥
कलशं पूजयेद्देवि गणाधिपस्वरूपिणम् ॥ २२ ॥
गन्धपुष्पैश्च ताम्बूलैर्वस्त्रैर्नानाविधैरपि ॥
प्रतिमां पूजितां देवि ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ २३ ॥
दशवर्णास्ततो दद्याद्वृषमेकं वरानने ॥
पञ्चपात्रं ततो दद्याद्ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥ २४ ॥
रविवारेण संयुक्तसप्तम्यां विधिपूर्वकम् ॥
उपोषणं नियमतः पत्न्या सह वरानने ॥ २५ ॥

और रूपेके पात्रमें तिस मूर्तिको स्थापन कर प्रार्थना करे अज्ञानसे अथवा प्रमादसे मैंने पहिले पाप किया ॥ २१ ॥ हे देव! तिसको तुम शांत करो तुम्हारी शरणमें प्राप्त हुआ हूं। ॐ गणपतये नमः १ ॐ लक्ष्म्यै नमः २ ॐ सूर्याय० ३ ॐ शिवाय० ४ ॐ विश्वयोनये नमः ५ ॐ गरुडाय० ६ ॐ नन्दिकेश्वराय० ७। इन मंत्रोंसे सब वस्तु निवेदन कर हे देवि! फिर गणाधिपरूपी कलशका पूजन करे ॥२२॥ हे देवि! गंध, पुष्प, तांबूल तथा नाना प्रकारके वस्त्रादिसे पूजन की हुई प्रतिमाको ब्राह्मणके अर्थ दे देवे ॥२३॥ हे वरानने! दश वर्णोंवाली गौ और एक बैल तथा पंचपात्र ब्राह्मणको देवे पीछे ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥२४॥ हे वरानने!

सप्तवत्सरपर्यन्तं प्रकुर्य्याद्वै सुरेश्वरि ॥
ततस्तूद्यापनं कुर्याद्यथाशक्ति सदाशिवे ॥ २६ ॥
दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय तपस्विने ॥
कूष्माण्डं नारिकेलं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥ २७ ॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये ॥
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ २८ ॥
सर्वे रोगाः क्षयं यान्ति नीहारा भास्कराद्यथा ॥२९॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे उत्तराषाढानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्राय० नाम पञ्चाशीतितमोऽध्यायः ॥८५॥

रविवारसे युक्त सप्तमीके दिन विधिपूर्वक व्रत करे नियमसे स्त्रीसहित ॥ २५ ॥ हे सुरेश्वरि ! सात वर्षपर्यंत करे । हे सदाशिवे ! फिर उद्यापन करे शक्तिके अनुसार दक्षिणा देवे ॥२६॥ वेदको पढे हुए तपस्वी उत्तम ब्राह्मणको देवे और पंचरत्नोंसे युक्त पेठा और नारियल ॥ २७ ॥ गंगाजीके मध्यमें देवे पूर्वपापकी शुद्धिके लिये ऐसे हे वरारोहे ! जलदीही पुत्रकी प्राप्ति होवे ॥ २८ ॥ और सब रोग नाशको प्राप्त होवें सूर्यके तेजसे जैसे नीहार अर्थात् ओसके कणके (बर्फ) नष्ट होते हैं तैसे ॥ २९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां उत्तराषाढा० द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पंचाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥

अथ षडशीतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

मध्यदेशे महादेवि ब्राह्मणो वेदपारगः ॥
जयदेवाभिधो विप्रो विख्यातश्चातिशीलवान् ॥ १ ॥
तस्य भार्या शीलवती सुशीला शीलरूपिणी ॥
तस्याः पुत्रत्रयं जातं गुणज्ञं वेदपारगम् ॥ २ ॥
पुत्राः सर्वे गुणज्ञाश्च वेदवेदाङ्गपारगाः ॥
ज्येष्ठपुत्रस्य चोद्वाहे स्वसा तस्य समागता ॥ ३ ॥
भगिन्याश्चादरं कृत्वा बहुमानेन पार्वति ॥
विवाहे च समाप्ते तु ज्ञातयः स्वेषु वेश्मसु ॥ ४ ॥
गताः सर्वे विशालाक्ष्ययाचयद्भगिनी च सा ॥
ताटङ्कं स्वर्णरत्नाढ्यं भ्रातृपत्नी प्रकोपिता ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं–हे महादेवि ! मध्यदेशमें जयदेव नाम करके विख्यात वेदोंको जाननेवाला अतिशीलस्वभाववाला ब्राह्मण होता भया ॥ १ ॥ तिसकी स्त्री शीलस्वभाववाली सुशीला नाम शीलरूपवाली थी तिसके तीन पुत्र गुणी और वेदोंके जाननेवाले होते भये ॥२॥ संपूर्ण पुत्र गुणज्ञ और वेदवेदांगोंके पार जाननेवाले थे तिन्होंमें ज्येष्ठपुत्रके विवाहमें तिस ब्राह्मणकी भगिनी अर्थात् बहन आई थी ॥ ३ ॥ हे पार्वति ! तिस ब्राह्मणने बहुत सन्मान करके बहनका आदर किया फिर विवाह समाप्त हुए पीछे तिसके भाई बांधव सब अपने २ घरोंको गये ॥ ४ ॥ हे विशालनेत्रोंवाली ! तब वह ब्राह्मणकी बहन अपने भाईसे सुवर्ण रत्नोंकरके जडे हुए ताटंकनाम आभूषणको मांगती भई तब उसकी स्त्रीने कहा कि

श्रुत्वेर्ष्यया सवत्सा तु तदा याता स्ववेश्मनि ॥
स्त्रीस्वभावाच्च देवेशि मृता सा भगिनी गृहे ॥ ६ ॥
तदुद्देशेन देवेशि शरीरं निशि सात्यजत् ॥
ततो बहुदिने याते तस्य मृत्युरभूत्तदा ॥ ७ ॥
पत्नी तस्य सती जाता सत्यलोकमभूत्तदा ॥
वर्षं कोटित्रयं देवि सत्यलोकेऽवसत्पुनः ॥ ८ ॥
मर्त्यलोके मनुष्यत्वं लब्धं पुण्यक्षये सति ॥
धनधान्यसमायुक्तो विद्यावान् शास्त्रपारगः ॥ ९ ॥
कृतं तेन पुरा पापं भगिन्या दारकारणात् ॥
पुत्रो न जायते देवि कन्योत्पन्ना विनश्यति ॥ १० ॥
शरीरे सततं दुःखं मध्ये तस्य प्रजायते ॥
काकवन्ध्या भवेद्भार्या मृतवत्सा सुदुःखिता ॥ ११ ॥

नहीं देवें ऐसे कहनेसे भाईकी स्त्रीसे प्रकोपित होके ॥ ५ ॥ और ईर्षाके वचनको सुनके अपने पुत्रसमेत तबही अपने घरको चली आई और हे देवेशि ! स्त्रीस्वभावसे वह अपने घरमें आके मर गई ॥ ६ ॥ हे देवेशि ! तिस क्रोधसे वह शरीरको रात्रिमें त्याग करती भई पीछे बहुत दिन व्यतीत होनेपर तिस ब्राह्मणकी-भी मृत्यु हो गई ॥ ७ ॥ तब उसकी स्त्री सती हो गई तो फिर उसे सत्यलोककी प्राप्ति हुई । हे देवि ! वह फिर तीन कोटि वर्ष सत्यलोकमें वास करता भया ॥ ८ ॥ और पुण्य पूरे होनेसे पीछे मृत्युलोकमें मनुष्यशरीर प्राप्त हुआ और धनधान्यकरके युक्त विद्याकरके युक्त शास्त्रोंको जाननेवाला अर्थात् पारंगत हुआ ॥९॥ तिसने स्त्रीके वश होके बहनका पाप किया । हे देवि ! इस कारणसे पुत्र नहीं जन्मता और कन्या जन्मभर नष्ट होती है ॥ १० ॥ तिसके शरीरमें सदा दुःख रहता है और तिसकी स्त्री काकवन्ध्या

अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि तत्सर्वं शृणु पार्वति ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १२ ॥
वापीकूपतडागानां जीर्णोद्धारं प्रयत्नतः ॥
वाटिकां मार्गमध्ये तु सहितां शीतवारिणा ॥ १३ ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां जपं वै कारयेत्ततः ॥
लक्षद्वयं विशालाक्षि हवनं तद्दशांशतः ॥ १४ ॥
तर्पणं मार्जनं तद्वद्गोदानं विधिवत्ततः ॥
एवं कृते वरारोहे तस्य पुत्रः प्रजायते ॥ १५ ॥
गुणज्ञः सर्ववस्तूनां साधूनां संमतस्तथा ॥
स्वर्णदानं विशालाक्षि पलपञ्चमितं तथा ॥ १६ ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्यात्पूजयेद्युवतिं ततः ॥
वस्त्रालंकारसिन्दूरैर्गन्धाद्यैः सुमनोहरैः ॥ १७ ॥

अर्थात् एकही संतान जन्मनेवाली होती है अथवा संतान हो होके मरती है और दुःखी रहती है ॥ ११ ॥ हे पार्वति ! अब इसकी शांतिको कहूंगा सो तू संपूर्ण सुन घरमें जो धन हो उसके छठे भागका पुण्य करावे ॥ १२ ॥ बावडी, कुआ, तालाव इन्होंका जीर्णोद्धार अर्थात् खंडित होते हों उनको जतनकरके समरा देना और मार्गमें गमन करनेवाले मनुष्योंको हित करनेवाली शीतलजलसे युक्त बगीचा करावे ॥ १३ ॥ हे विशालाक्षि ! गायत्री और जातवेद० मंत्रकरके दो लक्ष जप करावे पीछे तिसके दशांशका हवन करावे ॥ १४ ॥ तर्पण और मार्जन तैसेही गोदान विधिपूर्वक करावे । हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे तिसके पुत्र उत्पन्न होता है ॥ १५ ॥ वह पुत्र संपूर्ण वस्तुओंके गुणको जाननेवाला और सज्जनोंमें माना हुआ होता है । हे विशालाक्षि ! पांच पल सुवर्णका दान ॥ १६ ॥ ब्राह्मणके अर्थ देवे और पीछे जवान स्त्रीका

ताटङ्कैर्मुद्रिकाभिश्च गन्धमाल्यैस्तथैव च ॥
सर्वं पापं क्षयं याति व्याधिनाशो भवेत् ध्रुवम्॥१८॥
ब्राह्मणीं पार्वतीरूपां ब्राह्मणं शिवरूपिणम् ॥
भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्मोदकैः शतसंख्यकैः ॥ १९ ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥
कन्यकाजननी या तु पुत्रवत्यपि जायते ॥ २० ॥
एवं न जायते चेत्तु सप्तजन्मस्वपुत्रकः ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० उत्तराषाढानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षडशीतितमोऽध्यायः ॥८६॥

पूजन करे । वस्त्र, आभूषण, सिंदूर, गंध आदि मनोहर वस्तुओंसे ॥ १७ ॥ ताटंकआभूषणोंसे मुद्रिकाओंसे गंधमालाओंसे पूजन करे तो संपूर्ण पापोंका नाश होवे और व्याधिभी नष्ट होवे ॥१८॥ ब्राह्मणीको पार्वतीके रूपवाली समझे ब्राह्मणको शिवरूप समझके लड्डुओंसे भोजन करावे अन्य औरभी सैकडों विधिके पदार्थोंसे तृप्त करे ॥ १९ ॥ ऐसे करनेसे काकवंध्या स्त्रीके पुत्र जन्मता है मृतवत्साभी पुत्रवाली होती है और कन्या जन्मनेवालीभी पुत्रवाली होती है ॥ २० ॥ ऐसे नहीं करनेसे सात जन्ममेंभी अपुत्र रहता है ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटी० पार्वतीहरसं० उत्तराषाढनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षडशीतितमोऽध्यायः ॥८६॥

अथ सप्ताशीतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

गुर्जरे नगरे देवि न्यवसञ्ज्ञानवान् द्विजः ॥
बलभद्रः समाख्यातो वेदानां पाठकः सुधीः ॥ १ ॥
ऋग्वेदं च यजुर्वेदं सामवेदमथर्वणम् ॥
पठितं चैव कुरुते चतुर्वेदी द्विजोत्तमः ॥ २ ॥
एकस्मिन् दिवसे देवि देशे कश्चिन्मृतः खलु ॥
भोजनं तेन संस्कारं विना तत्र कृतं प्रिये ॥ ३ ॥
म्लेच्छद्रव्यं गृहीतं च भुक्तं पुत्रयुतेन च ॥
पत्न्या सह वरारोहे ततो वृद्धवयो गतः ॥ ४ ॥
मरणं तस्य वै जातं शंकेश्वरपुरे यदा ॥
यमाज्ञया तदा देवि यमदूतैरितस्ततः ॥५॥
नरके पतितं पश्चान्मर्त्यलोके ततोऽगमत् ॥
कुक्कुटत्वं विशालाक्षि काकं पारावतं ततः ॥ ६ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! गुर्जरनगरमें एक ज्ञानवान् ब्राह्मण वास करता था बलभद्रनाम करके विख्यात वेदोंका पाठ करनेवाला सुंदर बुद्धिवाला ॥ १ ॥ ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वणवेद इन सबका पाठ करता था ऐसा वह चार वेदयुक्त ब्राह्मणोंमें उत्तम हुआ ॥ २ ॥ हे देवि ! एक दिन उस देशमें कोई मनुष्य मृत्युको प्राप्त हुआ वहां संस्कार किये बिना तिस ब्राह्मणने हे प्रिये ! भोजन कर लिया ॥३॥ म्लेच्छके धनको ले लिया और पुत्रकरके युक्त भोगता भया । हे वरारोहे ! पीछे वृद्ध अवस्थाको प्राप्त हुआ ॥४॥ फिर शंकेश्वर पुरमें वह मृत्युको प्राप्त हुआ । हे देवि ! तब धर्म-

मानुषत्वं पुनर्लेभे शुभे देवि कुले महत् ॥
स पण्डितो महाविद्वान् ज्ञातिधर्मविचक्षणः ॥ ७ ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि म्लेच्छान्नं भोजनं कृतम् ॥
तेन पापेन भो देवि पुत्रः कन्या न जायते ॥ ८ ॥
प्रेतान्नं भोजनं कृत्वा संस्कारो न कृतः पुरा ॥
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसंभवः ॥ ९ ॥
अस्य शान्तिं शृणुष्वादौ पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय प्रकल्पयेत् ॥ १० ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं ततः ॥
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥ ११॥
दशवर्णां ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ॥
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥ १२ ॥

राजकी आज्ञासे धर्मराजके दूतोंने जहां तहां नरकोंमें गेरा फिर मृत्युलोकमें आता भया । हे विशालाक्षि ! कुक्कुट अर्थात् मुरगा, काक, कबूतर इन शरीरोंको प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥ ६ ॥ हे देवि ! पीछे मनुष्यशरीरको प्राप्त हुआ बडे सुंदर कुलमें जन्म लेके वह महाविद्वान् पण्डित और ज्ञातिधर्मको जाननेवाला है ॥ ७ ॥ हे देवेशि ! पहिले जन्ममें तिसने म्लेच्छका अन्न भोजन किया । हे देवि ! तिस पापसे पुत्र कन्याका जन्म नहीं होता ॥ ८ ॥ और पहिले जन्ममें प्रेतके अन्नको भोजन करके संस्कार नहीं किया । हे देवि ! तिस पापसे शरीरमें रोग सदा रहता है ॥ ९ ॥ अब पहिले पूर्वपापको नाश करनेवाली इसकी शांतिको सुनो । घरमें जो हो उसके अष्टम भागको ब्राह्मणको दे देवे ॥ १० ॥ और गायत्रीके मूलमंत्रका लक्ष जप करावे और तिसके दशांशका हवन तथा तर्पण और मार्जन करावे ॥ ११ ॥ दशवर्णकी गौओंका दान

गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापप्रणाशनम् ॥
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ १३ ॥
व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम्॥१४
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० उत्तराषाढानक्षत्रस्य चतुर्थ-
चरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥

अथाष्टाशीतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

पवनस्य महादेशे मारुते नगरे शुभे ॥
गौतमो नाम विख्यातो ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ १ ॥
तस्य भार्या विशालाक्षि मालिनी मातृपालिनी ॥
धनं च बहु संगृह्य म्लेच्छसेवारतो हि सः ॥ २ ॥

तथा विशेषकरके शय्याका दान देवे । कोहला, नारियल इसमें पंचरत्न युक्तकरके ॥ १२ ॥ गंगाजीके मध्यमें दान करनेसे पूर्वपापोंका नाश होता है । हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे शीघ्रही पुत्र जन्मता है ॥ १३ ॥ और व्याधि नष्ट होती है काकवंध्या भी पुत्रको प्राप्त होती है ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराषाढानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥

शिवजी कहते हैं-पवनके बडे देशमें सुंदर मारुत नगरमें गौतमनामसे विख्यात वेदको जाननेवाला ब्राह्मण होता भया ॥ १ ॥ हे विशालाक्षि ! तिसकी स्त्री मालिनी नामवाली माताकी टहल करनेवाली थी वह ब्राह्मण धनको लेके म्लेच्छोंकी सेवामें रत रहता

तस्य मित्रो द्विजः कश्चित् तपस्वी सत्यवाक् शुचिः॥
आगतस्तस्य निकटे प्रेम्णा तत्र तपोऽकरोत् ॥ ३ ॥
अब्दे चैके ततो जाते पुनः काश्यां गतोऽपि सः ॥
स्वर्णरत्नं महादेवि गौतमाय समर्पितम् ॥ ४ ॥
रक्षार्थं तेन द्रव्यं च गृहीतं गौतमेन च ॥
वाराणस्यां ततो गत्वा तपस्वी प्राणमत्यजत् ॥ ५ ॥
गौतमेन तु स्वद्रव्यं स्थापितं भूमिमध्यके ॥
तद्द्रव्यं ब्राह्मणस्यैव पुत्रदारयुतेन च ॥ ६ ॥
भक्षितं तेन विक्रीय बहुवर्षे गते शिवे ॥
गौतमस्य ततो मृत्युर्वृद्धे जाते वरानने ॥ ७ ॥
गन्धर्वस्य ततो लोकं विंशतिर्वै सहस्रकम् ॥
तेन भुक्तं विशालाक्षि गन्धर्वैः सह किन्नरैः ॥ ८ ॥

था ॥ २ ॥ तिसका मित्र कोई ब्राह्मण तपस्वी सत्य बोलनेवाला तथा पवित्र था सो तिसके समीप आके प्रेमसे तहां तप करने लगा ॥ ३ ॥ एक वर्ष हुए पीछे फिर वह काशीको जाता भया । हे महादेवि ! सुवर्ण रत्न गौतमको समर्पण करके ॥ ४ ॥ कहा कि द्रव्यकी रक्षा करना तब गौतमने रक्षाके अर्थ वह द्रव्य ग्रहण किया फिर वह तपस्वी काशीमें जाके मर गया ॥ ५ ॥ और गौतमने अपना धन तो भूमिमें गाड दिया तिस ब्राह्मणके धनको स्त्रीपुत्रकरके युक्त भोजन करता भया ॥ ६ ॥ हे शिवे ! तिस स्वर्णरत्नको बेचके बहुत वर्ष व्यतीत किये पीछे वृद्ध हुए गौतमकी मृत्यु हुई ॥ ७ ॥ फिर हे विशालाक्षि ! बीस हजार वर्ष गंधर्वलोकको गंधर्वकिन्नरोंसे सहित भोगता भया ॥ ८ ॥

ततः पुण्यक्षये जाते हंसयोनिं ततोऽगमत् ॥
मृगयोनिं ततो भुक्त्वा मानुषत्वं ततोऽगमत् ॥ ९ ॥
स भाग्यवान् महाधीरः पुण्याचारे सदा मतिः ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि मित्रद्रव्यविनाशनम् ॥ १० ॥
अदत्तं यद्विशालाक्षि तेन पापेन तत्प्रिया ॥
वन्ध्या भवति वै नारी काकवन्ध्या च जायते ॥ ११ ॥
रोगयुक्तोऽभवद्देहो ज्वराश्च विविधास्तथा ॥
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि सुशोभने ॥ १२ ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
वापीकूपतडागानि जीर्णोद्धारं च कारयेत् ॥ १३ ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण दशायुतजपं ततः ॥
हवनं तद्दशांशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १४ ॥
गामेकां तरुणीं शुभ्रां कांस्यदोहां सवत्सकाम् ॥
सतीं सवस्त्रां विप्राय दद्याद्वेदविदे ततः ॥ १५ ॥

पुण्य पूरा होनेपर हंसयोनिमें जन्मा पीछे मृगयोनिमें जन्मा वह भोगके मनुष्यशरीरमें जन्मता भया ॥९॥ सो वह बडे भाग्यवाला महाधीर पुण्यकर्ममें सदा मति रखनेवाला है । हे देवेशि ! इसने पूर्वजन्ममें मित्रके धनका नाश किया ॥१०॥ हे विशालाक्षि ! मित्रका धन इसने नहीं दिया तिस पापसे इसकी स्त्री काकवन्ध्या हुई ॥ ११ ॥ हे देवि ! देह रोगकरके युक्त है नाना प्रकारके ज्वर रहते हैं अब इसकी शांतिको कहता हूं तू सुनो ॥ १२ ॥ घरके षडंश धनका पुण्य करावे । बावडी, कुवा, तालाव जीर्ण भये इनको बनवा देना ॥ १३ ॥ गायत्रीके मूलमंत्रका लक्ष जप करावे तिसके दशांशका हवन ऐसे पुण्यकर्म करावे ॥ १४ ॥ एक जवान गौ

ब्राह्मणान्भोजयेद्दत्त्वा यथाशक्त्या तु दक्षिणाम् ॥
ज्ञातिभिः सह भुञ्जीत ततो नृत्यं तु कारयेत्॥१६॥
पुराणश्रवणं देवि चण्डिकाचरणार्चनम् ॥
अन्नदानं च भो देवि घृतदानं विशेषतः ॥ १७ ॥
एवं कृते न संदेहो वंशवृद्धिर्भविष्यति ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति सुखानि विविधानि च॥१८॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसं० श्रवणनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८८ ॥

अथैकोननवतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

गान्धारदेशे वै शुभ्रे गान्धारस्य पुरे शुभे ॥
वसन्ति तत्र बहवो जनाः पुण्योपजीविनः ॥ १ ॥

सुंदररूपवाली सवत्सा कांसीके दोहन पात्रयुक्त सुंदर जरीबनी पीठवस्त्र उढाके वेदको जाननेवाले ब्राह्मणको दे देवे ॥ १५ ॥ दान देके ब्राह्मणोंको भोजन करावे और अपनी शक्तिके अनुसार दक्षिणा देवे और अपने भाइयोंके संग भोजन करे पीछे नृत्य करावे ॥ १६ ॥ हे देवि ! पुराणोंका श्रवण करे और देवीके चरणोंका पूजन करे । हे देवि ! अन्नका दान और घृतका दान विशेषकरके करावे ॥ १७॥ ऐसे करनेसे वंशकी वृद्धि होती है इसमें संदेह नहीं करना, रोग सब नष्ट होते हैं अनेक प्रकारके सुख प्राप्त होते हैं॥१८॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० श्रवणनक्षत्र० प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८८ ॥

शिवजी कहते हैं-सुंदर गांधार देशमें सुंदर गांधारका पुर है

तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येको लक्ष्मीवान् गुणवर्जितः ॥
यवनानां महन्मित्रं सार्द्धं म्लेच्छेन तिष्ठति ॥ २ ॥
ऊर्णादिकं वरारोहे विक्रयं कुरुते सदा ॥
म्लेच्छान्नं भुज्यते नित्यं म्लेच्छभार्याविहारकृत्॥३॥
एवं बहु वयो जातं ततो वै मरणं खलु ॥
यमदूतैर्महाघोरैर्नरकेऽत्यन्तदारुणे ॥ ४ ॥
निक्षिप्तं तेन वै देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥
भुक्तं सुदुःसहं कर्म विविधं नरके फलम् ॥ ५ ॥
नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिरभूत्पुरा ॥
रासभस्य ततो योनिमृक्षत्वेऽभूत्पुनः प्रिये ॥ ६ ॥
मानुषत्वं पुनर्लेभे मध्यदेशे सुरेश्वरि ॥
पूर्वजन्मनि म्लेच्छान्नं भुक्तं पुत्रेण वै शिवे ॥ ७ ॥

वहां पुण्योपजीवी जन अर्थात् पुण्यसे जीनेवाले जन वास करते हैं ॥ १ ॥ तिन्होंके मध्य एक लक्ष्मीवाला ब्राह्मण गुणहीन म्लेच्छोंका अतिमित्र म्लेच्छोंके संग स्थित रहता है ॥ २ ॥ हे वरारोहे ! ऊर्णा (ऊन) का वेंचना सदा करता था और नित्य म्लेच्छोंके अन्नको भोजन करता और म्लेच्छोंकी स्त्रियोंसे विहार करता था ॥ ३ ॥ ऐसे करते बहुत अवस्था व्यतीत हो गई वृद्ध होके पीछे मृत्युको प्राप्त हुआ तब धर्मराजके महाघोर दूतोंने दारुण नरकमें गेरा ॥ ४ ॥ तब वहां उसे साठ हजार वर्ष अपना दुःसह कर्म हे देवि ! नाना प्रकारके नरकोंका फल भोगा ॥ ५ ॥ हे देवि ! नरकसे निकलके भेडियेकी योनिमें जन्मा पीछे गधेकी योनिमें जन्मा फिर ऋक्षयोनिमें हे प्रिये ! जन्म लिया ॥ ६ ॥ हे सुरेश्वरि ! फिर मनुष्यशरीरको मध्यदेशमें प्राप्त हुआ । हे शिवे ! पूर्वजन्ममें

अतो वंशस्य विच्छेदो व्याधीनां चोद्भवस्तथा ॥
अस्य दोषस्य वै शान्ति शृणु मे परमेश्वरि ॥ ८ ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥
हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥ ९ ॥
सवृषं पञ्चगोदानं वस्त्रदानं विशेषतः ॥
सहस्रघटदानं च गोदानं च सुरेश्वरि ॥ १० ॥
एवं कृते न संदेहो वंशवृद्धिर्भविष्यति ॥
रोगा विनाशमायान्ति नात्र कार्या विचारणा ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० श्रवणनक्षत्रस्य द्वितीय-चरणप्राय० नामैकोननवतितमोऽध्यायः ॥ ८९ ॥

म्लेच्छोंका अन्न भोजन किया ॥ ७ ॥ इससे वंशका छेदन और व्याधियोंकी उत्पत्ति है । हे परमेश्वरि ! इस दोषकी शांतिको मुझसे सुन ॥ ८ ॥ हे वरानने ! गायत्रीमंत्रका लक्ष जप करावे तिसके दशांशका हवन, तर्पण, मार्जन करावे ॥ ९ ॥ हे सुरेश्वरि ! वृषभसहित पांच गौओंका दान तथा विशेषकरके वस्त्रोंका दान हजार घटोंका दान और गोदान ये सब करावे ॥ १० ॥ ऐसे करनेसे वंशकी वृद्धि होती है इसमें संदेह नहीं और रोग नष्ट होते हैं इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ ११ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहर० श्रवणनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोननवतितमोऽध्यायः ॥ ८९ ॥

अथ नवतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

काश्मीरनगरे देवि ब्राह्मणोऽध्यवसत्पुरा ॥
खण्डशर्मेति विख्यातो गङ्गाख्या स्त्री तु कर्कशा ॥१॥
पतिवाक्यं न साकार्षीद्विक्रयं कुरुते सदा ॥
घृततैलं च देवेशि दधि तक्रं पुनर्गुडम् ॥ २ ॥
अश्वं च वृषभं चैव चामरं धातुवस्तु च ॥
प्रत्यहं विक्रयं कर्त्री व्ययकर्त्री दिने दिने ॥ ३ ॥
एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ॥
मरणं तस्य वै जातं ब्राह्मणस्य तदा शिवे ॥ ४ ॥
धर्मराजाज्ञया दूतैर्नरके कर्दमे तथा ॥
निक्षिप्तः षष्टिसाहस्रं भुक्त्वा वै यातना तथा ॥ ५ ॥
नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिस्ततोऽभवत् ॥
रासभस्य पुनर्योनिर्मेषयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ६ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! काश्मीर नगरमें पहिले ब्राह्मण वास करता भया। वह खंडशर्मा नामकरके विख्यात था और गंगा नामकरके उसकी स्त्री बडी कर्कशा थी ॥ १ ॥ हे देवेशि ! वह पतिके वचनको नहीं करती । सदा घृत, तेल, दधि, तक्र तथा गुडको बेंचा करती ॥ २ ॥ घोडा, वृषभ, चमर, धातुमय वस्तु इन्होंको नित्य बेंचती थी ॥ ३ ॥ ऐसे संपूर्ण अवस्था व्यतीत हो गई तब वृद्ध होनेपर हे वरानने ! तिस ब्राह्मणका मरना होता भया ॥ ४ ॥ धर्मराजकी आज्ञासे दूतोंने कर्दमनामक नरकमें साठ हजार वर्षों-तक पटका वहां पीडाको भोगके ॥ ५ ॥ नरकसे निकस भेडकी

मानुषत्वं पुनर्लेभे मध्यदेशे वरानने ॥
धनधान्यसमायुक्तः पुत्रकन्याविवर्जितः ॥ ७ ॥
पुनर्विवाहिता सा तु पूर्वजन्मफलाच्छुभे ॥
शरीरे सततं रोगा वायोः संजायते शिवे ॥ ८ ॥
ब्राह्मणस्य स्वयं धर्मं यतस्त्यक्तं पुरा शुभे ॥
अतः पुत्रविहीनेयं मृतवत्सात्वमाप्नुयात् ॥ ९ ॥
अस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि सुशोभने ॥
गृहवित्तषडंशं च ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥ १० ॥
गायत्री चायुतं जप्त्वा मूलमन्त्रं शिवस्य तु ॥
षडक्षरं सप्रणवं लक्षमेकं वरानने ॥ ११ ॥
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥
ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्या हविषा पायसेन च ॥ १२ ॥

योनि प्राप्त भई फिर गधेकी योनि फिर मेंढेकी योनि प्राप्त भई ॥ ६ ॥ हे वरानने ! पीछे मध्यदेशमें मनुष्ययोनि प्राप्त भई धन-धान्यसे युक्त और पुत्रकन्यासे हीन है ॥ ७ ॥ हे शुभे ! पूर्वजन्म-फलसे वही स्त्री विवाही गई और इसके शरीरमें निरंतर वायुके रोग रहते हैं ॥ ८ ॥ हे शुभे ! जो कि पूर्वजन्ममें इसने ब्राह्मणके धर्म त्याग दिये थे इसलिये यह स्त्री पुत्रहीन है मृतवत्सा है ॥ ९ ॥ अब इसकी शांति कहेंगे । हे देवि ! सुन, घरके धनसे छठे भागको ब्राह्मणके अर्थ दान देवे ॥ १० ॥ और दश हजार गायत्री जप-वावे शिवका मूलमंत्र ॐ नमः शिवाय हे वरानने ! यह छः अक्ष-रोंका मंत्र एक लाख जपवावे ॥ ११ ॥ तिसका दशांश हवन तर्पण तथा मार्जन करावे फिर भक्तिकरके घृत खीर आदि भोजनसे

पञ्चाशत्संख्यया देवि यथाशक्त्या तु दक्षिणाम् ॥
प्रयागे माघमासे तु स्नानं भार्यासमन्वितः ॥ १३ ॥
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं विधिपूर्वं वरानने ॥ १४ ॥
एवं कृते न संदेहो वंशवृद्धिर्भवेदनु ॥
रोगाः सर्वे क्षयं यान्ति वन्ध्या भवति पुत्रिणी ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसं० श्रवणन० तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥

अथैकनवतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अट्टकस्य प्रतीच्यां तु यादवं नाम वै पुरम् ॥
वसन्ति बहवो देवि जनाः कर्मविचक्षणाः ॥ १ ॥

॥ १२ ॥ पचास ब्राह्मणोंको भोजन करावे । हे देवि ! शक्तिके अनुसार दक्षिणा देवे माघ महीनेमें स्त्रीसहित हो प्रयागजीमें स्नान करे ॥ १३ ॥ कोहले अथवा नारियलको पंचरत्नसे भरके विधिपूर्वक गंगाजीके मध्यमें दान देवे ॥ १४ ॥ ऐसे करनेसे वंशकी वृद्धि हो इसमें संदेह नहीं संपूर्ण रोग नष्ट होवें और वंध्या स्त्री पुत्रवाली होती है ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां श्रवणनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! अटक देशके पश्चिमकी तर्फ यादव नामवाला पुर है तहां बहुतसे जन अपने २ कर्मोंमें निपुण हुए

तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येकः सिद्धलाल इति श्रुतः ॥
तस्य भार्या विशालाक्षि देवी नाम्नी सदाशिवे ॥२॥
पतिव्रता गुणोपेता मिष्टवाक्यप्रवादिनी ॥
सिद्धलालो महाचोरश्चौर्य्यवृत्तिरतः सदा ॥ ३ ॥
दारपुत्रादिभृत्यानां चौर्येण पोषणं कृतम् ॥
एवं सर्वं वयो जातं ततो मृत्युमुपागमत् ॥ ४ ॥
तस्य भार्या सती जाता तत्प्रभावाद्गतो द्विजः ॥
सत्यलोके वरारोहे सततं विविधं सुखम् ॥ ५ ॥
भुक्तं पूर्वकृतात्पुण्यात्ततः पुण्यक्षये सति ॥
मानुषत्वे पुनर्जन्म दुर्लभं सर्वदेहिनाम् ॥ ६ ॥
धनधान्येन संयुक्तः कन्यापुत्रविवर्जितः ॥
ब्राह्मण्यं च यतस्त्यक्त्वा शूद्रकर्म समाचरत् ॥ ७ ॥

वास करते हैं ॥ १ ॥ तिनके मध्यमें एक सिद्धलाल नामवाला ब्राह्मण रहता था । हे विशालाक्षि! उसकी स्त्री देवी नामवाली थी ॥ २ ॥ वह पतिव्रता गुणोंसे युक्त और मिष्ट वचन बोलनेवाली थी और वह सिद्धलाल महाचोर था सदा चोरीकी वृत्ति किया करता ॥ ३ ॥ स्त्री, पुत्र, भृत्य आदिकोंका पोषण पालन चोरीसेही किया ऐसे सम्पूर्ण अवस्था व्यतीत हो चुकी तब मृत्युको प्राप्त भया ॥४॥ तिसकी स्त्री सती होती भई । हे वरारोहे! उसके प्रभावसे वह ब्राह्मण सत्यलोकमें प्राप्त हो अनेक प्रकारके सुखोंको भोगता भया ॥ ५ ॥ पूर्वपुण्यसे सब फल भोगा पीछे पुण्य क्षीण होनेपर सब देहधारियोंसे जो दुर्लभ ऐसे मनुष्य शरीरको प्राप्त भया ॥ ६ ॥ यह धनधान्यसे युक्त है और पुत्र कन्यासे रहित है यह पूर्वजन्ममें ब्राह्मणके कर्मको त्याग शूद्रभावको प्राप्त भया था ॥ ७ ॥

परद्रव्यं हृतं देवि तस्माद्व्याधिरजायत ॥
तस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ८ ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्ये च कारयेत् ॥
दशवर्णाप्रदानं च पूर्वपापविशुद्धये ॥ ९ ॥
शय्यादानं ततः कुर्यादेकादश्यां व्रतं शुभम् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण विष्णुमन्त्रेण सुन्दरि ॥ १० ॥
लक्षजाप्यं प्रयत्नेनाश्वत्थबिल्वतलेऽबले ॥
दशांशहवनं कुर्यात्तर्पणं मार्जनं तथा ॥ ११ ॥
विप्राणां भोजनं देवि घटदानं विशेषतः ॥
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ॥ १२ ॥
व्याधयः संक्षयं यान्ति मम वाक्यं न चान्यथा॥१३॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० श्रवणनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकनवतितमोऽध्यायः ॥ ९१ ॥

और हे देवि ! पराया द्रव्य हरा था इसलिये इसके रोग है अब इसके पूर्वपापोंकी शांति कहेंगे ॥ ८ ॥ घरके धनसे आठवां भाग पुण्यकार्यमें खर्च करे और दशवर्णवाली गौओंका दान पूर्वपापकी शुद्धिके लिये करना॥९॥ फिर शय्यादान करे पीछे उत्तम एकादशीका व्रत करे। हे सुंदरि ! गायत्रीमूलमन्त्रसे अथवा विष्णुके मन्त्रसे ॥१०॥ यत्नकरके लक्ष जप करावे । हे अबले! पीपल अथवा बेल वृक्षके नीचे दशांश हवन, दशांश तर्पण और मार्जन करावे॥११॥ हे देवि ! ब्राह्मणोंको भोजन कराके घट दान देवे ऐसे करनेसे वंश बढता है इसमें अन्यथा नहीं ॥ १२ ॥ सम्पूर्ण व्याधि नष्ट होती है यह मेरा वचन अन्यथा नहीं ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मवि०भा०टी०पार्व०श्रवण०चतुर्थच०नामैकनवतितमोऽध्यायः ॥९१॥

अथ द्विनवतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

देशे पञ्चनदे देवि गङ्गानाम्नी पुरी शुभा ॥
वसन्ति सर्वे वै वर्णा ब्राह्मणाः क्षत्रिया विशः ॥ १ ॥
स्वकर्मनिरताः सर्वे वर्णाचारसमाश्रिताः ॥
तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येकः कृषिकर्मरतः सदा ॥ २ ॥
एकस्मिन्समये तदीयभगिनीपुत्रो गृहे भिक्षुकः
प्राप्तस्तस्य बुभुक्षितो निशि तदा यष्ट्याहनत्तं
खलः ॥ प्रातः कालकरालदन्तदलनं पुत्रः स्वसु-
स्तस्य तत्पापात्सत्वरमाजगाम मरणं दुष्टः स्वयं
चान्धधीः ॥ ३ ॥
यमदूतैर्महादेवि निक्षिप्तो नरकार्णवे ॥
अष्टाशीतिसहस्राणि वर्षाणि च तदा शिवे ॥ ४ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि! पञ्चनद देशविषे गंगानामवाली पुरी है तिसमें ब्राह्मण क्षत्री वैश्य आदि सब जन वास करते थे ॥१॥ वर्ण और आचारमें युक्त अपने २ कर्ममें युक्त थे, तिन्होंमें एक ब्राह्मण कृषिकर्ममें रत था ॥ २ ॥ एक समयमें तिसकी बहनका पुत्र घरमें भिक्षा लेनेको प्राप्त हुआ और वह भूखसे पीडित था तब रात्रिमें तिस कृषिकार ब्राह्मणने वह अपना भानजा मार दिया और वह बहनका पुत्र कालकरालदन्तदलनको प्राप्त हुआ पीछे अंधबुद्धिवाला वह ब्राह्मणभी आपही कालको प्राप्त हुआ ॥३॥ तब यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय नरकरूपी समुद्रमें डाला तहां अठा-

भुज्यते विविधं कष्टं नरकं चैव दारुणम् ॥
नरकान्निःसृतो देवि मार्जारत्वे भवेत्किल ॥ ५ ॥
व्याघ्रस्य च पुनर्योनिं कुक्कुटत्वं ततोऽभवत् ॥
पुनर्मानुषयोनिं च धनधान्यसमन्वितम् ॥ ६ ॥
स प्रवीणो महावक्ता कुलाचाररतः सदा ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि भागिनेयस्य वै वधः ॥ ७ ॥
कृतो वै मन्दमतिना तत्पापेनेह दुःखभुक् ॥
पुत्रो न जायते देवि व्याधिश्चैव पुनः पुनः ॥ ८ ॥
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु मत्तो वरानने ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ९ ॥
गायत्रीत्र्यम्बकाभ्यां च द्यौः शान्तीति मन्त्रयम् ॥
लक्षत्रयं वरारोहे जपं वै कारयेत्सुधीः ॥ १० ॥

सौ हजार वर्षोंतक वास कर ॥ ४ ॥ हे शिवे ! हे देवि ! बहुत प्रकार कष्ट भोग नरकसे निकस मार्जारकी योनिको प्राप्त हुआ ॥५॥ फिर भेडियेकी योनिको प्राप्त होके मुरगेकी योनिको प्राप्त हुआ फिर मनुष्ययोनिको प्राप्त हो धनधान्यसे युक्त ॥ ६ ॥ हे देवि ! बहुत चतुर अत्यन्त कथन करनेवाला अपने कुलके आचारमें रत ऐसा होता भया और तिसने पूर्वजन्ममें भगिनीके पुत्रका वध किया था ॥ ७ ॥ ऐसे मन्दबुद्धिवाला तिस पापसे महाकष्टको भोगता भया और तिसके पुत्रकी सन्तान न भई बारंबार व्याधिसे पीडित होता भया ॥ ८ ॥ अब हे वरानने ! तिसकी शांतिको कहता हूं तू श्रवण कर । अपने घरके द्रव्यमेंसे छटा भाग पुण्य कर देवे ॥ ९ ॥ गायत्री तथा त्र्यंबकमंत्र और द्यौः शांतिः इन तीन

दशांशहवनं देवि तर्पणं मार्जनं तथा ॥
ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्या पञ्चाशच्च वरानने ॥ ११ ॥
हविषा पायसेनापि खण्डेन मोदकेन वै ॥
दशवर्णी ततो दानं तिलधेनुं प्रदापयेत् ॥ १२ ॥
पञ्चपात्रं च संदाय पिण्डदानं च कारयेत् ॥
भागिनेयस्य वै मूर्तिः सुवर्णरजतान्विता ॥ १३ ॥
दशपलसुवर्णेन सवत्सां पीठसंयुताम् ॥
पूजयामास विधिवन्मन्त्रेणानेन वै शिवे ॥ १४ ॥
सुराराध्य जगत्स्वामिन् चराचरगुरो हरे ॥
मम पूर्वकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥ १५ ॥
अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा भागिनेयवधः कृतः ॥
तत् क्षमस्व दयापूर्ण त्र्यम्बक त्रिपुरान्तक ॥ १६ ॥

मंत्रोंका तीन लक्ष जप करवावे ॥ १० ॥ हे देवि ! दशांश हवन, तिससे दशांश तर्पण, तिससे दशांश मार्जन करावे । हे वरानने ! पचास ब्राह्मणोंको भोजन करवावे ॥ ११ ॥ साकल्य तथा क्षीर तथा खांड तथा मोदककरके करावे और दशवर्णवाली गौका दान करे तिलधेनुका दान देवे ॥ १२ ॥ पांच पात्रोंका दान पिंडदान और भागिनेयकी मूर्ति सुवर्ण तथा चांदीकी करावे ॥ १३ ॥ दश पल प्रमाणसे युक्त सवत्सा सिंहासनसे युक्त सोनेकी मूर्ति बनवावे । हे शिवे ! इस मन्त्रकरके विधिवत्पूजन करे ॥ १४ ॥ और हाथ जोड ऐसे कहे हे सुराराध्य ! हे जगत्स्वामिन् ! हे चराचरगुरो ! हे हरे ! हे दयानिधे ! मेरा पहिला किया पाप क्षमा करो ॥ १५ ॥ हे दयापूर्ण ! हे त्र्यंबक ! हे त्रिपुरान्तक ! अज्ञानसे तथा ज्ञानसे मैंने भागिनेयका वध किया सो आप क्षमा करो ॥ १६ ॥

ततो वै पूजयामास लोकपालान् पृथक् पृथक् ॥
पश्चान्माषबलिं दद्यात्प्रतिमां दापयेत्ततः ॥ १७ ॥
ब्राह्मणाय तदा देवि पूर्वपापविशुद्धये ॥
एवं कृते वरारोहे पुत्रः संजायते खलु ॥ १८ ॥
व्याधयः संक्षयं यान्ति न कन्या जायते खलु ॥
यदा न क्रियते देवि सप्तजन्मस्वपुत्रकः ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसं० धनिष्ठानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्विनवतितमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥

अथ त्रिनवतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

पश्चिमायां महादेवि यवनस्य पुरं महत् ॥
महानन्द इति ख्यातं सर्वदेशे सुरेश्वरि ॥ १ ॥

फिर लोकपालोंका पृथक् पृथक् पूजन करे पीछे माषबलि देवे फिर मूर्तिका दान ॥ १७ ॥ हे देवि ! हे वरारोहे ! ब्राह्मणको देवे पूर्वपापकी शुद्धिके लिये । ऐसे करनेसे पुत्र निश्चयही होवे ॥१८॥ और हे देवि ! व्याधि नाशको प्राप्त होवे कन्याकी सन्तान नहीं होवे और जो ऐसे नहीं करे तो सात जन्मपर्यंत पुत्रकी प्राप्ति नहीं होवे ॥ १९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठान० प्रथमच० प्रायश्चित्तकथनं नाम द्विनवतितमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! हे सुरेश्वरि ! ! पश्चिम दिशामें यवनका पुर महानन्दनामसे विख्यात होता भया ॥ १ ॥

वसन्ति बहवो म्लेच्छाः स्वविद्यायां विचक्षणाः ॥
ब्राह्मणास्तत्र वै देवि विद्यायां निपुणास्तथा ॥ २ ॥
तिष्ठत्यशंकया नित्यं म्लेच्छान्नं भुज्यते सदा ॥
स संध्यारहितो विप्रः पिशुनो दुर्मतिः शठः ॥ ३ ॥
संचितं बहुसाहस्रं स्वर्णरत्नगजादिकम् ॥
ततो बहुदिने जाते तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥ ४ ॥
सर्पेण दष्टो देवेशि पञ्चके निर्जलेऽपि वा ॥
यमदूतैर्महादेवि यमाज्ञां गृह्य वै द्विजम् ॥ ५ ॥
रौरवे क्षिप्तवाञ्छीघ्रं महाकष्टं प्रभुज्यते ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ६ ॥
नरकान्निःसृतो देवि ग्राहयोनिरभूत्पुरा ॥
पुनः कच्छपयोनिश्च मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ७ ॥

हे देवि ! तिसमें म्लेच्छविद्यामें निपुण ऐसे बहुतसे म्लेच्छ वास करते थे और तहां ब्राह्मणभी विद्यामें निपुण हुए बहुतसे वास करते भये ॥ २ ॥ और तहां एक ब्राह्मण शंकासे रहित नित्य म्लेच्छान्नको भोजन करनेवाला सन्ध्यासे रहित चुगली करनेवाला दुर्मति तथा शठ होता भया ॥ ३ ॥ और स्वर्ण रत्न गज आदिका बहुत सञ्चय किया ऐसे बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिसका मृत्यु होता भया ॥ ४ ॥ हे देवेशि ! वह ब्राह्मण निर्जलदेशमें सर्पदंशित हुआ अर्थात् सर्पके डसनेसे पंचकोंमें मृत्युको प्राप्त होता भया और उसको यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय नरकमें डाला ॥ ५ ॥ और रौरव संज्ञक नरकमें शीघ्र प्राप्त होके महाकष्टोंको भोगता भया और तहां साठ हजार वर्षोंतक नरकके दुःखोंको भोगता भया ॥ ६ ॥ फिर हे देवि ! नरकसे निकस ग्राहकी योनिको प्राप्त हुआ फिर

पूर्वजन्मनि भो देवि ब्राह्मणत्वं यतोऽत्यजत् ॥
अपुत्रत्वं ततो देवि कन्यका नैव जायते ॥ ८ ॥
म्लेच्छान्नं भुज्यते देवि संध्यां च तर्पणं विना ॥
अतो व्याधियुतो नित्यं न सुखं लभते क्वचित् ॥९॥
शान्तिं शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥
गृहं शुभ्रं वरारोहे धनधान्यसमन्वितम् ॥ १० ॥
संचितान्नं वरारोहे ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं च कारयेत् ॥ ११ ॥
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं तथा ॥
त्रैमासिकव्रतं कुर्यात् व्रतं च रविसप्तमी ॥ १२ ॥
जातवेदेति मन्त्रेण लक्षजाप्यं तु कारयेत् ॥
ततो गां कपिलां देवि स्वर्णवस्त्रविभूषिताम् ॥१३॥

कछुएकी योनिको प्राप्त हो मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया॥ ७ ॥ हे देवि ! पहिले जन्ममें तिसने ब्राह्मणपना त्यागा तिससे पुत्ररहित हुआ और कन्याभी नहीं हुई ॥ ८ ॥ और हे देवि ! म्लेच्छका अन्न भक्षण किया सन्ध्या तर्पणादिसे रहित रहा इससे नित्य व्याधियुक्त तथा सुखकी किंचित् प्राप्तिभी न हुई ॥ ९॥ हे वरारोहे ! पूर्वपापके नाश करनेवाली शांतिको कहते हैं । अच्छा शुद्ध घर धन-धान्यसे युक्त ॥ १० ॥ हे वरारोहे ! संचित किया हुआ अन्नसमेत घर ब्राह्मणको देवे गायत्रीके मूलमन्त्रका एक लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥ और तिसका दशांश हवनादि करावे तथा त्रैमासिक व्रत निरंतर तीन महीनोंतक समाप्त होनेवाला व्रत करे और रविसे युक्त सप्तमीका व्रत करे ॥ १२ ॥ हे देवि ! जातवेदमंत्रका लक्ष जप करावे और कपिला गौका दान विधिपूर्वक ब्राह्मणको देवे और

दद्यात्सवस्त्रां विधिवद्ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥
अश्वदानं च कर्तव्यं चामरं छत्रमेव च ॥ १४ ॥
एवं कृते न संदेहो व्याधिनाशो भवेद् ध्रुवम् ॥
पुत्रोऽपि जायते देवि वन्ध्यत्वं च प्रशाम्यति ॥ १५ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० धनिष्ठानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिनवतितमोऽध्यायः ॥ ९३ ॥

अथ चतुर्नवतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

यत्किंचित्क्रियते कर्म वैदिकं चापि लौकिकम् ॥
तत्तत्कर्मफलं भोग्यमिह लोके परत्र च ॥ १ ॥
सौराष्ट्रनगरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये ॥
क्षत्रधर्मरतो नित्यं मृगपक्षिप्रहारकः ॥ २ ॥

स्वर्णसे भूषित वस्त्रयुक्त कपिला गौका दान देवे ॥ १३ ॥ और शिवस्वरूपी ब्राह्मणके अर्थ अश्वको देवे और चमर तथा छत्रका दान देवे ॥ १४ ॥ हे देवि ! ऐसे करनेसे व्याधिका नाश होवे और पुत्रकी प्राप्ति होवे तथा वन्ध्यापना नष्ट होवे ॥ १५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठानक्षत्रस्य द्वि० प्रायश्चित्तकथनं नाम त्रिनवतितमोऽध्यायः ॥ ९३ ॥

शिवजी कहते हैं-जो कछु वैदिक अथवा लौकिक कर्म इस संसारमें किये हैं तिस कर्मका फल इस लोक तथा परलोकमें भोगा जाता है ॥ १ ॥ हे देवि ! हे प्रिये ! सौराष्ट्रनामवाले नगरमें एक क्षत्री वास करता था वह क्षत्रधर्ममें नित्य रत मृग तथा

एकस्मिन् समये काले वनं यातः सुदुर्मतिः ॥
मृगीं सगर्भां हतवान् बालकद्वयसंयुताम् ॥ ३ ॥
पुत्रेण भार्यया सार्द्धं भुक्तं तेन दुरात्मना ॥
ततो वृद्धे तु संजाते तस्य मृत्युरभूत्किल ॥ ४ ॥
यमदूतैर्महादेवि नरके क्षिप्त एव सः ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ५ ॥
नरकान्निःसृतो देवि महिषो जायते खलु ॥
वराहत्वं पुनर्जातं मानुषत्वं पुनर्भवेत् ॥ ६ ॥
देशे पुण्यतमे देवि धनधान्यसमन्वितः ॥
विद्यावान् गुणवान् वक्ता राजसेवासु तत्परः ॥ ७ ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि हत्वा मृगगणान्बहून् ॥
प्रसवोन्मुखीं मृगीं हत्वा मृगवृन्दसमन्विताम् ॥ ८ ॥

पक्षियोंका प्रहार करनेवाला था ॥ २ ॥ एक समयके विषैं वह दुर्मति वनमें जाके सगर्भा मृगीको मारता भया वह मृगी दो बालकोंसे युक्त थी ॥ ३ ॥ और तिस दुरात्माने पुत्र तथा भार्या करके युक्त होके मृगीका मांस भोगा फिर वृद्ध होनेपर तिसका मृत्यु हुआ ॥ ४ ॥ हे देवि ! तब वह यमराजके दूतोंने आज्ञा पाय नरकमें डाला तहां साठ हजार वर्षोंतक नरकको भोग ॥५॥ हे देवि ! नरकसे निकस महिषयोनिको प्राप्त हुआ फिर वराहकी योनिको प्राप्त हो तहांसे मनुष्ययोनिको प्राप्त भया ॥ ६ ॥ हे देवि ! पवित्रदेशमें जन्मा है धनधान्यसे युक्त विद्यावान् गुणवान् बहुत कथन करनेवाला राजसेवामें तत्पर ऐसा होता भया ॥ ७ ॥ हे देवेशि ! पूर्वजन्ममें मृगोंके समूहको मारके सगर्भा मृगीको

तत्पापेन महादेवि मृतवत्सत्वमाप्नुयात् ॥
शरीरे बहवो रोगा ज्वराश्चातुर्थिकास्तथा ॥ ९ ॥
शान्तिं शृणु वरारोहे मृतवत्सत्वशान्तये ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १० ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण लक्षजाप्यं तु कारयेत् ॥
हवनं तद्दशांशेन मार्जनं तर्पणं ततः ॥ ११ ॥
पलपञ्चसुवर्णस्य मृगीं वत्ससमन्विताम् ॥
कृत्वा समर्पयामास ब्राह्मणाय शिवात्मने ॥ १२ ॥
दशवर्णां ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ॥
वाटिकारोपणं कुर्यात् पथि कूपं तथा शिवे ॥ १३ ॥
ब्राह्मणान् भोजयामास शतसंख्यान्समोदकैः ॥
एवं कृते वरारोहे पुत्रः संजायते खलु ॥ १४ ॥

मृगोंके सहित मारता भया ॥ ८ ॥ तिस पापसे हे महादेवि ! मृतवत्सताको प्राप्त हुआ अर्थात् इसके संतान नहीं जीती है और शरीरमें बहुतसे रोग हैं चातुर्थिक ज्वरसे पीडित रहता है ॥ ९ ॥ हे वरारोहे ! मृतवत्सत्वपनेकी शांतिके लिये तिसकी शांतिको कहते हैं। अपने घरके द्रव्यमेंसे छठा भाग दान करे ॥ १० ॥ और गायत्रीमूलमन्त्रका लक्ष जप करावे और तिससे दशांश हवन तथा तर्पण तथा मार्जन करावे ॥ ११ ॥ और पांच पल सुवर्णकी गर्भसे युक्त मृगीकी मूर्ति बछेसे युक्त कर बनवावे तिसको संकल्प कर शिवरूपी ब्राह्मणको देवे ॥ १२ ॥ और हे शिवे ! दशवर्णोंवाली गौका दान देवे और विशेषतासे शय्याका दान देवे रास्तेमें धर्मस्थान करावे तथा कूप करावे ॥ १३ ॥ हे वरारोहे ! और सौ (१००) संख्या ब्राह्मणोंको मोदकोंका भोजन

व्याधयः संक्षयं यान्ति वन्ध्यात्वं च प्रशाम्यति ॥
मृतवत्सा तु या नारी सुतं सानुग्रहं लभेत् ॥ १५ ॥
काकवन्ध्या पुनः पुत्रं लभते नात्र संशयः ॥ १६ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्राय० नाम चतुर्नवतितमोऽध्यायः ॥९४॥

अथ पञ्चनवतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

मथुरादक्षिणे भागे योजने वै त्रयोपरि ॥
पुरं सिद्धमिति ख्यातं वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥
क्षिपकारो वसत्येको धनधान्यसमन्वितः ॥
बलभद्र इति ख्यातो वैष्णवो ज्ञानवल्लभः ॥ २ ॥

करावे ऐसे करनेसे निश्चय पुत्रकी प्राप्ति होवे ॥१४॥ और व्याधि नाशको प्राप्त होके वंध्यापनेकी शांति होवे और मृतवत्सा स्त्रीभी उत्तम पुत्रको प्राप्त होवे ॥ १५ ॥ और काकवंध्याभी फिर पुत्रको प्राप्त होवे इसमें संशय नहीं है ॥ १६ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे धनिष्ठानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम चतुर्नवतितमोऽध्यायः ॥ ९४ ॥

शिवजी कहते हैं-मथुरासे दक्षिणभागमें तीन योजनपर सिद्धपुर नाम विख्यात होता भया तहां बहुतसे जन वास करते भये ॥ १ ॥ तहां एक क्षिपकार अर्थात् छीपी वास करता था धनधान्यसे युक्त और बलभद्रनामसे प्रसिद्ध विष्णुभक्त ज्ञानको प्रिय

तस्य पुत्रत्रयं जातं कनीयांस्तस्य चादरः ॥
नादरो ज्येष्ठपुत्रस्य मध्यमस्य तथैव च ॥ ३ ॥
धनं च संचितं तेन महाशूद्रेण चानघे ॥
भ्रातॄणां विग्रहो जातो विभागार्थे धनस्य तु ॥ ४ ॥
ब्राह्मणस्तस्य वै मित्रं विग्रहस्तेन वै श्रुतः ॥
आगतस्तस्य निकटे क्षिपकारस्य वै शिवे ॥ ५ ॥
ब्राह्मणस्य वधो जातः शूद्राणां विग्रहे सति ॥
सर्वं द्रव्यं कनिष्ठाय क्षिपकारो ददौ स्वयम् ॥ ६ ॥
एवं बहुगते काले शूद्रस्य मरणं भवेत् ॥
रौरवं नरकं जातं क्षिपकाराय वै स्वयम् ॥ ७ ॥
लक्षवर्षं वरारोहे भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ८ ॥

माननेवाला था ॥ २ ॥ ऐसे उसको तीन पुत्र हुए तिन्होंमें कनिष्ठका अर्थात् छोटेका आदर और ज्येष्ठ तथा मध्यम पुत्रका आदर नहीं करता भया ॥ ३ ॥ हे अनघे ! तिस महाशूद्रने बहुतसा धन संचित किया और तिन भाइयोंका धनके विभागके वास्ते विग्रह अर्थात् लढाई होती भई ॥ ४ ॥ हे शिवे ! तिसका मित्र एक ब्राह्मण तिन्होंके युद्धको श्रवण कर तिस छींपीके समीप आया ॥ ५ ॥ उन शूद्रोंका युद्ध होनेमें तिस विप्रका मृत्यु हो गया सब द्रव्य वह शूद्र छोटे बेटेको देता भया ॥ ६ ॥ ऐसे बहुत काल व्यतीत होनेपर तिस शूद्रका मृत्यु हुआ तब क्षिपकारको रौरवसंज्ञक नरककी प्राप्ति हुई ॥ ७ ॥ हे वरारोहे ! लक्षवर्षपर्यन्त नरकके दुःखोंको भोग फिर नरकसे निकल हे देवि !

भुक्त्वा व्याघ्रस्य योनिं स काकयोनिस्ततोऽभवत् ॥
मानुषत्वं पुनर्जातं मध्यदेशे सुरेश्वरि ॥ ९ ॥
धनधान्यसमायुक्तो रोगवान् पुत्रवर्जितः ॥
अस्य शांतिं प्रवक्ष्यामि शृणु मे परमेश्वरि ॥ १० ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
पूर्वपापविशुद्ध्यर्थं दशवर्णां ददेत्ततः ॥ ११ ॥
गायत्रीसूर्यमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥
दशांशं हवनं देवि मार्जनं तर्पणं तथा ॥ १२ ॥
दशांशं भोजयद्विप्रान् ब्राह्मणान्वेदपारगान् ॥
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥ १३ ॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं देवि सत्यव्रताय च ॥
एवं कृते वरारोहे सर्वरोगक्षयो भवेत् ॥१४॥

मेडियेकी योनिको प्राप्त होता भया ॥ ८ ॥ हे सुरेश्वरि ! फिर तहांसे गधेकी योनिको प्राप्त हो काकयोनिको प्राप्त होता भया फिर मध्यदेशमें मनुष्ययोनिमें प्राप्त हुआ ॥ ९ ॥ हे परमेश्वरि ! धनधान्यसे युक्त है शरीरमें रोग है पुत्रसे रहित है अब इसकी शांतिको कहते हैं तू श्रवण कर ॥ १० ॥ अपने घरमेंसे द्रव्यके छठे भागको पुण्य करे पूर्वपापकी शुद्धिके लिये दशवर्णोंवाली गौओंका दान देवे ॥ ११ ॥ हे वरानने ! गायत्री तथा सूर्यका मन्त्र लक्ष जपवावे और तिससे दशांश हवन, तर्पण तथा मार्जन करवावे ॥ १२ ॥ और तिससे दशांश वेदके पारायण करनेवाले ब्राह्मणोंको भोजन करवावे और पञ्चरत्नसे युक्त पेठेका और नारियलका दान ॥ १३ ॥ सत्य बोलनेवाले ब्राह्मणको गंगामध्यमें देवे ऐसे करनेसे सर्व रोग क्षय होते हैं ॥ १४ ॥

वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ॥ १९ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० धनिष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चनवतितमोऽध्यायः ॥ ९५ ॥

अथ षण्णवतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

मथुरायां विशालाक्षि आभीरस्तत्र तिष्ठति ॥
गोपालेति समाख्यातो सदा गोधनजीवितः ॥ १ ॥
तस्य भार्या विशालाक्षि सती नामातिसुन्दरी ॥
गोधनं बहुसाहस्रं गोपालस्य सुरेश्वरि ॥ २ ॥
वत्सानां वृषभाणां च पालनं क्रियते सदा ॥
शीतकाले महादेवि वृष्टिर्जाता वरानने ॥ ३ ॥
गौः सवत्सा महादेवि पीडिता भोजनं विना ॥
गृहाऽभावे मृता बाह्ये वत्सेनैव च संयुता ॥ ४ ॥

और वंशकी वृद्धि होवे इसमें कुछ विचार नहीं करना ॥ १९ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां धनिष्ठानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पञ्चनवतितमोऽध्यायः ॥ ९५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे विशालाक्षि ! मथुरानगरमें एक आभीरसंज्ञक जातिवाला गोपाल नामसे विख्यात गोधनसे जीविका करनेवाला वास करता था ॥ १ ॥ हे सुरेश्वरि ! तिसकी भार्या सुंदर नेत्रोंवाली सती नामसे विख्यात थी । तिस गोपालके बहुत हजार संख्यावाला गौओंका धन था ॥ २ ॥ वत्सोंका तथा वृषभोंका पालन किया करता था । हे महादेवि ! हे वरानने ! एक समय शीतकालमें महावर्षा होती भई ॥ ३ ॥ हे महादेवि ! गौ और

ततो बहुगते काले गोपालस्य मृतिस्तदा ॥
यमदूतैर्महाघोरे नरके नाम कर्द्दमे ॥ ५ ॥
क्षिप्तं यमाज्ञया देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥
नरकान्निःसृतो देवि भेकयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ६ ॥
सरटस्य ततो देवि मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥
धनधान्यसमायुक्तो व्याधिना पीडितः सदा ॥ ७ ॥
अपुत्रत्वं ततो लेभे कन्यका जायते खलु ॥
तस्य शान्तिमहं वक्ष्ये शृणु देवि सुशोभने ॥ ८ ॥
निर्बीजं वृषभं तेन कृतं योगेन वै शिवे ॥
तेन पापेन भो देवि गर्भपातः पुनः पुनः ॥ ९ ॥
वसन्ते मासि वै कुर्य्यात् घटदानं सहस्रशः ॥
एकादशीव्रतं नित्यं वेण्याः स्नानं समाचरेत् ॥ १० ॥

बछडे भोजन विना पीडित होते भये घरके विना वत्ससमेत गौ मृत्युको प्राप्त हुई ॥ ४ ॥ फिर बहुतसा काल व्यतीत होनेपर तिस गोपालका मृत्यु हुआ और उसको यमराजके दूतोंने कर्दम संज्ञक महाघोर नरकमें डाला ॥ ५ ॥ हे देवि ! साठ हजार वर्षों तक नरकमें रहके फिर नरकसे निकस मेंडककी योनिको प्राप्त भया ॥ ६ ॥ हे देवि ! फिर किरलियाकी योनिको प्राप्त होके धन-धान्यसे युक्त मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया और सदा व्याधिसे पीडित होता भया ॥७॥ और हे देवि ! हे सुशोभने ! पुत्रसे रहित हुआ है कन्याकी प्राप्ति भई अब तिसकी शांति कहता हूं तू श्रवण कर ॥८॥ हे शिवे ! तिसने निर्बीज वृषभ (बैल बधिया) दैवयोगसे किये तिस पापसे वारंवार गर्भपात हुआ ॥ ९ ॥ वसंतके महीनेमें सहस्रसंख्या घटोंका दान देवे एकादशीका नित्य व्रत करै

दशवर्णगवां दानं शय्यादानं तथैव च ॥
आकृष्णेति जपं कुर्य्याल्लक्षसंख्यं वरानने ॥ ११ ॥
दशांशं हवनं तद्वन्मार्जनं तर्पणं तथा ॥
भोजयेद्विविधैश्चान्नैर्ब्राह्मणान् श्रोत्रियान् शतम् १२॥
पायसान्नेन खण्डेन घृतेन दधिना तथा ॥
एवं कृते न संदेहो ज्वरमोक्षः प्रजायते ॥ १३ ॥
वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य मृतवत्सा च पुत्रिणी ॥
काकवन्ध्या पुनः पुत्रं लभते नात्र संशयः ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० शतभिषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षण्णवतितमोऽध्यायः ॥९६॥

त्रिवेणीमें स्नान करे ॥ १० ॥ तथा हे वरानने ! दशवर्णोंवाली गौओंका दान देवे तथा शय्यादान तथा 'आकृष्णे०' इस मन्त्रका एक लक्ष जप करावे ॥ ११ ॥ तथा तिससे दशांश हवन, तर्पण मार्जनभी दशांश करावे तथा सौ (१००) ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके अन्नोंकरके भोजन करावे ॥ १२ ॥ खीर, खांड, दही, घृत ये भोजन करावे ऐसे करनेसे निश्चय ज्वरसे छूट जाता है ॥ १३ ॥ और तिसके वंशकी वृद्धि होवे मृतवत्सा स्त्री पुत्रको प्राप्त होवे काकवन्ध्या पुनः पुत्रको प्राप्त होवे इसमें संदेह नहीं॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां पार्वतीहर० शतभिषानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षण्णवतितमोऽध्यायः ॥ ९६ ॥

अथ सप्तनवतितमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

मध्यदेशे महेशानि लुब्धको वसति प्रिये ॥
मृगारिर्नाम विख्यातो मृगमांसेन जीवति ॥ १ ॥
प्रत्यहं मृगयां याति पक्षिणां मारणे रतः ॥
मांसक्रयं च कुरुते कलत्रं पोषयेत्सदा ॥ २ ॥
एवं वयो गतं सर्वं वृद्धे सति वरानने ॥
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ ३ ॥
रौरवे नरके क्षिप्तं तत्र कष्टं मुहुर्मुहुः ॥
सप्ततिर्वै सहस्राणि नरके परिपच्यते ॥ ४ ॥
नरकान्निःसृतो देवि श्येनयोनिं प्रजायते ॥
उष्ट्रस्य च पुनर्योनिं शृगालत्वं ततः पुनः ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे महेशानि ! हे प्रिये ! ! मध्यदेशमें एक लुब्धक वास करता भया वह मृगारिनामसे विख्यात मृगमांससे जीवनेवाला होता भया ॥ १ ॥ और दिन दिनके प्रति शिकारको प्राप्त हो पक्षियोंके मारनेमें रत रहता था और मांसको बेंचके स्त्री आदि कुटुंबका पोषण किया करता था ॥ २ ॥ हे वरानने ! ऐसे सारी अवस्था व्यतीत होनेपर वृद्धतामें तिसका मरण हुआ तब वह यमराजके दूतोंने आज्ञा पायके ॥ ३ ॥ रौरवसंज्ञक नरकमें डाला जहां वारंवार कष्टोंको भोग सत्तर हजार वर्ष नरकमें पकाया गया ॥ ४ ॥ फिर हे देवि ! नरकसे निकस शिकरापक्षीकी योनिको प्राप्त हुआ फिर उष्ट्रकी योनिको प्राप्त होके गीदडकी योनिको प्राप्त हो

मानुषत्वं ततो जातं धनधान्येन संयुतः ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि पक्षिणो बहवो हताः ॥ ६ ॥
तेन पापेन भो देवि व्याधिना पीडितो हि सः ॥
मृगं हत्वा वरारोहे हतं च मृगशावकम् ॥ ७ ॥
एतद्दोषेण भो देवि पुत्राणां मरणं खलु ॥
काकवन्ध्या भवेन्नारी कन्यका जायते सदा ॥ ८ ॥
वन्ध्या भवति वै नारी शान्तिं शृणु वरानने ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ ९ ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां लक्षजाप्यं वरानने ॥
दशांशं हवनं तद्वत्तर्पणं मार्जनं तथा ॥ १० ॥
दश धेनूस्ततो दद्यात्स्वर्णदानं विशेषतः ॥
हरिवंशश्रुतिं देवि व्रतं च हरिवासरम् ॥ ११ ॥

॥ ५ ॥ फिर तहांसे मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया धनधान्यसे युक्त होता भया और पूर्वजन्ममें तिसने बहुतसे पक्षी मारे थे॥६॥ हे देवि ! हे वरारोहे ! तिस पापसे यह व्याधिसे पीडित है मृग तथा मृगोंके बच्चे हत करनेसे ॥ ७ ॥ हे देवि ! इस दोषसे निश्चय पुत्रोंका मरण है और काकवन्ध्या स्त्री अथवा सदा कन्याके जन्म करनेवाली स्त्री होती भई ॥ ८ ॥ हे वरानने ! तिसकी नारी वंध्या होती भई अब इसकी शांतिको कहता हूं तू श्रवण कर अपने घरके द्रव्यसे छठा भाग दान करे ॥ ९ ॥ हे वरानने ! 'गायत्री तथा जातवेद०' इन मंत्रका एक लक्ष जप करावे और तिसका दशांश हवन, तर्पण, मार्जन आदि करावे ॥ १० ॥ और हे देवि ! दश गौ तथा सुवर्णका दान विशेषतासे देवे हरिवंशका श्रवण करे

ब्राह्मणान् भोजयामास यथाशक्ति तु दक्षिणा ॥
एवं कृते वरारोहे वंशस्तस्य भविष्यति ॥ १२ ॥
वन्ध्यात्वं प्रशमं याति काकवन्ध्या पुनः सुतम् ॥
मृतवत्सा सुतं लेभे चिरंजीविनमुत्तमम् ॥ १३ ॥
व्याधयः संक्षयं यान्ति ज्ञानं च लभते क्वचित्॥१४॥

इति श्रीकर्मविपाकसं०पार्वतीहर०शतभिषानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तनवतितमोऽध्यायः॥९७॥

अथाष्टनवतितमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

गोमतीनिकटे देवि पुरमस्ति धुरंधरम् ॥
वसन्ति बहवो देवि जना धर्मविचक्षणाः ॥ १ ॥
तन्मध्ये ब्राह्मणोऽप्येको ब्रह्मकर्मविवर्जितः ॥
द्यूतकर्मरतः सोऽपि वेश्यासुरततत्परः ॥ २ ॥

एकादशीका व्रत करे ॥ ११ ॥ और हे वरारोहे ! ब्राह्मणोंको भोजन कराके यथाशक्ति दक्षिणा देवे ऐसे करनेसे वंशकी वृद्धि होवे ॥ १२ ॥ और वंध्यापनेकी शांति होवे काकवंध्या फिर पुत्रको प्राप्त होवे मृतवत्सा स्त्री बहुत कालतक जीनेवाले पुत्रको जने ॥ १३ ॥ और व्याधि दूर होके ज्ञानकी प्राप्ति होवे ॥ १४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषान० द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम सप्तनवतितमोऽध्यायः॥९७॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! गोमतीके निकट धुरंधर नामवाली पुरी है तहां बहुतसे जन धर्ममें विचक्षण वास करते भये ॥१॥ और

मद्यपानरतो नित्यं वेदशास्त्रविनिन्दकः ॥
ततो बहुदिने देवि तस्य मृत्युरभूत्पुरा ॥ ३ ॥
यमदूतैर्महाघोरैर्नरके तु निपातितः ॥
क्षिप्तः सन्नरके घोरे लक्षवर्षं महेश्वरि ॥ ४ ॥
नरकान्निःसृतो देवि वृकयोनिरभूत्पुरा ॥
वराहस्य पुनर्योनिर्गर्दभत्वं ततो भवेत् ॥ ५ ॥
मानुषत्वं ततो लेभे देशे पुण्यतमे शुभे ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि मद्यपानरतः सदा ॥ ६ ॥
तेन पापेन भो देवि शरीरे रोगसंभवः ॥
द्यूतवेश्यारतो नित्यं यत्कृतं पूर्वजन्मनि ॥ ७ ॥
तत्पापेन महादेवि वंशच्छेदश्च जायते ॥
शान्तिं शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ८ ॥

तिसके मध्यमें एक ब्राह्मण ब्रह्मकर्मसे रहित द्यूतकर्ममें रत वेश्या-संगी रहता भया ॥ २ ॥ नित्य दारूपान करनेवाला वेदशास्त्रकी निंदा करनेवाला ऐसे उसको बहुत दिन व्यतीत हुए तब उसका मृत्यु हुआ ॥ ३ ॥ हे महेश्वरि ! वह यमराजके दूतोंने घोर नरकमें डाला तहां लक्ष वर्षपर्यंत घोर नरकमें रहके ॥ ४ ॥ फिर हे देवि ! नरकसे निकस भेडियेकी योनिको प्राप्त हुआ फिर शूकरकी योनिको प्राप्त होके गर्दभकी योनिको प्राप्त हुआ ॥ ५ ॥ फिर हे शुभे ! मनुष्ययोनिको पुण्यतम देशमें प्राप्त हो गया । हे देवेशि ! यह पूर्वजन्ममें मदिरापान करनेमें रत था इसलिये रोगसे युक्त तिसका शरीर रहता भया॥६॥ और हे देवि ! जूआमें रत वेश्यासंगी पहिले जन्ममें होता भया तिस पापसे ॥ ७ ॥ हे महादेवि ! तिस पापसे वंश नष्ट होता है । हे वरारोहे ! तिस पापकी शांतिको

गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
विष्णोरराटमन्त्रेण लक्षजाप्यं वरानने ॥ ९ ॥
दशांशं हवनं तद्वन्मार्जनं तर्पणं तथा ॥
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्पञ्चाशच्च वरानने ॥ १० ॥
ततो गां कृष्णवर्णां च स्वर्णशृङ्गीं विभूषिताम् ॥
वस्त्रयुक्तां सवत्सां च दद्याद्विजवराय च ॥ ११ ॥
प्रतिमां तु ततः कुर्यात् विष्णोः साम्बस्य वा शिवे ॥
पलं दश सुवर्णस्य विष्णोर्मुक्ताविभूषिताम् ॥ १२ ॥
तद्वदेव शिवस्यैव रजतस्य वरानने ॥
नानावस्त्रैरलंकारैः पूजयित्वा यथाविधि ॥ १३ ॥
मन्त्रेणानेन देवेशि तद्वद्देवगणं नमेत् ॥
गरुडध्वज देवेश भूतनाथ दयानिधे ॥ १४ ॥

कहते हैं तू श्रवण कर पहिले पापके नाश करनेके लिये ॥ ८ ॥ अपने घरके द्रव्यमेंसे छठा भाग पुण्य कर देवे । हे वरारोहे ! और 'विष्णोरराट०' इस मंत्रका लक्ष जप करावे ॥ ९ ॥ और तिससे दशांश हवन, तर्पण, मार्जन करावे । हे वरानने ! पीछे पंचाशत् संख्या ब्राह्मणोंको भोजन करवावे ॥ १० ॥ फिर कृष्णा गौको स्वर्णशृंगयुक्त तथा सवत्सा और वस्त्रादिसे युक्त कर ब्राह्मणको दान देवे ॥ ११ ॥ हे शिवे ! पीछे विष्णु भगवान्की मूर्ति और शिवकी मूर्ति बनावे विष्णुकी मूर्ति तो दश पल सुवर्णकी मुक्तादिसे भूषित करे ॥ १२ ॥ हे वरानने ! तैसेही चांदीकी शिवकी मूर्ति बनवावे अनेक प्रकारके वस्त्रअलंकारादिसे युक्त कर यथाविधि पूजन करे ॥ १३ ॥ हे देवेशि ! इस मंत्रकरके गणोंका पूजन कर हाथ जोड यह कहे कि, हे गरुडध्वज ! हे देवेश ! हे भूतनाथ !

मम पूर्वंकृतं पापं तत्क्षमस्व दयानिधे ॥
ॐ सुदर्शनाय नमः । ॐ त्रिशूलाय नमः। ॐ गरुडाय नमः । ॐ भैरवाय नमः । ॐ जयाय० । ॐ विजयाय नमः । ॐ बटुकाय०। ॐ कालभैरवाय०॥
गन्धधूपादिभिर्देवि पूजयित्वा पृथक् पृथक् ॥ १५॥
प्रतिमां पूजितां तां तु विप्राय प्रददौ स्वयम् ॥
ततो विष्णुं नमस्कृत्य शिवं सर्वसुखप्रदम् ॥ १६ ॥
एवं कृते न संदेहः सर्वपापक्षयो भवेत् ॥
वंशवृद्धिर्भवेत्तस्य व्याधिनाशस्तथैव च ॥ १७ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टनवतितमोऽध्यायः॥९८ ॥

हे दयानिधे ! ऐसे कह सब गणोंका पूजन करे ॥ १४ ॥ हे दयानिधे ! पूर्व जन्ममें किये हुए मेरे पापको क्षमा करो । ॐ सुदर्शनाय नमः १ ॐ त्रिशूलाय नमः २ ॐ गरुडाय नमः ३ ॐ भैरवाय नमः ४ ॐ जयाय नमः ५ ॐ विजयाय नमः ६ ॐ बटुकाय नमः ७ ॐ कालभैरवाय नमः ८ ॥ हे देवि ! ऐसे इनको पृथक् २ गंध धूप आदिकोंसे पूजे ॥ १५ ॥ पीछे तिस मूर्तिको ब्राह्मणके अर्थ दान देके फिर विष्णुको और सर्वसुखदाई शिवको नमस्कार करे ॥ १६ ॥ ऐसे करनेसे निःसंदेह संपूर्ण पाप नष्ट होवे और व्याधि नष्ट होवे ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषान० तृ० च० प्रायश्चित्तकथनं नाम छनवतितमोऽध्यायः ॥ ९८ ॥

अथैकोनशततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

पञ्चक्रोशमिते देवि मथुराउत्तरे तथा ॥
हेमन्तपुरसद्ग्रामे वसन्ति बहवो जनाः ॥ १ ॥
तन्मध्ये वैश्य एको हि क्रयविक्रयतत्परः ॥
स सुकर्मा इति ख्यातो धनं च बहु संचितम् ॥ २ ॥
तस्य स्त्री पार्वती नाम रूपयौवनसंयुता ॥
वैश्यश्चैव महादेवि प्रौढिं यातः सुरेश्वरि ॥ ३ ॥
दरिद्रत्वं भवेद्देवि दारिद्रत्वात्सुपीडितः ॥
शतं पञ्च ऋणं नीतं ब्राह्मणस्य सुरेश्वरि ॥ ४ ॥
व्यापारार्थं विशालाक्षि न दत्तं ब्राह्मणाय वै ॥
सर्वं भुक्तं महादेवि बहुकाले गते सति ॥ ५ ॥
वैश्यस्यैव भवेन्मृत्युः सभार्यस्य वरानने ॥
मथुरायां विशालाक्षि लब्धं स्वर्गं वरं शुभम् ॥ ६ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! मथुरासे उत्तरदिशामें पांच कोशपर हेमंतपुर नामक उत्तमग्राममें बहुतसे जन वसते हैं ॥ १ ॥ तिसमें खरीदने बेचनेका व्यवहार करनेवाला एक सुकर्मा नामवाला वैश्य वसता था उसने बहुतसा धन संचित किया ॥ २ ॥ तिसकी स्त्री पार्वती नामवाली रूपयौवनसे युक्त थी । हे महादेवि ! हे सुरेश्वरि ! वह वैश्य वृद्ध हो गया तब ॥ ३ ॥ दरिद्री हो गया । हे सुरेश्वरि ! तब दरिद्रपनेसे पीडित होके ब्राह्मणके पांच सौ (५००) रुपये ग्रहण किये ॥ ४ ॥ हे विशालाक्षि ! व्यापारके वास्ते लिये हुए वे रुपये फिर ब्राह्मणके अर्थ नहीं दिये । हे महादेवि ! ऐसे बहुत काल व्यतीत हो चुका ॥ ५ ॥ तब वैश्यकी मृत्यु हो गई । हे वरानने !

दशलक्षमितं स्वर्गे फलं भुक्त्वा वरानने ॥
ततः सह कलत्रेण पुनः पुण्यक्षये सति ॥ ७ ॥
मानुषत्वं पुनर्लेभे देशे शुभ्रे मनोहरे ॥
धनधान्यसमायुक्तो जायते वै सुरेश्वरि ॥ ८ ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि ब्राह्मणस्य धनं हृतम् ॥
न दत्तं वै ततो देवि ततः पुत्रो न जायते ॥ ९ ॥
ततः शान्तिं प्रवक्ष्यामि यतः पापस्य संक्षयः ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥ १० ॥
आकृष्णेति ततो मन्त्रलक्षजाप्यं च कारयेत् ॥
दशांशं हवनं कुर्याद्दशांशं तर्पणं तथा ॥ ११ ॥
हरिवंशश्रुतिं देवि चण्डीपाठं शिवार्चनम् ॥
विधिवत्कारयामास ब्राह्मणानां च भोजनम् ॥ १२ ॥

मथुराजीमें स्त्रीसहित वह वैश्य मरा इसलिये हे विशालाक्षि ! उसको उत्तम स्वर्गलोक प्राप्त भया ॥ ६ ॥ हे वरानने ! दश लाख वर्षतक स्वर्गवास भोगके फिर तहांसे पुण्य क्षीण हो गया तब भार्यासे युक्त ॥ ७ ॥ सुन्दर मनोहर देशमें मनुष्ययोनिको प्राप्त भया है । हे सुरेश्वरि ! यह धनधान्यसे युक्त है ॥ ८॥ हे देवेशि ! इसने पूर्वजन्ममें ब्राह्मणका धन हरा और पीछे न दिया इसलिये इसके पुत्र नहीं होता है ॥ ९ ॥ अब इसकी शांति कहेंगे कि जिससे पाप नष्ट होवे । घरके छठे भाग द्रव्यको पुण्यके कार्यमें खर्च करे ॥ १० ॥ ' आकृष्णेन रज० ' इस मन्त्रका लक्ष जप करवावे दशांश हवन, दशांश तर्पण, दशांश मार्जन करावे ॥ ११ ॥ हरिवंशको सुने विधिपूर्वक दुर्गापाठ और शिवपूजन करवाके ब्राह्म-

दशवर्णा तु गौर्देया शय्यादानं विशेषतः ॥
एवं कृते वरारोहे वंशो भवति नान्यथा ॥
व्याधिनाशः समायाति मम वाक्यमृतं भवेत् ॥ १३ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्राय० नामैकोनशततमोऽध्यायः ॥ ९९ ॥

अथ शततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

मथुरापुरि मध्ये तु शूद्र एको हि तिष्ठति ॥
शाकादीनां च सततं विक्रयं तु सदाऽकरोत् ॥ १ ॥
विष्णुभक्तिरतः शान्तः पुण्यात्मा साधुसंमतः ॥
सेवादास इति ख्यातस्तस्य पत्नी तु राधिका ॥ २ ॥
कुलाचारे रतः साधुर्द्विजसेवासु तत्परः ॥
वाणिज्यं कुरुते साधुः पुरोहितधनेन च ॥ ३ ॥

ओंको भोजन करवावे ॥ १२ ॥ दश प्रकारके वर्णवाली गौका दान और शय्यादान करे । हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे वंश बढता है इसमें अन्यथा नहीं और व्याधि नष्ट होवे यह मेरा वचन सत्य है ॥ १३ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे शतभिषानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकोनशततमोऽध्यायः ॥ ९९ ॥

शिवजी कहते हैं—मथुरापुरीमें एक शूद्र रहता था वह निरंतर सदा शाक आदिको बेचा करता ॥ १ ॥ विष्णुका भक्त शांत और पुण्यात्मा साधुजनोंका मान्य और सेवादास नामवाला था तिसकी स्त्री राधिका नामवाली थी ॥ २ ॥ वह साधुजन अपने कुलमें

बहुवर्षे गते देवि ब्राह्मणोऽपि तदागतः ॥
आदरं बहुधा कृत्वा कलत्रेण तदा शिवे ॥ ४ ॥
विषं दत्तं चतुर्थेऽह्नि भोजनान्तर्विधानतः ॥
न जानाति तदा साधुस्तद्वृत्तं ब्राह्मणस्य तु ॥ ५ ॥
मरणं वै ततो जातं ब्राह्मणस्य सुरेश्वरि ॥
ब्राह्मणस्य वधे जाते हाहाकारो गृहे गृहे ॥ ६ ॥
श्रुत्वा तच्च पुरीं त्यक्त्वा प्रयागे साधुरागतः ॥
देहं त्यक्त्वा तदा साधुर्हठं कृत्वा वरानने ॥ ७ ॥
पश्चात्तत्रैव सा गत्वा पत्नी प्राणांस्ततोऽत्यजत् ॥
प्रयागे मथुरां त्यक्त्वा तदुद्देशेन शोभने ॥ ८ ॥
बहुवर्षसहस्राणां स्वर्गवासस्ततोऽभवत् ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ९ ॥

आचारमें तथा साधुजनोंकी सेवामें तत्पर था वह पुरोहितके धनसे वणिज किया करता ॥ ३ ॥ हे देवि ! बहुतसे वर्ष व्यतीत हो चुके तब वह ब्राह्मण उसके घरमें आया । हे शिवे ! तब बहुतसा आदर करके तिसके स्त्रीने ॥ ४ ॥ चौथे दिन भोजनसमयमें उस ब्राह्मणको विष दे दिया तब उस ब्राह्मणके वृत्तांतको वह साधु शूद्र तो नहीं जाने था ॥ ५ ॥ हे सुरेश्वरि ! ब्राह्मणका मरना हो गया तब ब्रह्मवध होनेसे घर घरमें हाहाकार हो गया ॥ ६ ॥ तिस वार्त्ताको सुन वह साधु शूद्र अपनी पुरीको त्यागके प्रयागजीमें आके हे वरानने ! हठसे अपने देहका त्याग करता भया ॥ ७ ॥ हे शोभने ! पीछे वह तिस साधुकी स्त्रीभी मथुरापुरीको त्यागके प्रयागजीमें अपने पतिके पास प्राणोंको त्यागती भई ॥ ८ ॥ फिर उनको बहुत हजार वर्षोंतक स्वर्गका वास हुआ पुण्य क्षीण हो गया तब

शूद्रयोनिं विशालाक्षि देहजस्य कुले तदा ॥
पुनर्विवाहिता पत्नी पूर्वजन्मप्रसङ्गतः ॥ १० ॥
धनधान्यसमायुक्तो विद्यावान् कुलपूजितः ॥
गौराङ्गो नीचजातीनां मतज्ञो लब्धवान् स्वयम् ॥ ११ ॥
पूर्वजन्मनि भो देवि ब्राह्मणाय विषं ददौ ॥
भार्या तस्य विशालाक्षि तत्पापेनैव पातकी ॥ १२ ॥
मासि पुष्पं ततस्तस्याः संतानं नैव जायते ॥
अस्य पापस्य वै शान्तिं शृणु देवि सुशोभने ॥ १३ ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्ये च कारयेत् ॥
गायत्रीजातवेदाभ्यां त्र्यम्बकेण वरानने ॥ १४ ॥
लक्षत्रयं जपं देवि कारयामास यत्नतः ॥
हरिवंशश्रुतिं देवि भार्यया सहितस्तदा ॥ १५ ॥

मनुष्ययोनिको प्राप्त भई है ॥ ९ ॥ हे विशालाक्षि ! अपने पुत्रकेही कुलमें शूद्रयोनिमें जन्मा है और पूर्वजन्मके प्रसंगसे वही स्त्री फिर विवाही है ॥ १० ॥ धनधान्यसे युक्त है विद्यावान् और कुलमें पूजित है गौरवर्णवाला और नीच जातियोंके मतको आपही जानता है ॥ ११ ॥ हे देवि ! पूर्वजन्ममें इसकी स्त्री ब्राह्मणको विष देती भई । हे विशालाक्षि ! तिस पापसे इसकी स्त्री पातकवाली है ॥ १२ ॥ तिससे महीने २ के प्रति रजस्वला होती है परंतु संतान नहीं दीखती । हे देवि ! हे शोभने ! इसकी शांतिको सुन ॥ १३ ॥ घरके धनसे आठवां भाग धनको पुण्यकार्यमें खर्च करे । हे वरानने ! 'गायत्री और जातवेदसे० तथा त्र्यंबकं यजामहे०' इन मंत्रोंकरके ॥ १४ ॥ हे देवि ! तीन लक्ष जप यत्नकरके करावे और हे देवि ! हरिवंशको अपनी स्त्रीके संग बैठके श्रवण करे ॥ १५ ॥

होमं वै कारयामास कुण्डे शुद्धे सुदारुणे ॥
चतुष्कोणे विशालाक्षि योनिपल्लवशोभिते ॥ १६ ॥
दशांशं विधिवद्देवि तर्पणं मार्जनं ततः ॥
ब्राह्मणस्य ततो मूर्तिं दशपञ्चपलात्मिकाम् ॥ १७ ॥
विधिवत्कारयेद्देवि पूजयेच्चैव बुद्धिमान् ॥
वस्त्रालंकारशय्याभिर्भूषणैर्विविधैस्तथा ॥ १८ ॥
मन्त्रेणानेन देवेशि गन्धपुष्पैः पृथक् पृथक् ॥
सर्वकारणकर्ता त्वं साक्षीभूतो जगत्त्रये ॥ १९ ॥
पापं ब्रह्मवधं घोरं हर मे भुवनाधिप ॥
ॐ चक्रधराय नमः । ॐ त्र्यम्बकाय नमः ।
ॐ शङ्खहस्ताय नमः। ॐ सनकसनत्कुमारसन-
न्दनसनातनेभ्यो नमः ॥ २० ॥
पूजयामास विविधैर्मोदकैश्च फलैरपि ॥
प्रतिमां पूजितां तां तु सुविप्राय प्रदापयेत् ॥ २१ ॥

हे विशालाक्षि ! योनिपल्लवोंसे शोभित चतुष्कोणयुक्त सुंदर कुंडमें हवन करावे ॥ १६ ॥ हे देवि ! विधिकरके तिसके दशांशका तर्पण मार्जन करावे पीछे ब्राह्मणकी मूर्ति पंदरह पल सुवर्णकी ॥१७॥ हे देवि ! विधिकरके बनवावे और बुद्धिमान् पुरुष वस्त्र अलंकार अर्थात् गहने शय्या और नाना प्रकारके आभूषणोंकरके तिस मूर्तिका पूजन करे ॥ १८ ॥ हे देवेशि ! इस मंत्रकरके गंधपुष्पोंसे पृथक् पृथक् पूजन करे (कहे कि) तुम सबके कारणके कर्ता हो त्रिलोकीके साक्षी हो ॥ १९ ॥ हे भुवनाधिप ! मेरे ब्रह्मवधके घोर पापको हरो । ॐ चक्रधराय नमः १ ॐ त्र्यंबकाय नमः२ ॐ शङ्ख-हस्ताय नमः ३ ॐ सनकसनत्कुमारसनन्दनसनातनेभ्यो नमः ४ ॥ २० ॥ अनेक प्रकारके मोदक तथा फलोंकरके पूजन करे, फिर

दशवर्णां सवृषभां पट्टवस्त्रविभूषिताम् ॥
दद्याद्विप्राय विदुषे श्रोत्रियाय तपस्विने ॥ २२ ॥
सप्तम्यां रविवारे च व्रतं कुर्याद्विधानतः ॥
एवं करोति देवेशि पुत्रयुग्मं प्रजायते ॥ २३ ॥
कन्या नैव वरारोहे रोगं सर्वं विनश्यति ॥ २४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० पूर्वाभाद्रपदानक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम शततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥

अथैकोत्तरशततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

धर्मेण जायते पुत्रो धर्मेण लभते श्रियम् ॥
धर्मेण व्याधिनाशः स्यात्तस्माद्धर्मपरो भवेत् ॥१॥

पूजित की हुई तिस प्रतिमाको उत्तम ब्राह्मणके अर्थ देवे ॥ २१॥ और पट्टवस्त्रसे विभूषित की हुई तथा एक वृषभसे युक्त की हुई दश प्रकारके वर्णवाली गौको वेदके पढे हुए विद्वान् तपस्वी ब्राह्मणके अर्थ दान देवे ॥ २२ ॥ रविवारी सप्तमीको विधिसे व्रत करे । हे देवेशि ! ऐसे करे तो दो पुत्र उत्पन्न होवें ॥ २३ ॥ और कन्या उत्पन्न नहीं हो । हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे संपूर्ण रोग नष्ट होता है ॥ २४ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्र०नक्षत्र० प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम शततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥

शिवजी कहते हैं-धर्मसे पुत्र उत्पन्न होता है, धर्मसे लक्ष्मी प्राप्त होती है, धर्मसे व्याधि नष्ट होती है इससे धर्म करना योग्य

काम्पिल्ये नगरे देवि ब्राह्मणस्तत्र तिष्ठति ॥
स वेदपाठनिरतो धनाढ्यश्च बहूद्यमी ॥ २ ॥
तस्य पत्नी वरारोहे पतिसेवासु तत्परा ॥
एकदा चागता कन्या ब्राह्मणस्य किलानघे ॥ ३ ॥
पुत्रेण सह देवेशि चादरस्तेन वै कृतः ॥
ततो बहुदिने जाते तस्य स्वर्णं च चोरितम् ॥ ४ ॥
कन्यापुत्रेण स्वर्णं हि हृतं चेति तदा शिवे ॥
वदन्ति बहवस्तत्र जनास्तु ब्राह्मणं प्रति ॥ ५ ॥
ततो रोषपरीतात्मा पौत्रो भवति वै शिवे ॥
विषं भुक्तं तदा तेन बहुरोषाकुलेन तु ॥ ६ ॥
मरणं तस्य वै जातं पौत्रस्यैव वरानने ॥
ततो बहुदिने जाते ब्राह्मणस्य तदा मृतिः ॥ ७ ॥

है ॥ १ ॥ हे देवि ! कपिलनगरमें एक वेदपाठी ब्राह्मण रहता था वह धनाढ्य और बहुत उद्यम करनेवाला था ॥ २ ॥ हे वरारोहे ! तिसकी स्त्री पतिके सेवामें तत्पर थी । हे अनघे ! एक समय तिसके घरमें एक ब्राह्मणकी कन्या आती भई ॥ ३ ॥ हे देवेशि ! वह पुत्रसहित आई तब उसने बहुतसा आदर किया बहुतसे दिन व्यतीत हो चुके तब तिस ब्राह्मणका सुवर्ण (धन) चोरा गया ॥ ४ ॥ हे शिवे ! तब बहुतसे जन उस ब्राह्मणके प्रति ऐसे कहते भये कि, इस कन्याके पुत्रने यह धन हरा है ॥५॥ तब हे शिवे ! उस ब्राह्मणका पोता क्रोधित होता भया और बहुत रोष क्रोधसे आकुल होके तिस पौत्रने विष भक्षण करा ॥ ६ ॥ हे वरानने ! तब तिसके पौत्रका मरना हो गया फिर बहुत दिन व्यतीत हुए

तस्य पत्नी सती जाता सत्यलोकेऽवसत्तदा ॥
ततः पुण्यक्षये जाते मर्त्यलोके सुरेश्वरि ॥ ८ ॥
मानुषत्वं ततो जातमयोध्यानगरे शिवे ॥
धनधान्यसमायुक्तो राजमन्त्री विचक्षणः ॥ ९ ॥
पौत्रस्तस्य मृतो देवि तदुद्देशेन भो शिवे ॥ १० ॥
अतः पुत्रो न जायेत कन्या चैव प्रजायते ॥
शरीरे सततं चोग्रो ज्वरो जातः सुदारुणः ॥ ११ ॥
शत्रवो बहवः सन्ति न सौख्यं लभते क्वचित् ॥
पुण्यं शृणु वरारोहे पूर्वपापस्य संक्षयः ॥ १२ ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
गायत्री त्र्यम्बकं चेति श्रीश्च ते इति ऋक्त्रयम् ॥ १३ ॥
प्रतिमन्त्रं जपेल्लक्षं दशांशं हवनं ततः ॥
दशांशतर्पणं देवि मार्जनं तद्दशांशतः ॥ १४ ॥

पीछे उस ब्राह्मणकीभी मृत्यु हो गई ॥ ७ ॥ तब तिसकी स्त्री सती हो गई इसलिये सत्यलोकमें वास भया । हे सुरेश्वरि ! पुण्य क्षीण हो गया तब मृत्युलोकमें ॥ ८ ॥ मनुष्ययोनिमें प्राप्त भया । हे शिवे ! अयोध्यानगरीमें जन्मा है धनधान्यसे युक्त है राजाका मंत्री और पंडित है । हे शिवे ! हे देवि ! तिसके उद्देशकरके उसके पौत्र (पोते) की मृत्यु हो गई थी ॥९॥१०॥ इसलिये इसके पुत्र नहीं जन्मता है कन्याही जन्मती है और इसके शरीरमें निरंतर उग्र दारुण ज्वर रहता है ॥ ११ ॥ और बहुतसे शत्रु हैं कभीभी सुख नहीं होता है । हे वरारोहे ! इसके पुण्यको सुन तिसके पूर्वपापका क्षय होता है ॥ १२ ॥ घरके वित्तसे छठे भाग धनको पुण्यके कार्यमें खर्च करे । हे देवि ! ' गायत्री, त्र्यम्बकं यजामहे०, श्रीश्च ते० ' इन तीन मंत्रोंको ॥ १३ ॥ हे देवि ! फिर अलग २ एक २

गोदानं तद्दशांशं च तद्दशांशं च भोजयेत् ॥
ब्राह्मणान् चैव देवेशि श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ॥ १५ ॥
कूष्माण्डं नारिकेरं च पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥
गङ्गामध्ये प्रदातव्यं पूर्वपापविशुद्धये ॥ १६ ॥
वृषभस्तरुणः शुभ्रो घण्टाचामरशोभितः ॥
ब्राह्मणाय प्रदातव्यः शय्यादानं विशेषतः ॥ १७ ॥
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥
रोगस्यैव निवृत्तिः स्याज्ज्वरस्तस्य न जायते ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहितायां पार्वतीहर० पूर्वाभाद्रपदानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्राय०नामैकाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥

लाख जपवावे फिर दशांश हवन, दशांश तर्पण तथा दशांश मार्जन करावे ॥ १४ ॥ हे देवेशि ! तिसका दशांश गोदान करे तिससे दशांश ब्राह्मणोंको भोजन करावे, श्रद्धाभक्तिसे युक्त रहे ॥ १५ ॥ और कोहले तथा नारियलको पञ्चरत्नसे युक्त करके पूर्वपापकी शुद्धिके अर्थ गंगाजीके मध्यमें दान करे ॥ १६ ॥ पीछे घंटा और चमरसे युक्त किया हुआ श्वेतवर्णवाला बैलका दान ब्राह्मणके अर्थ देवे विशेषकरके शय्याका दान करे ॥ १७ ॥ हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे शीघ्रही पुत्र उत्पन्न होवे और रोगकी निवृत्ति होवे ज्वर तिसके कभीभी नहीं होवे ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्रप० द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नामैकाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥

अथ द्व्युत्तरशततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

गान्धारनगरे देवि ब्राह्मणो वसति प्रिये ॥
दयाशर्मा इति ख्यातो मद्यपानरतः सदा ॥ १ ॥
वेश्यासुरतसंतृप्तश्चौरकर्मरतः सदा ॥
म्लेच्छाचाररतः सोऽपि म्लेच्छान्नं भुज्यते सदा॥२॥
धनं तु संचितं तेन म्लेच्छभार्यासु तत्परः ॥
श्राद्धकर्मविहीनश्च पितुर्मातुश्च निन्दकः ॥ ३ ॥
एवं बहुगते काले मरणं तस्य जायते ॥
महारौद्रं च नामानं नरकं नाम दारुणम् ॥ ४ ॥
निक्षितः शृङ्खलैर्बद्धा यमदूतैर्यमाज्ञया ॥
षष्टिवर्षसहस्राणि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं– हे देवि ! हे प्रिये ! गांधारनगरमें दयाशर्म नामवाला एक ब्राह्मण बसता है वह सदा मदिरापान करनेमें तत्पर होता भया ॥ १ ॥ वेश्याके संगमें तत्पर रहनेवाला सदा चौरकर्ममें रत और म्लेच्छोंके आचारमें रत था सदा म्लेच्छोंकेही अन्नको भोजन किया करता ॥ २ ॥ इसने बहुतसा धन संचित किया और सदा म्लेच्छोंकी भार्यामें रत रहा श्राद्धके कर्मसे हीन और मातापिताकी निंदा करनेवाला था ॥ ३ ॥ ऐसे बहुतसी अवस्था बीत चुकी तब तिसका मरण हुआ तब महारौद्रनामवाले दारुण घोर नरकमें ॥ ४ ॥ यमराजके दूतोंने यमकी आज्ञा पायके बेडियोंसे बांधके (तहां नरकमें) पटका साठ हजार वर्षोंतक नरककी

नरकान्निःसृतो देवि गोधायोनिरभूत्पुरा ॥
सरटस्य पुनर्योनिं चटकत्वं ततोऽभवत् ॥ ६ ॥
मानुषत्वं ततो लेभे मध्यदेशे वरानने ॥
धनधान्यसमायुक्तो वंशहीनो महेश्वरि ॥ ७ ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि ब्राह्मणत्वं यतोऽत्यजत् ॥
तत्पापेनैव भो देवि पुत्रस्य मरणं मुहुः ॥८॥
अनेन पितरौ वृद्धौ त्यक्तौ दुर्मतिना यतः ॥
अतः शरीरे वै रोगः काकवन्ध्या सहव्रणा ॥ ९ ॥
शान्तिं शृणु वरारोहे यतः पुत्रो हि जायते ॥
गृहवित्ताष्टमं भागं पुण्यकार्ये च कारयेत् ॥ १० ॥
पलपञ्चसुवर्णस्य गणाध्यक्षस्य चाकृतिम् ॥
कृत्वा वै पूजयेद्देवि मन्त्रेणानेन सुव्रते ॥ ११ ॥

पीडाको भोगके ॥ ५ ॥ हे देवि ! फिर नरकसे निकस गोहकी योनिको प्राप्त होता भया पीछे किरलकांटकी योनि फिर चिडेकी योनि प्राप्त भई ॥ ६ ॥ पीछे मनुष्ययोनि प्राप्त भई । हे वरानने ! हे महेश्वरि ! ! यह मध्यदेशमें धनधान्यसे युक्त और सन्तान नहीं है ॥ ७ ॥ हे देवेशि ! इसने पूर्वजन्ममें ब्राह्मणपना त्याग दिया था । हे देवि ! तिस पापसे इसके पुत्र वारंवार मरते हैं॥८॥ जो कि इस दुष्टबुद्धिवालेने अपने वृद्ध माता पिता त्याग दिये थे इसलिये इसके शरीरमें रोग होता है और इसकी स्त्री काकवंध्या है और व्रणोंवाली है ॥ ९ ॥ हे वरारोहे ! जिससे पुत्र होवे तिस शांतिको सुनो । घरके वित्तसे आठवां भाग धनको पुण्यकार्यमें खर्च करे ॥ १० ॥ हे देवि ! हे सुव्रते ! ! पंद्रह पल सुवर्णकी

गणाध्यक्ष सुरेशान सर्वोपद्रवनाशन ॥
मम पूर्वकृतं पापं हर दुःखनिवारण ॥ १२ ॥
एवं कृत्वा विधानं च ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥
ततो भवति वंशश्च व्याधिनाशश्च जायते ॥ १३ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभा० तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्व्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥

अथ त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

वैदण्डे च पुरे देवि लुब्धको वसति प्रिये ॥
सेमानाम्ना स विख्यातस्तस्य भार्यातिनिष्ठुरा ॥ १ ॥
प्रत्यहं मृगमांसेन व्ययं कुर्य्याद्दिनेदिने ॥
एवं सर्वं वयो जातं लुब्धकस्य तदा प्रिये ॥ २ ॥

शिवजीकी मूर्ति बना इस मंत्रसे पूजन करे ॥ ११ ॥ हे गणाध्यक्ष ! हे सुरेशान ! सब उपद्रवोंको नष्ट करनेवाले ! हे दुःखनिवारण ! पूर्वजन्मके मेरे पापोंको हरो ॥ १२ ॥ ऐसे संपूर्ण विधानकरके पीछे (मूर्ति आदिको) ब्राह्मणके अर्थ दे देवे तब वंश बढे और व्याधि नष्ट होवे ॥ १३ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्र० तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम द्व्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! हे प्रिये ! वैदंडनामक पुरमें एक लुब्धक (व्याध) बसता भया वह सेमानामसे विख्यात था तिसकी स्त्री अत्यन्त कठोर थी ॥ १ ॥ वह दिन २ प्रति मृगमांससे

मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥
निक्षिप्तो नरके घोरे षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥ ३ ॥
भुक्तं च विविधं दुःखं कृमिसूचीमुखैर्युतम् ॥
मानुषत्वं ततो जातं धनधान्यसमन्वितम् ॥ ४ ॥
पुत्राणां मरणं देवि जायते हि विपाकतः ॥
पलपञ्चसुवर्णस्य माल्यं मेरुयुतं तु वै ॥ ५ ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्याच्छय्यादानं विशेषतः ॥
एवं कृते वरारोहे पुत्रस्तस्य च जीवति ॥ ६ ॥
व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम् ॥७॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसं० पूर्वाभाद्रपदान० चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ॥१०३॥

अपना खर्च किया करता ऐसे हे प्रिये ! तिस लुब्धककी संपूर्ण अवस्था बीत चुकी तब ॥ २ ॥ तिसका मरण हो गया उस समय धर्मराजके दूतोंने यमकी आज्ञा पायके वह साठ हजार वर्षोंतक घोर नरकमें पटका ॥ ३ ॥ तहां अनेक प्रकारके दुःख सूचीमुख आदि कृमियोंसे भोगा तिससे अनन्तर मनुष्य भया है धनधान्यसे युक्त है ॥ ४ ॥ हे देवि ! पूर्व कर्मविपाकसे इसके पुत्रोंकी मृत्यु होती है पांच पल सुवर्णकी माला बनवावे उसके बीचमें सुमेरु बनवावे ॥ ५ ॥ पीछे उसको ब्राह्मणके अर्थ दान देवे शय्यादान विशेषकरके देवे । हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे पुत्र जीवता है ॥ ६ ॥ संपूर्ण व्याधि नष्ट होवे और काकवन्ध्या स्त्री पुत्रको प्राप्त होवे ॥ ७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे पूर्वाभाद्रपदान० चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०३ ॥

अथ चतुरधिकशततमोऽध्यायः ।



॥ शिव उवाच ॥

श्रीपुरे नगरे देवि द्विज एकोऽवसत्पुरा ॥
एकदा तस्य वै गेहे गुरुपुत्रः समागतः ॥ १ ॥
आदरं बहुधा कृत्वा मासमेकं तदा खलु ॥
गुरुपुत्रस्य घातं हि कृत्वा द्रव्यस्य लोभतः ॥ २ ॥
तेन पापेन भो देवि महापापयुतो नरः ॥
पुत्रहीनश्च देवेशि जायते धनवर्जितः ॥ ३ ॥
वंशगोपालमन्त्रं वै गायत्रीमन्त्रमेव च ॥
हरिवंशश्रवणं देवि कुर्याच्च विधिपूर्वकम् ॥ ४ ॥
तुलसीवाटिकां कृत्वा तन्मूले विष्णुपूजनम् ॥
दशवर्णां ततो दद्यात्पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं–हे देवि ! पहले श्रीपुरनगरमें एक ब्राह्मण बसता भया एक समय तिसके घरमें उसके गुरुका पुत्र आता भया ॥ १ ॥ एक महीनेतक तहां बहुत आदर करके रक्खा पीछे द्रव्यके लोभसे गुरुके पुत्रका घात (मृत्यु) किया ॥ २ ॥ हे देवि ! तिस पापकरके वह मनुष्य महापापी है इसलिये इसके पुत्र नहीं होता है और धनहीन है ॥ ३ ॥ हे देवि ! विधिपूर्वक संतानगोपालका मंत्र, गायत्रीमंत्र जपवावे और हरिवंशपुराणको सुने ॥ ४ ॥ तुलसीका थांवला बनाके तिसकी जडमें विष्णुका पूजन करे और पूर्वपापको नष्ट करनेवाली दश प्रकारके वर्णोंवाली

स्वर्णनिष्कस्ततो दद्याद्दशगोदानमेव च ॥
एवं कृते वरारोहे वंशो भवति नान्यथा ॥ ६ ॥
व्याधिनाशो भवेद्देवि सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ७ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० उत्तराभाद्रपदान० प्रथमचरणप्रायश्चित्तक० नाम चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥१०४॥

अथ पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

मणिकाख्यपुरे रम्ये वसन्ति बहवो जनाः ॥
लवणकारो वसत्येको नित्यं लवणविक्रयी ॥ १ ॥
ब्राह्मणीगमनं तेन कृतं शूद्रेण वै शिवे ॥
तेन पापेन भो देवि वंशहीनश्च जायते ॥ २ ॥

गौका दान करे ॥ ५ ॥ निष्क अर्थात् एक तोला प्रमाण सुवर्णका दान और दश गौओंका दान करे। हे वरारोहे! ऐसे करनेसे निश्चय वंश बढता है ॥ ६ ॥ हे देवि! व्याधि नष्ट होती है यह मेरा वचन सत्य है इसमें संशय नहीं ॥ ७॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वती० उत्तरानक्ष० प्रथमच० प्रायश्चित्तकथनं नाम चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०४ ॥

शिवजी कहते हैं-रमणीक मणिपुरमें बहुतसे जन वास करते हैं वहां एक लवणकार (नमक बनानेवाला) बसता था वह नित्य लवण बेचा करता ॥ १ ॥ हे शिवे! तिस शूद्रने ब्राह्मणीके संग गमन किया था। हे देवि! तिस पापसे यह वंशहीन है ॥ २ ॥

व्याधियुक्तो महेशानि पीडा चाङ्गेषु जायते ॥
शान्तिं शृणु महेशानि येन पापनिवर्तनम् ॥ ३ ॥
गृहवित्ताष्टमैर्भागैर्ब्राह्मणं तोषयेद्यदि ॥
हरिवंशश्रवं देवि विधिवद्यदि पार्वति ॥ ४ ॥
ब्राह्मणान्भोजयेद्देवि कूष्माण्डं चैव दापयेत् ॥
एवं कृते वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा ॥ ५ ॥
इति श्रीकर्मवि० पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चि० नाम पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०५ ॥

अथ षडधिकशततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अलकाख्यपुरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये ॥
चन्द्रवर्मेति विख्यातो भार्या देवीति संज्ञिका ॥ १ ॥

हे महेशानि ! यह बीमारीसे युक्त है और इसके अंगोंमें बहुतसी पीडा रहती है । हे महेशानि ! जिससे पूर्वपापकी निवृत्ति हो तिस शांतिको सुन ॥ ३ ॥ घरके वित्तसे आठवां भाग धनको दान करके ब्राह्मणको प्रसन्न करे और हे देवि ! हे पार्वति ! हरिवंशको विधिपूर्वक सुने ॥ ४ ॥ हे देवि ! ब्राह्मणोंको भोजन करवावे और पेठे (कोहले) का दान करे । हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे पुत्रकी उत्पत्ति होती है इसमें अन्यथा नहीं ॥ ५ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्र० द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम पंचाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! हे प्रिये ! अलकानगरीमें एक क-

क्षत्रधर्मरतो नित्यं धनाढ्यः शूरसंमतः ॥
कृष्णदास इति ख्यातो विप्रस्तस्य पुरोहितः ॥ २ ॥
क्रोधतः क्षत्रियस्यापि बभूव मरणं यतः ॥
पुरोहितस्य विप्रस्य सप्ताहाच्च सुतक्षयः ॥ ३ ॥
व्याधिपीडागुल्मजालैः पीड्यते सततं हि सः ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं चरेत् ॥ ४ ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत ॥
ब्राह्मणस्य ततो देवि प्रतिमां कारयेद् बुधः ॥ ५ ॥
पूजयित्वा ब्राह्मणाय दत्त्वा पापनिवृत्तये ॥
पलपञ्चसुवर्णस्य दद्याद्वै ब्राह्मणाय च ॥ ६ ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं मृतवत्सा सुपुत्रका ॥ ७ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य तृतीयचरणप्राय० नाम षडधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०६ ॥

त्रेय बसता था वह चन्द्रवर्मा नामवाला था और उसकी स्त्री देवी नामवाली थी ॥ १ ॥ वह नित्यप्रति क्षत्रियके धर्ममें तत्पर था और शूरवीरोंमें मान्य तथा कृष्णदास नामवाला था उसका एक पुरोहित ब्राह्मण था ॥ २ ॥ तिस क्षत्रियके क्रोध होनेसे उस काल-में तिस पुरोहित ब्राह्मणकी मृत्यु होती भई और सात दिनोंके भीतर तिस ब्राह्मणका पुत्रभी मर गया ॥ ३ ॥ तिस पापसे उत्पन्न हुई व्याधि पीडा गुल्मजालों (गूमडों) से वह सदा पीडित है उससे गायत्रीके मूलमंत्रका पांच लक्ष जप करावे ॥ ४ ॥ घरमें धन होय उसके छठे भागका पुण्यकर्म करावे । हे देवि ! फिर बुद्धिमान् पुरुष ब्राह्मणकी मूर्ति करावे ॥ ५ ॥ और तिस मूर्तिका

अथ सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अयोध्यानिकटे देवि विप्र एकोऽवसत्पुरा ॥
वैष्णवोक्तप्रकारेण दीक्षां प्राप्तो हि गर्वितः ॥ १ ॥
वेदनिन्दारतो साधुः श्राद्धादिविधिवर्जितः ॥
शिवभक्तिरतानां च नाभिवादं समाचरेत् ॥ २ ॥
विप्रद्रोहरतश्चैव हरिमन्दिरशोभितः ॥
एकदा तस्य गेहे तु चागतः पथिकः प्रिये ॥ ३ ॥
रुद्राक्षालंकृतो दान्तस्तस्मै क्रूरमभाषत ॥
विषमाहारपानादौ दत्तं तेन द्विजन्मने ॥ ४ ॥

पूजन करके पाप दूर होनेके अर्थ ब्राह्मणको देके पांच पल सुवर्ण ब्राह्मणको और देवे ऐसे करनेसे काकवंध्या स्त्रीके पुत्र जन्मता है मृतवत्सा सुंदर पुत्रवाली होती है ॥ ६ ॥ ७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रपदान० तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम षडधिकशततमोऽध्यायः ॥१०६॥

शिवजी कहते हैं–हे देवि ! अयोध्यापुरीके समीप एक ब्राह्मण पहले वसता भया वह वैष्णवमतके अनुसार दीक्षाको प्राप्त होके अति अभिमानकरके युक्त था ॥ १ ॥ वह वेदकी निंदा करनेवाला श्राद्धादिकोंकी विधिकरके रहित था और जो शिवजीकी भक्तिसे तत्पर थे उन्होंको नमस्कार प्रणामभी नहीं करता ॥ २ ॥ ब्राह्मणसे द्रोह करनेवाला तथा हरिमंदिरसे शोभित था । हे प्रिये ! एक समय तिसके घरमें एक पथिक (बटेऊ) आता भया ॥ ३ ॥ वह रुद्राक्षकी मालासे युक्त तथा जितेंद्रिय था तिसके अर्थ इसने क्रूर

रात्रौ तद्द्रव्यलोभेन घटं कृत्वा त्वपाहरत् ॥
कूपमध्ये तु तं विप्रं पापीयान् वैष्णवाधमः ॥ ५ ॥
कालान्तरे मृतिर्जाता तस्य साधोर्दुरात्मनः ॥
विष्णुनाम स्मरेन्नित्यं वैकुण्ठे वासमाप्तवान् ॥ ६ ॥
क्षीणे पुण्ये ततो देवि विड्भक्षो ग्रामसूकरः ॥
ततो मनुष्ययोनिश्च दृश्यते पुत्रवर्जितः ॥ ७ ॥
रोगवानल्पकीर्तिश्च स एव सुरसुन्दरि ॥
अतः शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व हरवल्लभे ॥ ८ ॥
लक्षमुद्रां ब्राह्मणाय दत्त्वा काश्यास्तु सेवनम् ॥
ब्रह्मचर्यरतो नित्यं सतो मुच्येत पातकात् ॥ ९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चि० नाम सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०७ ॥

वचन कहा और आहार पान आदिमें तिस ब्राह्मणने पथिकको विष दे दिया ॥ ४ ॥ रात्रिसमयमें तिसके द्रव्यके लोभसे तिस ब्राह्मणको वह पापी अधम वैष्णव कुएमें घटकी तरह बनाके पासता भया ॥ ५ ॥ फिर कालांतरमें तिस दुरात्मा साधुकी मृत्यु भई यह नित्यप्रति विष्णु भगवान्‌के नामका स्मरण किया करता इसलिये इसको वैकुंठवास होता भया ॥ ६ ॥ हे देवि ! पीछे पुण्य क्षीण होनेके बाद वह विष्ठाको भक्षण करनेवाला ग्रामका सूकर भया पीछे मनुष्ययोनिमें प्राप्त हुआ है, पुत्ररहित है ॥ ७ ॥ हे सुरसुन्दरि ! रोगवान् और स्वल्पकीर्तिवाला है । हे हरवल्लभे ! अब इसकी शांतिको कहूंगे सो सुन ॥ ८ ॥ ब्राह्मणके अर्थ लक्ष मुद्रा

अथ अष्टाधिकशततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

मगधे विषये देवि लुब्धको वसति प्रिये ॥
प्रत्यहं मृगमांसेन व्ययं कुर्याद्दिने दिने ॥ १ ॥
एवं सर्वं वयो जातं वृद्धे सति वरानने ॥
मरणं तस्य वै जातं यमदूतैर्यमाज्ञया ॥ २ ॥
निक्षिप्तो नरके घोरे षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥
भुक्तं विविधजं दुःखं कृमिसूचीमुखैर्युतम् ॥ ३ ॥
नरकान्निःसृतो देवि मृगत्वं जायते खलु ॥
शृगालस्य ततो योनिं छागयोनिस्ततोऽभवत् ॥४॥

(रुपयों) का दान देके काशीजीका सेवन करे ब्रह्मचर्यमें रत रहे तब पापसे छूटे ॥ ९ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे उत्तराभाद्रपदानक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायः० नाम सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०७ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! मगधदेशमें एक लुब्धक वसता था। हे प्रिये ! वह दिन २ प्रति मृगोंके मांसकरके अपना खर्च चलाता ॥ १ ॥ हे वरानने ! ऐसे उसकी संपूर्ण अवस्था व्यतीत होके वृद्ध अवस्था हुई तब तिसकी मृत्यु भई फिर यमके दूतोंने यमकी आज्ञासे ॥ २ ॥ साठ हजार वर्षोंतक घोर नरकमें डाला तहां अनेक प्रकारका दुःख सूचीमुख आदि कृमियोंकरके भोगा ॥ ३ ॥ हे देवि ! नरकसे निकसके पीछे मृगयोनिको प्राप्त भया पीछे गीदडकी योनि प्राप्त भई फिर बकरेकी योनिको प्राप्त भया

मानुषत्वं ततो जातं धनधान्यसमन्वितम् ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि जलदानं च वै कृतम् ॥ ५ ॥
धनाढ्यत्वं पुनर्जातो ह्यपुत्रो मृगताडनात् ॥
पुत्राश्च बहवो जाता मरणं तेषु जायते ॥ ६ ॥
रोगाणां च तथोत्पत्तिर्ज्वरश्चैव पुनः पुनः ॥
शान्ति शृणु वरारोहे पूर्वपापप्रणाशिनीम् ॥ ७ ॥
गृहवित्तषडंशेन पुण्यकार्यं च कारयेत् ॥
गायत्र्या वा शिवायेति जातवेदेति वै पुनः ॥ ८ ॥
दशायुतजपं कुर्याद्दशांशं हवनं ततः ॥
दशांशं तर्पणं देवि मार्जनं तद्दशांशतः ॥ ९ ॥
ततो वै भोजयेद्भक्त्या द्विजान् देवि दशांशतः ॥
दशवर्णां ततो दद्याद्वृषभं भूषितं शुभम् ॥ १० ॥

॥ ४ ॥ तिससे अनन्तर मनुष्य भया है, धनधान्यसे युक्त है । हे देवेशि ! इसने पूर्वजन्ममें जलदान किया था ॥ ५ ॥ इसलिये धनाढ्य है और इसने मृगोंको ताडना करी थी इससे पुत्ररहित है बहुतसे पुत्र भये परंतु उनकी मृत्यु हो जाती है ॥ ६ ॥ रोगोंकी उत्पत्ति तथा वारंवार ज्वर होता है । हे वरारोहे ! पूर्वपापको नष्ट करनेवाली इसकी शांतिको सुन ॥ ७ ॥ घरके धनसे छठे भाग धनको पुण्यके कार्यमें खर्च करे " गायत्री वा ॐ नमः शिवाय वा जातवेदसे " इन मन्त्रोंका एक लक्ष जप करावे । हे देवि ! तिसका दशांश हवन, तिसका दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन करावे ॥ ८ ॥ ९॥ हे देवि ! पीछे मार्जनका दशांश संख्याप्रमाण ब्राह्मणोंको भोजन करवावे पीछे दश प्रकारके वर्णवाली गौका दान करे और विभूषित किये हुए उत्तम एक बैलका दान करे ॥ १० ॥

पलपञ्चसुवर्णस्य माल्यं मेरुयुतं तु वै ॥
ब्राह्मणाय ततो दद्याच्छय्यादानमनन्तरम् ॥ ११ ॥
एवं कृते वरारोहे पुत्रः खलु प्रजायते ॥
व्याधयः संक्षयं यान्ति काकवन्ध्या लभेत्सुतम्॥१२॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०८॥

अथ नवाधिकशततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

श्रीपुरे नगरे देवि द्विज एकोऽवसत्पुरा ॥
पुत्रपौत्रयुतो देवि धनधान्यसमन्वितः ॥ १ ॥
वैश्यकर्मरतो नित्यं क्रयविक्रयतत्परः ॥
महिषीं वृषभं वस्त्रं चामरं गजवाजिनौ ॥ २॥

और पांच पल सुवर्णकी माला सुमेरुसे युक्त बनवावे फिर उसको ब्राह्मणके अर्थ दान देवे तिससे अनंतर शय्याका दान करे ॥ ११ ॥ हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे निश्चय पुत्र होवे संपूर्ण व्याधि नष्ट हो और काकवन्ध्या स्त्री पुत्रको प्राप्त होती है ॥ १२ ॥

इति श्रीकर्मविपाकभाषाटीकायां पार्वतीहरसं० रेवतीनक्षत्रस्य प्रथमचरणप्रायश्चित्तकथनं नामाष्टाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०८ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! पहले श्रीपुरनगरमें एक ब्राह्मण बसता भया वह पुत्र पौत्र तथा धनधान्यसे युक्त था ॥ १ ॥ सो नित्यप्रति वैश्यके कर्ममें रहता, खरीदने बेचनेका व्यवहार करता

प्रत्यहं विक्रयं कृत्वा कृतश्च धनसंग्रहः ॥
एकदा तस्य वै गेहे गुरुपुत्रः समागतः ॥ ३॥
आदरं बहुधा कृत्वा मासे याते ततः शिवे ॥
गमनं च हरिद्वारे स्नानार्थं कृतवांस्तथा ॥ ४ ॥
गुरुपुत्रेण भो देवि स्वर्णमूर्तिद्वयं तथा ॥
ब्राह्मणाय तु दत्तं वै ततो वै गमनं कृतम् ॥ ५ ॥
हरिद्वारं ततो गत्वा तत्र प्राणमथाऽत्यजत् ॥
मूर्तिद्वयं गुरोश्चैव विक्रीतं तद्व्ययः कृतः ॥ ६ ॥
एवं बहुगते काले मरणं ब्राह्मणस्य च ॥
यमाज्ञया महादूतैर्नरके नाम कर्दमे ॥ ७ ॥
निक्षिप्तो वै ततो देवि षष्टिवर्षसहस्रकम् ॥
नरकान्निःसृतो देवि व्याघ्रयोनिस्ततोऽभवत् ॥ ८ ॥

भया । भैंस, बैल, वस्त्र, चमर, हस्ती, अश्व इनको बेचा करता ॥ २ ॥ दिन २ प्रति इनको बेचके धनसंग्रह किया । एक समय तिसके घरमें गुरुका पुत्र आता भया ॥ ३ ॥ तब उसका बहुत आदर किया । हे शिवे ! एक महीना हो चुका तब स्नानके वास्ते हरिद्वारको गमन करता भया ॥ ४ ॥ हे देवि ! तब उस गुरुपुत्रने दो सुवर्णकी मूर्ति ब्राह्मणके अर्थ सौंप दी पीछे गमन किया ॥ ५ ॥ फिर तहां हरिद्वारपर जाके प्राणोंको त्यागता भया और उस ब्राह्मणने गुरुपुत्रकी दोनों मूर्ति बेंचके खर्च कर दी ॥ ६ ॥ ऐसे बहुतसा काल बीत चुका तब ब्राह्मणकी मृत्यु हो गई तब यमके दूतोंने धर्मराजकी आज्ञा पाय कर्दमसंज्ञक नरकमें ॥ ७ ॥ पटका । हे देवि ! पीछे साठ हजार वर्षोंतक नरककी पीडाको भोगके नरकसे निकस भेडियेकी योनि प्राप्त होती भई ॥ ८ ॥

तीर्थे पुण्यतमे देवि कौसलायां सुरेश्वरि ॥
बिडालस्य ततो योनिं मानुषत्वं ततोऽभवत् ॥ ९ ॥
ब्राह्मणस्य कुले जन्म ज्ञानवान् प्रियदर्शनः ॥
देवताराधने प्रीतिः परस्त्रीलम्पटस्तथा ॥ १० ॥
तस्यापत्यत्रयं देवि कन्यका पुत्रकौ तथा ॥
तेषां वै मरणं जातं पुनः पुत्रो न जायते ॥ ११ ॥
काकवन्ध्या भवेद्भार्या गौराङ्गी सुन्दरी तु सा ॥
तन्वङ्गी दीर्घकेशी च स्वपतौ प्रियभाषिणी ॥ १२ ॥
तस्य पापक्षयं वक्ष्ये पुनः पुत्रो यतो भवेत् ॥
हरिवंशश्रुतिं कुर्याद्गोपालस्य तु कीर्तनम् ॥ १३ ॥
वंशगोपालमन्त्रस्य गायत्रीमन्त्रकस्य च ॥
लक्षद्वयं वरारोहे जपं वै कारयेत्सुधीः ॥ १४ ॥

हे देवि ! हे सुरेश्वरि ! पवित्र तीर्थपर कौशलापुरीमें बिलावकी योनिको प्राप्त हो फिर मनुष्ययोनिको प्राप्त होता भया ॥ ९ ॥ ब्राह्मणके कुलमें जन्म है ज्ञानवान् तथा प्रियदर्शनवाला है देवताके आराधन करनेमें प्रीतियुक्त तथा पराई स्त्रीकी इच्छा करनेवाला है ॥ १० ॥ हे देवि ! इसके तीन संतान भई एक कन्या दो पुत्र सो तिन्होंकी मृत्यु हो गई है फिर पुत्र नहीं जन्मा है ॥ ११ ॥ गौरवर्णवाली सुन्दररूपवती इसकी स्त्री काकवंध्याही है सूक्ष्म अंगवाली बडे केशोंवाली तथा अपने पतिसे प्रिय बोलनेवाली है ॥ १२ ॥ अब तिसके पाप नष्ट होनेकी विधि कहेंगे कि जिससे पुत्र उत्पन्न होवे हरिवंशको सुने और गोपालका कीर्तन करे ॥ १३ ॥ हे वरारोहे ! संतानगोपालमंत्र वा गायत्रीमंत्र इनका दो लाख जप करावे ॥ १४ ॥

हवनं तद्दशांशेन तर्पणं मार्जनं तथा ॥
तुलसीवाटिकां कृत्वा तन्मूले विष्णुपूजनम्॥ १५॥
दशवर्णगवां दानं शय्यादानं विशेषतः ॥
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाच्छतसंख्यान्द्विजोत्तमान् १६॥
विष्णोश्च प्रतिमां कृत्वा सौवर्णीं दशभिः पलैः ॥
पूजयित्वा विधानेन ब्राह्मणाय प्रदापयेत् ॥ १७ ॥
एवं कृते न संदेहो वंशो भवति नान्यथा ॥ १८ ॥
इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य द्वितीय-चरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवाधिकशततमोऽध्यायः॥ १०९॥

अथ दशाधिकशततमोऽध्यायः।

॥ शिव उवाच ॥

माणिक्ये च पुरे देवि वसन्ति बहवो जनाः ॥
लवणकृद्वसत्येको प्रत्यहं लवणं कृतम् ॥ १ ॥

जपका दशांश हवन, तद्दशांश तर्पण तथा मार्जन करवावे। तुलसीका थांवला बनाके तिसके मूलमें विष्णुभगवान्का पूजन करे ॥ १५ ॥ दश प्रकारके वर्णोंवाली गौओंका दान करे विशेष करके शय्यादान करे पीछे सौ (१००) ब्राह्मणोंको भोजन करवावे ॥ १६ ॥ दश पल प्रमाण सुवर्णकी विष्णुकी मूर्ति बनवाकर बिधिसे पूजन कर तिस मूर्तिको ब्राह्मणके अर्थ दान देवे ॥ १७ ॥ ऐसे करनेसे वंश बढता है इसमें अन्यथा नहीं ॥ १८ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य द्वितीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम नवाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०९ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! माणिक्यपुरमें बहुतसे जन बसते

लवणं विक्रयेन्नित्यं व्ययं कृत्वा दिने दिने ॥
तस्य मित्रं द्विजः कश्चिदागतस्तस्य वै गृहे ॥ २ ॥
धनाढ्यो रत्नसंयुक्तस्तत्र वासमकारयत् ॥
आदरं बहुसन्मानं कृत्वा मित्रेण वै शिवे ॥ ३ ॥
पत्नी शूद्रस्य वै हृष्टा पुंश्चली चपला तु सा ॥
मासमेकं वरारोहे तस्य मित्रस्य वै स्थितिः ॥ ४ ॥
मित्रपत्न्या विषं दत्तं ब्राह्मणाय तदा शिवे ॥
ब्राह्मणेन च न ज्ञातं भोजनाऽभ्यन्तरे तथा ॥ ५ ॥
ब्राह्मणस्याभवन्मृत्युरर्द्धरात्रे गते सति ॥
नद्यां शवं ततस्त्यक्त्वा समगृह्णाच्च तद्धनम् ॥ ६ ॥
ब्राह्मणार्थं च संगृह्य कृतं व्ययमहर्निशम् ॥
भार्यया सह पुत्राभ्यां भुक्त्वा द्रव्यं वरानने ॥ ७ ॥

है तहां कोई लवणकार बसता था सो दिन २ प्रति लवण (नमक) बनाया करता ॥ १ ॥ नित्यप्रति नमककोही बेचा करता उसीमें अपना खर्च चलाता था तिसके घरमें कोई ब्राह्मण तिसका मित्र आता भया ॥ २ ॥ धनाढ्य और रत्नोंसे युक्त था सो वह तहां वास करता भया । हे शिवे ! उसके मित्रने बहुतसा आदर सन्मान करके रक्खा ॥ ३ ॥ तिस शूद्रकी स्त्री हृष्ट पुष्ट थी और व्यभिचारिणी थी तथा चपल थी । हे वरारोहे ! उस शूद्रके मित्रकी स्थिति एक महीनेतक वहां रही ॥ ४ ॥ हे शिवे ! तब उस मित्रकी स्त्रीने ब्राह्मणको विष दे दिया भोजनके अंदर दिया हुआ विष ब्राह्मणको मालूम नहीं भया ॥ ५ ॥ पीछे आधी रात्रि व्यतीत हो गई तब उस ब्राह्मणकी मृत्यु हो गई फिर उस मुरदेको नदीमें पटक उसका सब धन ग्रहण करा ॥ ६ ॥ हे वरानने ! ब्राह्मणके

ततो वृद्धे च वयसि मरणं समजायत ॥
पश्चान्मृता तु सा भार्या कुलटा व्यभिचारिणी ॥ ८ ॥
यमदूतैर्महाघोरे नरके पङ्कसंज्ञके ॥
कुम्भीपाके तदा देवि निक्षिप्तश्च यमाज्ञया ॥ ९ ॥
युगमेकं विशालाक्षि भुक्त्वा नरकयातनाम् ॥
नरकान्निःसृतो देवि सूकरत्वं प्रजायते ॥ १० ॥
पुनः काकस्य वै योनिं बिडालत्वं ततोऽभवत् ॥
मानुषत्वं ततो देवि देशे शुभ्रे तदाऽभवत् ॥ ११ ॥
पूर्वजन्मनि देवेशि कुरुक्षेत्रे यतो मृतः ॥
अतो धनं भवत्तस्य नाऽपत्यं द्विजहत्यया ॥ १२ ॥
शरीरे जायते व्याधिर्भार्या तस्य मृतप्रजा ॥
अस्य पापस्य शमनीं शान्तिं शृणु वरानने ॥ १३ ॥

धनको ग्रहण करके स्त्रीपुत्रसहित हो खर्च किया संपूर्ण धन भोगा ॥७॥ वृद्ध अवस्था भई तब उसकी मृत्यु हो गई पीछे वह कुलटा व्यभिचारिणी उसकी स्वामी मर गई ॥ ८ ॥ हे देवि ! पंकसंज्ञक महाघोर नरकमें कुंभीपाकमें धर्मराजकी आज्ञा पाके यमके दूतोंने पटका ॥९॥ हे विशालाक्षि ! एक युगपर्यंत नरककी पीडा भोगके नरकसे निकस हे देवि ! शूकरकी योनिको प्राप्त होता भया ॥ १० ॥ पीछे कागकी योनि प्राप्त भई पीछे बिलावकी योनि प्राप्त भई । हे देवि ! पीछे शुद्ध देशमें मनुष्ययोनि प्राप्त भई ॥ ११ ॥ हे देवेशि ! यह पूर्वजन्ममें कुरुक्षेत्रविषे मृत्युको प्राप्त भया इसलिये तिसके धन तो है परंतु ब्राह्मणकी हत्या करनेसे संतान नहीं है ॥ १२ ॥ इसके शरीरमें व्याधि है स्त्रीके संतान नहीं जीती है ।

गृहवित्ताष्टमं भागं ब्राह्मणाय समर्पयेत् ॥
हवनं कारयेद्देवि कुण्डे योनिसुशोभिते ॥ १४ ॥
चतुरस्रे वरारोहे दशांशं विधिपूर्वकम् ॥
तर्पणं तद्दशांशेन तद्दशांशेन मार्जनम् ॥ १५ ॥
गां सवत्सां ततो दद्यात्स्वर्णरत्नविभूषिताम् ॥
ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात्कूष्माण्डं प्रदद्देत्सुधीः॥१६॥
एवं कृते वरारोहे पुत्रो भवति नान्यथा ॥१७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० रेवतीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११०॥

हे वरानने ! अब इसके पापको शमन करनेवाली शांतिको सुनो ॥ १३ ॥ घरके वित्तसे आठवां भाग धनको ब्राह्मणके अर्थ समर्पण करे । हे देवि ! योनिसे सुंदर शोभित हुए कुंडमें हवन करे ॥१४॥ हे वरारोहे ! चौकूंटे कुण्डमें विधिपूर्वक दशांश हवन करे, तिसके दशांश तर्पण, तद्दशांश मार्जन करे ॥ १५ ॥ पीछे बछेसे युक्त और सोना तथा रत्नोंसे विभूषित की हुई गौका दान करे पीछे ब्राह्मणोंको भोजन करावे बुद्धिमान् पुरुष विधिपूर्वक पेठेका दान करे ॥१६॥ ऐसे करनेसे पुत्र होता है । हे वरारोहे ! यह अन्यथा नहीं है ॥ १७ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य तृतीयचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११० ॥

अथैकादशाधिकशततमोऽध्यायः ।

॥ शिव उवाच ॥

अलर्कस्य पुरे देवि क्षत्रियो वसति प्रिये ॥
चन्द्रवर्मेति विख्यातः पत्नी देवि ततोऽभवत् ॥ १ ॥
क्षत्रधर्मरतो नित्यं धनाढ्यः शूरसंमतः ॥
कृष्णदास इति ख्यातो विप्रस्तस्य पुरोहितः ॥ २ ॥
विप्राय प्रददौ भूमिं गिरिजे विग्रहे सति ॥
ततो बहुदिने जाते दण्डस्तस्माच्च याचितः ॥ ३ ॥
ब्राह्मणोऽथावदद्देवि नाहं दण्ड्यः कदाचन ॥
ततो रोषपरीतात्मा क्षत्रियो ब्राह्मणं प्रति ॥ ४ ॥
दुर्वचश्चावदद्देवि ब्राह्मणं साधुसंमतम् ॥
मरणं ब्राह्मणस्यैव भूम्युद्देशेन वै शिवे ॥ ५ ॥

शिवजी कहते हैं-हे देवि ! हे प्रिये ! अलर्कपुरीमें एक क्षत्रिय वसता था वह चन्द्रवर्मा नामवाला था और तिसकी स्त्री देवीनामसे विख्यात होती भई ॥ १ ॥ वह नित्यप्रति क्षत्रियके धर्ममें तत्पर था धनाढ्य और शूर वीर तथा कृष्णदास नामसे प्रसिद्ध होता भया और एक ब्राह्मण तिसका पुरोहित था ॥ २ ॥ हे गिरिजे ! एक समय विग्रह (गदर) होनेमें तिस ब्राह्मणके अर्थ भूमिदान देता भया फिर बहुतसे दिन बीत चुके तब तिस ब्राह्मणसे उस क्षत्रियने दंड मांगा ॥ ३ ॥ हे देवि ! तब ब्राह्मण बोला कि, मैं दंड देने योग्य कभी नहीं हूं तिससे अनन्तर क्रोधसे भरा हुआ क्षत्रिय ब्राह्मणके प्रति ॥ ४ ॥ खोटा वचन बोलता भया। हे देवि ! साधुओंसे संमित ब्राह्मणको खोटा वचन कहा तब उस

ततो बहुगते वर्षे मरणं क्षत्रियस्य तु ॥
यमदूतैर्महाघोरैर्नरके नाम दारुणे ॥ ६ ॥
कुम्भीपाके सदा घोरे क्षिप्तवान्यमशासनात् ॥
युगानां त्रयसंख्यानां नरके वास एव च ॥ ७ ॥
नरकान्निःसृतो देवि प्रेतत्वं समजायत ॥
सूकरस्य पुनर्योनिं ततो भवति मानुषः ॥ ८ ॥
मध्यदेशे विशालाक्षि हिमविन्ध्याद्रिमध्यमे ॥
धनधान्यसमायुक्तो ब्राह्मणानां च सेवकः ॥ ९ ॥
इह जन्मनि देवेशि मरणं संततेर्ध्रुवम् ॥
काकवन्ध्या भवेन्नारी मृतवत्सा पुनः पुनः ॥ १० ॥
शरीरे व्याधिरुत्पन्नो ज्वरश्चैव मुहुर्मुहुः ॥
अस्य शान्तिं प्रवक्ष्यामि शृणु देवि वरानने ॥ ११ ॥

उद्देशसे तिस ब्राह्मणकी मृत्यु हो गई॥५॥ फिर बहुत वर्ष व्यतीत हो चुके तब क्षत्रियकी मृत्यु हो गई धर्मराजके महाघोर दूतोंने दारुण नरकमें ॥६॥कुंभीपाकमें धर्मराजकी आज्ञासे पटक दिया तीन युगपर्यंत नरकमें वास रहा ॥ ७ ॥ हे देवि ! नरकसे निकसके पीछे प्रेतकी योनि भई फिर शूकरकी योनि भई पीछे मनुष्य भया है ॥८॥हे विशालाक्षि ! मध्यदेशमें हिमाचल तथा विंध्याचलके मध्यदेशमें धनधान्यसे युक्त और ब्राह्मणोंका सेवक है ॥९॥ हे देवेशि ! इस जन्ममें इसकी संतान नष्ट होती है अथवा इसकी स्त्री काकवन्ध्या है वा मृतवत्सा संतान मरती है ॥ १० ॥ शरीरमें व्याधि है और वारंवार ज्वर आता है अब इसकी शांतिको कहेंगे ।

गृहवित्तषडंशं तु ब्राह्मणाय प्रकल्पयेत् ॥
गायत्रीमूलमन्त्रेण पञ्चलक्षजपं तथा ॥ १२ ॥
दशांशं कारयेद्देवि हवनं विधिपूर्वकम् ॥
तर्पणं मार्जनं तद्वद्गोदानं च विशेषतः ॥ १३ ॥
ब्राह्मणस्य ततो देवि प्रतिमां कारयेद् बुधः ॥
पलपञ्चसुवर्णस्य वस्त्ररत्नविभूषिताम् ॥ १४ ॥
ततो निर्माय प्रतिमां पूजयित्वा यथाविधि ॥
मन्त्रेणानेन देवेशि पाद्यं गन्धादिकं पृथक् ॥ १५ ॥
वासुदेव जगन्नाथ शरणागतवत्सल ॥
ब्रह्महत्या कृता पूर्वं तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि ॥ १६ ॥
वल्मीकमृत्तिकां गृह्य वेदीं वै कारयेत्ततः ॥
तन्मध्ये सर्वतोभद्रं रचितं दिव्यमण्डले ॥ १७ ॥
तन्मध्ये प्रतिमां स्थाप्य ततो पूजां तु कारयेत् ॥

हे देवि ! हे वरानने ! ! सुन ॥ ११ ॥ घरके छठे भाग धनको ब्राह्मणके अर्थ देवे ! और गायत्रीमूलमंत्रका पांच लक्ष जप करावे ॥१२॥ हे देवि ! विधिपूर्वक दशांश हवन करावे तर्पण तथा मार्जन करावे विशेषतासे गौका दान करे ॥ १३॥ हे देवि ! पीछे पांच पल सुवर्णकी ब्राह्मणकी मूर्ति बनवावे वस्त्र और रत्नोंसे विभूषित करे ॥ १४ ॥ हे देवेशि ! ऐसी मूर्तिको बना पीछे यथार्थविधिसे इस मंत्रसे पाद्य गन्ध आदि पृथक् २ विधानसे पूजे ॥ १५ ॥ हे वासुदेव ! हे जगन्नाथ ! हे शरणागतवत्सल ! ! ! मैंने पहले ब्रह्महत्या की थी इसलिये मेरा अपराध क्षमा करो ॥ १६ ॥ पीछे बमईकी मृत्तिकाको ग्रहण कर वेदी बना तहां दिव्यमंडलमें सर्वतोभद्र बनावे ॥ १७ ॥ तहां मूर्त्तिको स्थापित कर पूजा करे ।

ॐ वासुदेवाय नमः । ॐ जगन्नाथाय नमः ।
ॐ विष्णवे नमः । ॐ शार्ङ्गिणे नमः ॥
आचार्यं च ततो नत्वा शिवविष्णुस्वरूपिणम्॥१८॥
प्रभोजयेत्ततो विप्रान्दक्षिणां दापयेत्ततः ॥
ततो विसर्जनं कुर्याद्वाचकं प्रणिपत्य च ॥
एवं कृते वरारोहे शीघ्रं पुत्रः प्रजायते ॥ १९ ॥
काकवन्ध्या लभेत्पुत्रं सर्वव्याधिप्रणाशनम् ॥
मृतवत्सा च या नारी जीवत्पुत्रा च जायते ॥२०॥
यः पठेच्छृणुयाद्वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥
अतः परतरं नास्ति सत्यं सत्यं वरानने ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसं० पार्वतीहर० रेवतीनक्षत्रस्य चतुर्थचरण प्रायश्चित्तकथनं नामैकादशोत्तरशततमोऽध्यायः॥१११॥

इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे पितृकाव्योत्तरे सनत्कुमारमार्कण्डेयप्रश्नेनारदाम्बरीषप्रत्युत्तरे कर्मविपाकसंहितायां अश्विन्यादिनक्षत्रचरणगतप्रायश्चित्तं समाप्तम् ।

ॐ वासुदेवाय नमः १ ॐ जगन्नाथाय नमः २ ॐ विष्णवे नमः ३ ॐ शार्ङ्गिणे नमः ४ । पीछे शिव विष्णुरूपी आचार्यको नमस्कार कर ॥ १८ ॥ ब्राह्मणोंको भोजन करवा शक्तिके अनुसार दक्षिणा देवे फिर वाचक उपदेश देनेवाले गुरुको प्रणाम करके विसर्जन करे । हे वरारोहे ! ऐसे करनेसे शीघ्रही पुत्र उत्पन्न होता है ॥ १९ ॥ काकवंध्या स्त्री पुत्रको प्राप्त हो और संपूर्ण व्याधि नष्ट होवें और जिस स्त्रीके संतान नहीं जीवती हो उसके पुत्र जीवें ॥ २० ॥ जो पढे अथवा सुने सो सब पापोंसे छूट जावे इससे परे

अधिक कुछ पुण्य नहीं है। हे वरानने ! यह सत्य है ॥ २१ ॥

इति श्रीकर्मविपाकसंहिताभाषाटीकायां पार्वतीहरसंवादे रेवतीनक्षत्रस्य चतुर्थचरणप्रायश्चित्तकथनं नाम एकादशोत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १११ ॥

इति श्रीबेरीनिवासि-गौडवंशोद्भवद्विजशालग्रामात्मज बुधवसतिरामानुवादितभाषाटीकायां ब्रह्माण्डपुराणे पितृकाव्योत्तरे सनत्कुमारमार्कण्डेयप्रश्ने नारदाम्बरीषप्रत्युत्तरे कर्मविपाकसंहितायां अश्विन्यादिचरणगतप्रायश्चित्तं समाप्तम् ।

नन्दाऽब्ध्यङ्कमहीवर्षे माधवस्य सिते दले ।
विष्णुतिथ्यां च टीकेयं सूर्याह्नि पूर्णतामगात् ॥
श्रीरमारमणचरणकृपया शं भवतुतरां वाचकानाम् ।
समाप्तेयं भाषाटीकायुता कर्मविपाकसंहिता ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
गङ्गाविष्णुश्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण-मुंबई.

श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वराय नमः ।

अथ कर्मविपाकसंहितास्थविषयानुक्रमणिका.

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता।

जाहिरात.

भक्तमालहरिभक्तिप्रकाशिका.

वारि मथे वरु होय घृत, सिकतातें वरु तेल ॥
बिनु हरिभजन न भव तरिय, यह सिद्धान्त अपेल ॥ १ ॥

यद्यपि शास्त्रोंमें ईश्वरप्राप्तिके बडे २ साधन लिखे हैं परन्तु जो विचार कर देखा जाय तो भक्तिकी समान कोईभी सहज साधन नहीं है, जो वस्तु ज्ञानद्वारा बडे परिश्रमसे प्राप्त होती है, वह भक्तिसे सहजही मिलजाती है, ईश्वरमें परम अनुराग होनेका नाम भक्ति है, उसके साधन भक्तिशास्त्रशांडिल्यसूत्र, नारदभक्तिसूत्रमें विस्तारपूर्वक लिखे हैं, तथापि इस समय भक्ति प्राप्त होनेका सुगम उपाय हरिभक्तोंकी कथाका श्रवण मननही है, यह वह वस्तु है कैसाभी कोई पुरुष हो एकवार हरिभक्तोंका चरित्र श्रवण करतेही द्रवीभूत होता है, हरिभक्तोंके चरित्रका समावेश जिस प्रकार इस वार्तिक ग्रन्थमें क्रमसे निवद्ध किया गया है, वैसा अन्यत्र कहीं नहीं है, यह ग्रन्थ नवरसोंके लक्षणोंसे पूर्ण चौवीस निष्ठाओंमें विभक्त है, चौवीस अवतारोंका वर्णन, प्रत्येक निष्ठाके प्रेमी भक्तोंके चरित्र, नवरसोंका उद्घाटन, प्रेमका प्रवाह इस ग्रन्थमें इस प्रकार लिखा गया है कि पढते २ चित्त हरिके ध्यानमें मग्न हो जाता है. चारों युगोंके पुरातन भक्तोंकी कथा पुराणोंसे और नूतन भक्तोंकी कथा उनकी जीवनीसे संग्रह कर इस ग्रन्थमें लिखी गई हैं. प्रत्येक निष्ठाकी भूमिका, उसमें ध्यान, प्रत्येक सम्प्रदायप्रवर्तक आचार्योंके चरित्र इस ग्रन्थमें बहुत सरलतासे लिखे गये हैं, यदि आपको विना प्रयास हरिभक्तिका स्वाद लेनाहै, यदि साहित्यका मर्म जानना है यदि अन्तःकरणकी मुख्य चौवीस वृत्तियोंके भेद पानेकी अभिलाषा है, यदि संसारसे विरक्त सहस्रों महानुभावोंके चरित्र जाननेकी अभिलाषा है, यदि सम्प्रदायका मर्म जानना चाहते हो, यदि श्यामसुन्दरकी बांकी झांकीकी झलक अन्तःकरणमें

झलकानेका विचार है, यदि विश्वासपूर्वक इस असार संसारसे कुछ सार लेना है तौ इस अमूल्य ग्रन्थके लेनेमें विलम्ब न कीजिये. उक्त पण्डितजीने इसकी भाषाको अति मनोहर स्थान २ में उपयुक्त दोहे कवित्त पद लगाय इसको सब भांतिसे अलंकृत कर दिया है. पाठक महाशयोंसे प्रार्थना है कि एकवार इस ग्रन्थको देखकर हरिभक्तिरसामृत पान करें. यह ग्रन्थ नया बहुत बढिया कागजपर सुवाच्य बडे टाइपमें छापा तैयार है. ग्लेजकी कीमत ४ रु०, रफ की० ३ रुपिया.

चर्याचन्द्रोदय.

प्रियवर माहाशय ! धर्म अर्थ काम मोक्षोंका उत्कृष्ट साधन एक शरीरके विना दुसरा कोई नहीं है उस शरीरका स्वास्थ्य रखनेके लिये वैद्यशास्त्रोदित उपायही मुख्य साधन है, वैद्यशास्त्रमें आजतक महार विद्वानोंने बडे२ ग्रंथ बनाये हैं, परन्तु उनमें दिनरात्रिके आचरणका विशेष रूपसे वर्णन न होनेसे शरीरस्वास्थ्य रहनेमें उनका यथायोग्य उपयोग नहीं होता इस लिये पाठक ज्ञातीय माथुर श्रीकृष्ण लालात्मज दत्तरामजीने चर्याचन्द्रोदय नामक ग्रन्थ संकलित किया और संस्कृतानभिज्ञ लोगोंके उपकारार्थ भाषाटीकासे विभूषित किया है, इस ग्रंथसे पूर्वोक्त विषयसे अत्यन्तही उपकार हो सकता है। क्योंकि इसमें १ ऋतुचर्या २ दिनचर्या ३ पाकविधान ४ अमानुषीय भक्षण ५ कुदृष्टिवर्जनादि अध्याय ६ न्द्रियो पक्रमणाध्याय इतने प्रकरण वर्णित हैं। इन सबमें अवश्य जानने योग्यशौ चादि विचार, रसोई करनेका स्थान, सूपकार लक्षण, नानाविध पाक, दूधोंके लक्षण, अन्नपरीक्षा, स्त्रीसेवनविधि रजस्वलागमननिषेध रात्रि जागरणमें दोष इत्यादि बहुतसे विषय सप्रमाण वर्णित है इस लिये महाशय इस निरूपम ग्रंथका संग्रहकर उक्त हेतुको सफल करेंगे। की० १॥ रु०